जो जीव हुक्म के मुवाफ़िक़ कार्रवाई नहीं करेगा तो सतगुरु और कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल उससे राज़ी नहीं होवेंगे, और उनकी अप्रसन्नता यानी नाराज़गी में जीव का निहायत दरजे का नुक़सान है, कि उसका रास्ता अंतर में अपने निज घर की तरफ़ चलने का बन्द हो जावेगा, और फिर काल और कर्म और माया उस जीव को अपने घेर में रख कर, दुख-सुख देते रहेंगे, और उसका सच्चा और पूरा उद्धार न होने देवेंगे।

१२—जब इस तरह से थोड़ी-बहुत प्रीत और प्रतीत जीव को, कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल और उन के सतसंग और गुरु में आई, और दोनों या एक क़िस्म का ख़ौफ़ भी उसके दिल में सच्चा पैदा हुआ, तब उसका रास्ता आसानी से अंतर में तै होता जावेगा। यानी मन और सुरत, अपने प्यारे गुरू और सत्त पुरुष राधास्वामी दयाल के चरनों में पहुँचने और दर्शन का बिलास और आनन्द हासिल करने के वास्ते, सहज में, पहिले पिंड में सिमट कर, फिर ऊँचे देश यानी ब्रह्माण्ड और उसके पार संत देश की तरफ़ शब्द की डोरी पकड़ के, और स्वरूप के ध्यान का आसरा लेकर, चढ़ना शुरू करेंगे, और प्रीत-भाव और ख़ौफ़ के सबब से, उनको ज़रा भी इस काम के करने में सुस्ती या आलस या तकलीफ़ नहीं सतावेगी, बल्कि अंतर में शब्द और स्वरूप का थोड़ा-बहुत रस और

आनन्द लेते हुए उमंग और शौक़ के साथ ऊपर की तरफ़ क़दम बढ़ावेंगे, और सतगुरु की मदद और राधास्वामी दयाल की मेहर से एक दिन धुर घर में जो कि अपने प्रीतम कुल्ल मालिक का महल है, पहुँच कर, परम आनन्द को प्राप्त होवेंगे।

१३—सब जीव निहायत दरजे के कमज़ोर हैं, और जिस जगह, पिण्ड में, सुरत बैठ कर कार्रवाई देह और दुनिया की कर रही है, उस जगह, काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार और मन और दसों इन्द्रियों का बहुत भारी ज़ोर है। किसी की ताक़त नहीं है कि इनसे बच कर निज घर की तरफ़ को, अपने बल से चल कर रास्ता तै करे। लेकिन राधास्वामी दयाल की मेहर और सतगुरु अथवा साध के संग से आहिस्ता २ जीव के अधिकार यानी शौक़ के मुवाफ़िक़ काम बन सकता है। और जो शौक़ कम भी है, तो सतगुरु अपनी दया और मदद से उसको बढ़ा सकते हैं। और अभ्यासी के दिल में थोड़ा-बहुत ख़ौफ़ भी पैदा कर सकते हैं कि जिससे उसका शौक़ बढ़ता रहे और ढीला और सुस्त न होवे।

१४—सब जीव अजान हैं यानी अपने निज घर और अपने सच्चे माता और पिता कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के भेद से ना-वाक़िफ़ हैं और न जुगत चलने की जानते हैं। सब कर्म और भर्म में अटके हुए हैं। और

बाहरमुख पूजाओं में अपना वक़्त और तन, मन, धन मुफ़्त ज़ाया कर रहे हैं, या विद्या पढ़ कर, और बुद्धि और चतुराई बढ़ाकर, अपने आपको ब्रह्म मान कर निर्चिंत हो जाते हैं, या कुल्ल मालिक की मौजूदगी और सुरत के चैतन्य और अमर होने से इनकार करके नास्तिक बन जाते हैं। इनको जब तक सतगुरु का संग न होगा, और यह उनका बचन प्रीत-भाव से सुन कर, असल हाल रचना और अपनी मौजूदा हालत से वाक़िफ़ न होंगे, और वास्ते बचाव दुख-सुख और जनम मरन के, संतों की जुगत चलने का, सुरत-शब्द मार्ग के मुवाफ़िक़, दरयाफ़्त करके अपने अन्तर में सतगुरु का बल और दया लेकर थोड़ा-बहुत रास्ता काटना शुरू न करेंगे, तब तक इनको सच्चे मालिक की प्रतीत और प्रीत नहीं आवेगी और न अन्तर में कुछ रस और आनन्द प्राप्त होगा।

१५—इस वास्ते ज़रूर है कि पहिले भेदी और अभ्यासी गुरू की तलाश करे, और जब वे मिल जावें, तो उनसे भेद रास्ते का लेकर अभ्यास शुरू करे, और उनका और उनकी बानी का संग करके अपनी समझ-बूझ बढ़ावे, और संसारी मत और समझ और बर्ताव को बदलता जावे, और उनके चरनों में सच्ची प्रीत और प्रतीत जिस क़दर हो सके, करे। तब उनकी दया और मदद से इसका रास्ता तै होवेगा, और एक दिन अपने निज घर में पहुँच कर, जनम-मरन से रहित हो जावेगा, और नहीं तो

बारम्बार संसार में ऊँचे-नीचे देश और ऊँची-नीची जोनों में जनम लेकर, माया के भोगों में भरमता रहेगा, और अनेक तरह के कष्ट और क्लेश देह के संग भोगता रहेगा, और कभी इसका छुटकारा इस चक्कर से न होवेगा।

१६—जो प्रीत कि सिवाय सच्चे मालिक के दर्शनों की प्राप्ति के, और किसी मतलब या चाह लेकर, लगाई जावेगी, वह परमार्थी हिसाब में स्वार्थ यानी कपट की भक्ति कहलाती है। ऐसी प्रीत से जीव का कारज किसी तरह से नहीं बन सकता है। चाहे दुनिया का मतलब शायद किसी क़दर पूरा हो जावे, पर गुरू और राधास्वामी दयाल के चरनों में सच्चा प्रेम, जो सफ़ाई करके, सुरत और मन को, उनके निज घर में पहुँचावे, कभी हासिल नहीं होगा।

१६—इस वास्ते मुनासिब है कि चाहे थोड़ी प्रीत होवे, पर सच्ची प्रीत, वास्ते प्राप्ति दर्शन मालिक के, अपने हिरदे में धारन करे, और सतगुरु और सतसंग और अन्तर अभ्यास की मदद से उसको आहिस्ता २ बढ़ाता जावे, तो एक दिन निज घर में पहुँच कर बासा पावेगा, यानी राधास्वामी दयाल के चरनों में पहुँच कर परम आनन्द को प्राप्त होगा।

१८—इसी प्रीत के आसरे मन और सुरत घर की तरफ़ आहिस्ता २ चलना शुरू करेंगे, और जिस क़दर रस

मिलता जावेगा, उसी क़दर चाल उनकी बढ़ती जावेगी। इस वास्ते हर एक मर्द और औरत को मुनासिब और लाज़िम है कि जैसे बने, वैसे थोड़ी या बहुत प्रीत राधास्वामी दयाल और गुरू के चरनों में पैदा करके, परमार्थ की कार्रवाई जारी कर दें, और जनम-मरन और देह धर के दुख-सुख भोगने का ख़ौफ़ दिल में लाकर, इस काम में सुस्ती और ग़फ़लत न करें। नहीं तो अन्त को बहुत पछताना पड़ेगा और फिर वह अफ़सोस कुछ फ़ायदा नहीं देगा, और अमोल नर देह, जो बड़ी मुश्किल यानी चौरासी का चक्कर खाकर हाथ आई है, पशुओं के मुवाफ़िक़ खान-पान यानी इन्द्रियों के भोग-बिलास और उनके हासिल करने की मेहनत और मशक़्क़त में मुफ़्त बरबाद जावेगी।

बचन १७

हर शख़्स को अपने जीव-चैतन्य के भंडार का खोज और पता लगा कर, वहाँ पहुँचने का जतन करना चाहिये कि जिससे परम आनन्द को प्राप्त होवे, और जनम-मरन और देह के दुख-सुख से बचाव हो जावे

१—इस रचना में दो पदार्थ हैं—एक चैतन्य और दूसरा जड़। चैतन्य वह है जो चेष्टा करता है और जिस

देह में वह विराजमान होता है, उस देह की सम्हाल और उसके औज़ारों (यानी इन्द्रिय वग़ैरा) के वसीले से इस लोक में कार्रवाई करता है, बल्कि और देहियों की भी सम्हाल करता है।

२—और जड़ पदार्थ वह है जो अपने आपसे किसी क़िस्म की चेष्टा और हरकत नहीं कर सकता है, और बिना मदद और सहारे चैतन्य के, उससे कोई कार्रवाई नहीं हो सकती है।

३—अब इस चैतन्य की कैफ़ियत और ताक़त समझना चाहिए कि जिस जगह या जिस वीर्य्य से कि इसकी प्रथम धार प्रकट होती है, वहां धार उस वीर्य्य के स्वरूप और कुल्ल देह की करता है। और जब से कि वह धार प्रकट हुई, उसी वक़्त से जिस क़दर शक्तियाँ यानी क़ुव्वतें और तत्त्व और गुन इस रचना में कार्रवाई कर रहे हैं, वे सब इस धार के बढ़ाव और देह के बनाव में (आपस में रल-मिल कर) कार्रवाई जारी करती हैं। और वे शक्तियाँ और तत्व वग़ैरा यह है—(१) खैंच शक्ति, (२) हटाव शक्ति, (३) बनाव शक्ति, (४) मिलाव शक्ति, (५) मिक़नातीसी यानी चुम्बक शक्ति, (६) संहार शक्ति, (७) बिजली की शक्ति, (८) रोशनी की शक्ति, और तीन गुण, सतोगुण, रजोगुण और तमोगुण और पाँच तत्व-आकाश, पवन, अग्नि, जल, और पृथ्वी।

४—देह जड़ है, और पाँच तत्व और तीन गुन की

मिलौनी से बनी है, और सुरत-चैतन्य की शक्ति से चैतन्य और कार्रवाई करती नज़र आती है।

५—सुरत-चैतन्य की ताक़त किस क़दर भारी है कि जब और जहाँ वह ज़हूर करे, वहीं सब शक्तियाँ और तत्व और गुन वग़ैरा हाज़िर होकर (बा-वजूद मुख़ालफ़त के) आपस में रल-मिल कर कार्रवाई करती हैं, और जब सुरत किसी देह को छोड़ती है, उसी वक़्त से, रूप और रंग और ताक़त उस देह की जाती रहती है, और निहायत भयानक यानी ख़ौफ़नाक और डरावना रूप उस देह का हो जाता है, और कुल कार्रवाई उस देह और उसके औज़ारों की, बंद होकर वह देह जल्द गल कर मिट्टी के मुवाफ़िक़ हो जाती है।

६—सब जगह (मैदान यानी आकाश में और लोकों में) तमाम रचना, सुरत के बल से हुई है, और क़ायम है, और आइन्दा को जारी रहेगी यानी एक-एक सुरत, जो महा चैतन्य की अंस है, हर एक जिस्म यानी लोक (सूरज, चांद, तारागन) में बैठ कर, उस देह का बनाव और सम्हाल कर रही है। और जब वह सुरत उस देह को छोड़ती है, तब उसकी फ़ौरन प्रलय हो जाती है, यानी उसका अभाव हो जाता है।

७—जिस क़दर सूरज और चांद और तारागन नज़र आते हैं, यह सब एक-एक देह हैं, और सुरत अंस इन में

बैठ कर उनकी रचना की सम्हाल और कार्रवाई करती रहती है, और जो २ तारे हर एक सूरज और चांद के मुताल्लिक़ हैं, उनकी रचना की भी सम्हाल वही सूरज और चाँद करते हैं।

८—इससे साबित हुआ कि जिस क़दर रचना हुई है, सब सुरत की धार से प्रकट हुई है, और सुरत-चैतन्य ही के आसरे क़ायम है, और उसी की ताक़त से सब काम दुनिया के जारी हैं।

९—जब इस सुरत की, जो एक किरन के मुवाफ़िक़ है, इस क़दर ताक़त और कार्रवाई है, फिर उस भंडार या कुल्ल सूरज की, जहाँ से यह किरन आई है, ताक़त और समर्थता का क्या अंदाज़ हो सकता है? वह भंडार कुल्ल रचना का कर्त्ता और कुल्ल का पालन-कर्त्ता और कुल्ल की सम्हाल करने वाला और महा ताक़त वाला यानी सर्व-समर्थ है। वहीं से आदि-धार या किरन प्रकट हुई और नीचे उतर कर, और मंडल बाँध कर, रचना करती चली आई, और पिंड में आँखों के मुक़ाम पर बैठ कर, देह और दुनिया की कार्रवाई कर रही है और दुख-सुख और चिंता और ख़ौफ़ वग़ैरा इसी जगह जाग्रत अवस्था में व्यापते हैं।

१०—जब आँखें मिच जाती हैं, या पुतली ज़रा खिंच जाती है, तब आदमी बेहोश, और देह उसकी बेकार हो

जाती है और जब ज़्यादा खिंचाव हो जाता है, तब सुरत देह को छोड़ जाती है।

११—यह देश सुरत का नहीं है। यह सुरत, अंस या किरन या धार उस सर्व-समर्थ भंडार की है, जिसको संतों ने कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल कहा है। और जब तक यह उलट कर उसी धार को पकड़ के, जिसके वसीले उतरी है, अपने भंडार में न जावेगी, पूर्ण सुख और आनन्द इसको नहीं मिलेगा और न जनम-मरन से छुटकारा होगा, क्योंकि जनम-मरन देह यानी खोल का होता है, और खोल माया के मसाले यानी तत्वों और गुनों वग़ैरा का बना है। और जब तक सुरत माया के घेर में रहेगी, ज़रूर उस पर खोल चढ़े रहेंगे। और जिस मंडल में सुरत प्रकट होगी, उसी मंडल के मसाले के बने हुए खोल में उसका बर्ताव होगा, और जैसी वहाँ की रचना है, उसके मुवाफ़िक़ दुख-सुख भोगना पड़ेगा। और माया, सत्तलोक यानी दयाल देश के नीचे से प्रकट हुई है, और उसमें ब-हिसाब शुद्धता और मलीनता के बहुत से दरजे हैं। सो जब तक कि इन सब दरजों को तै करके, माया के घेर के बाहर, दयाल देश यानी अपने निज भंडार में सुरत न जावेगी, तब तक निर्मल और सुखी न होवेगी।

१२—इस वास्ते हर एक जीव को चाहे मर्द होवे या औरत, लाज़िम और मुनासिब है कि जैसे बने तैसे संतों

की जुगत के मुवाफ़िक़, रास्ता घर जाने का तै करना शुरू करे, तब देह के बंधन और कष्ट और कलेश से सच्चा छुटकारा होगा। और इसी को सच्ची मुक्ति और पूरा उद्धार कहते हैं।

१३—और जो सुरतें यानी जीव मन और इंद्रियों के भोग-बिलास की चाह उठा कर, उन्हीं के हासिल करने के जतन में उमर भर लगे रहेंगे, तो उनकी चाल दिन २ माया के मंडल में नीचे की तरफ़ जारी रहेगी। और इस सबब से जल्दी २ जनम-मरन और ज़्यादा से ज़्यादा तकलीफ़ उनको भोगनी पड़ेगी, और जड़ पदार्थों के साथ (क्योंकि सब भोग दुनिया के जड़ हैं) दिन-दिन उन सुरतों का मेल बढ़ता जावेगा, और अपने निज भंडार से दूरी होती जावेगी।

१४—इस दुनिया में सब जीव मन और इन्द्रियों के भोग से सुख हासिल करने की चाह में फँसे हुए हैं, और रात-दिन इसी चाह को पूरा करने के लिये मेहनत कर रहे हैं। और हाल यह है कि यह सुख तुच्छ और नाशमान हैं, और बारम्बार उनकी प्राप्ति के लिये मेहनत करनी पड़ती है, और फिर एक बार देह छोड़ने के वक़्त इन सब को छोड़ना पड़ेगा।

१५—जब ऐसे ओछे और नाशमान सुखों के वास्ते जीव उम्र भर पचते हैं, तो परम आनन्द और अमरसुख के

हासिल करने के लिये उनको किस क़दर तवज्जह और मेहनत करना मुनासिब और लाज़िम है, ख़ास कर जब कि इस काम के बनाने के वास्ते सिर्फ़ एक बार किसी क़दर मेहनत, बहुत आराम और ख़ुशी के साथ, करनी पड़ेगी और फिर वह सुख और आनंद हमेशा क़ायम रहेगा ?

१६—अब ग़ौर करना चाहिये कि जब इस दुनिया में दो बड़े पदार्थ, एक चैतन्य और दूसरा जड़ यानी माया हैं और ऊँचे से ऊँचे देश में चैतन्य का भंडार है, और नीचे के देश में जड़ यानी माया का भंडार है, तो चैतन्य को, जो जीव का निज आपा है, उसके भंडार में पहुंचाना, वास्ते प्राप्ति परम आनंद के, निहायत ज़रूर मालूम होता है, और जड़-पदार्थ यानी माया की तरफ़ से, जिस क़दर जल्दी मुमकिन होवे, हटना, वास्ते बचने के दुक्खों से, उसी क़दर ज़रूर और मुनासिब है।

१७—इस वास्ते, हर एक आदमी पर यह काम करना, अपने आपे को सुख देने के निमित्त, फ़र्ज़ है, यानी चैतन्य या सुरत की धार को पकड़ कर, एक सामान्य चैतन्य से विशेष, और फिर उससे ज़्यादा विशेष, और इसी तरह से दरजे-बदरजे चढ़ कर, महा विशेष चैतन्य, यानी निज भंडार में कि जिसके ऊपर और विशेष नहीं है, और जो आप, अपार और अनंत है, पहुँचना चाहिये।

१८—कुल रचना में, ब-सबब मिलौनी माया के, चैतन्य के दरजे हैं यानी जहाँ माया ज़्यादा है, वहां का चैतन्य किसी क़दर उसके ग़िलाफ़ से ढका हुआ है, यानी उसकी ताक़त और प्रकाश वहाँ कम है, और जिस दरजे में माया कम यानी सूक्ष्म है, वहाँ चैतन्य का प्रकाश और ताक़त का ज़हूर ज़्यादा है। जैसे इस लोक का चैतन्य, सूरज चैतन्य की धारों का आधीन है यानी जब तक कि सूरज की रोशनी और गरमी इस लोक में न आवे, तब तक यहाँ कुछ रचना नहीं हो सकती, और न ठहर सकती है, इसी तरह यह सूरज मय अपने तारागन के अपने से बड़े सूरज का आधीन है, और उसके ऊपर इसी तरह कई सूरज मंडल हैं। आख़िरी महा सूरज या महा मंडल और कुल्ल का भंडार और कर्त्ता और रक्षक, सत्त पुरुष राधास्वामी दयाल हैं। और जो कि सुरत उसी महा सूरज की अंश है, इस वास्ते उसको अपने कुल्ल माता-पिता-निज सूरज या भंडार में पहुँचना चाहिये, नहीं तो माया के घेर में रहेगी।

१९—जो धार कि निज सूरज से निकल कर नीचे के देश में उतर कर ठहरी है, वही सुरत और चैतन्य और जान और रूह और नूर और शब्द की धार है, और जिस जगह पिंड में उतर कर ठहरी है, वहाँ उसका नाम सुरत है।

२०—इस सुरत को शब्द की धार के वसीले से चढ़ा कर, उसके निज घर में पहुँचाने को, सुरत-शब्द योग कहते हैं। और वही भंडार यानी आदि-शब्द कुल्ल का मालिक सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल है—ऐसी समझ धारन करके अभ्यास करना राधास्वामी मत का उपदेश है। और यही रचना भर में सच्चा और क़ुदरती मत और सहज अभ्यास है। और बाक़ी जितने मत कि दुनिया में जारी हैं, और जिन में यह भेद और यह अभ्यास नहीं है, वे मन और बुद्धि के रचे हुए हैं, चाहे वे मन और बुद्धि ब्रह्मांडी हैं या पिंडी यानी जिस्मानी। और उनसे जीवों का कारज दुरुस्त होना, जैसा कि चाहिये, मुमकिन नहीं है, और न उन में पूरी शान्ति हासिल हो सकती है।

२१—जिन्होंने कि प्राणों के रोकने और चढ़ाने का अभ्यास पिछले वक़्त में जारी किया, वह इस कदर कठिन है और उसके संजम ऐसे मुश्किल हैं कि उसका किसी से दुरुस्ती से साथ बनना, ख़ास कर इस जमाने में, ना-मुमकिन मालूम होता है। इस वास्ते वह अभ्यास ख़ारिज समझना चाहिये। और मुद्रा वग़ैरा के अभ्यास से भी माया के पार जाना मुमकिन नहीं है। इस वास्ते सुरत-शब्द का अभ्यास, जो कि संतों ने दया करके इस ज़माने में जारी फ़रमाया है, कुल्ल जीवों के वास्ते, चाहे गृहस्थ होवें या विरक्त, और पुरुष होवें या स्त्री, सब के वास्ते मुफ़ीद है।

और इसी के वसीले से सुरत, धुर पद में, माया के पार पहुँच सकती है। और मुद्रा और प्राणायाम का अभ्यास सिर्फ़ विरक्तों ही के वास्ते था, और अब उन से भी नहीं बन सकता। और वह अभ्यास माया के घेर के अंदर ख़तम हो जाता है, इस सबब से उसमें जीव का पूरा उद्धार भी मुमकिन नहीं है।

अर्थ शब्द नम्बर २
पोथी सार बचन, छन्द बन्द, बचन ४१

सुन्नी सुरत शब्द बिन भटकी, अटकी मन सँग दुख पाई ॥ १ ॥

अर्थ

जो सुरत कि सुन्न यानी चैतन्य मंडल की बासी थी, शब्द की धार को छोड़ कर इस संसार में भटक गई और मन का संग करके दुख पाती है।

भरमत फिरे चक्र की नाईं, उलट गई तन में छाई ॥ २ ॥

और चक्र यानी चकई के मुवाफ़िक़, चंचल हो कर, भरम रही है और उल्टी हो कर देह में फैल गई।

विष खावत जग में झख मारत, समझ सोच धुर नहिं लाई ॥ ३ ॥

अर्थ

और भोगों में, जो ज़हर से भरे हुए हैं, बर्त कर, जगत में टक्करें खाती है, और अपने धुर मुक़ाम की समझ नहीं लाती है।

सोवत रही मोह अँधियारी, जागन चौंप नहीं पाई ॥ ४ ॥

अर्थ

और मोह के अंधकार यानी रात में बेहोश सो रही है और जागने का इरादा नहीं करती।

इन्द्री के बस पड़ी बिकल होय, काल कला घट में छाई ॥ ५ ॥

अर्थ

और इन्द्रियों के बस होकर, हर वक़्त, चंचल और बेकल हो रही है, और इस सबब से काल की कला यानी ज़ोर घट में व्याप रहा है।

भोगन में अति कर लिपटानी, रोग सोग दिन दिन खाई ॥ ६ ॥

अर्थ

और भोगों में लिपट कर दिन-दिन रोग और सोग सहती है।

बंधन बँधी जगत में गाढ़ी, बाढ़ी ममता रस पाई ॥ ७ ॥

इस तरह जगत में बंधन इसके, खूब मज़बूत हो गये, और थोड़ा-थोड़ा रस पाकर, हर एक चीज़ में पकड़ यानी मोह बढ़ गया।

जग व्यवहार लगा अति प्यारा, धारा उलटी यहाँ आई ॥ ८ ॥

अर्थ

और जगत में बर्ताव प्यारा लग कर, जो धार कि सुरत की ऊपर को चढ़नी चाहिये थी, वह उलटी देह और संसार में बहने और बिखरने लगी।

बिना मेहर सतगुरु पूरे के, कस उलटे कस घर जाई ॥ ९ ॥

अर्थ

जब ऐसा हाल हो गया, तो अब बिना मेहर पूरे सतगुरु के, मुख इसका ऊपर यानी निज घर की तरफ़ कैसे मोड़ा जावे ?

सुखमन द्वार गगन का नाका, कठिन हुआ नहिं सुध पाई ॥ १० ॥

अर्थ

और इसी सबब से आकाश का द्वारा जो कि पहिला सुखमन स्थान है, खुलना कठिन हो गया, बल्कि उसकी सुधि भी भूल गई।

श्याम धाम से हुई न न्यारी, सेत पदम कस कस पाई ॥ ११ ॥

अर्थ

और श्याम स्थान यानी काल के घेर से जुदा न हो सकी, फिर सेत धाम जो उसका निज स्थान है, कैसे पावे ?

धुन की छाँट होत नहिं भाई, कैसे सुरत धुन पाई ॥१२॥

अर्थ

और इसी सबब से धुन की छाँट भी नहीं हुई, फिर निज धुन को कैसे प्राप्त होवे ?

घट में बैठ निरख दृग द्वारा, यहाँ से राह अधर जाई ॥१३॥

अर्थ

अब चाहिये कि अपने घट में निश्चल होकर और नेत्रों के द्वारे को झाँक कर अंदर को चले। यही सड़क ऊँचे और निज देश की है।

घाटा तोड़ काल मति मोड़ो, करम काट ऊँचे जाई ॥१४॥

अर्थ

पहिली घाटी को, कि जिसकी हद्द त्रिकुटी तक है, तोड़ कर, और काल का मुख मोड़ कर, और कर्मों को काटते हुए ऊँचे को चलना चाहिये।

राधास्वामी कहत सुनाई, समझ समझ पग धर भाई ॥१५॥

अर्थ

राधास्वामी दयाल फ़रमाते हैं कि इस रास्ते में निरख-निरख और परख-परख कर क़दम रखना चाहिये।

बचन १८

मालिक का संसार में नर रूप धर कर औतार लेना जीवों के सच्चे उद्धार और कल्यान के वास्ते निहायत दरजे की दया और मेहर का निशान है

१—मालिक को अपने जीवों की तरक़्क़ी समझ-बूझ की और प्राप्ति विशेष सुख की, हमेशा मंज़ूर-ए-नज़र है। इस वास्ते जब, और जिस क़िस्म और दरजे के जीव संसार में पैदा होते हैं, उनके समझाने-बुझाने और तरक़्क़ी देने के वास्ते, कोई न कोई कला, किसी ऊँचे दरजे से, संसार में पैदा करके, कार्रवाई परमार्थ और व्यवहार की, जारी कराई जाती है। यानी दुनियावी मुआमलों में इल्म और हुनर और इख़लाक़ यानी धर्म की नई २ रीत से तरक़्क़ी दी जाती है, और इसी तरह जब और जिस लियाक़त के जीव

रचना में आते हैं, उनकी परमार्थी कार्रवाई और ज्ञान और भक्ति की तरक़्क़ी दरजे-बदरजे की जाती है।

२—और जब प्रेमी और भक्तिवान जीव ऊँचे दरजे के, पैदा होते हैं और पुरानी कार्रवाई जीवों की, मनमुखता के सबब से, ढीली और उलट-पलट हो जाती है और जीवों के उद्धार का रास्ता भूल और भरम की ज़्यादती और भोगों की तरफ़ कसरत से झुकाव होने के सबब से, किसी क़दर बंद हो जाता है, तब कुल्ल मालिक, अति दया करके, आप इस संसार में संत सतगुरू रूप धारन करके प्रकट होते हैं, और सच्चा और सहज रास्ता पूरे उद्धार का, जिससे कुल्ल जीव फ़ायदा उठा सकें, उपदेश करते हैं।

३—जो कोई ऐसा कहे कि क्या कुल्ल मालिक जो कि सर्व-समर्थ है, बग़ैर औतार रूप धरने की तकलीफ़ गवारा करने के, हिदायत नहीं कर सकता, उसका जवाब यह है कि उस मालिक में, सब ताक़त मौजूद है, और बिना नर रूप धारन करने के, कई तरह से, हर एक के अंदर में उपदेश कर सकता है, लेकिन जीवों को ऐसे उपदेश से, शुरू में यानी जब तक कि उनको किसी ऊंचे दरजे की समझ-बूझ हासिल न होवे, और प्रीत और प्रतीत और शौक़ उनके दिल में गहरा पैदा न होवे, कुछ फ़ायदा नहीं हो सकता है, और न भूल और भर्म, क़तई दूर हो सकते हैं,

और न मन और इंद्रियों के भोगों की तरफ़ से, सच्चा और सहज बैराग हासिल हो सकता है, और न ऐसे उपदेश का, जब तक कि उपदेशक नज़र न आवे, और उससे सवालात करके उस उपदेश का निर्णय न किया जावे, यानी जब तक भर्म और संशय दूर न होवें, पूरा २ यक़ीन हो सकता है।

४—जीवों की हालत ऐसी है कि अपनी-अपनी अक़्ल और समझ के मुवाफ़िक़, हर एक नई बात को, खोज और निर्णय करके, समझना चाहता है, और जो-जो भरम और संशय मन में धरे हुए हैं, उनका दूर होना चाहता है, और जब तक यह बात न होवे, उससे, कार्रवाई किसी किस्म की, दुरुस्ती से बन नहीं सकती। और ख़ास कर अंतर की कार्रवाई में तो, ज़ाहिरी और अंतरी मदद दोनों की, निहायत ज़रूरत है, और जब उपदेशक नज़र न आवे, तो अनेक तरह के भरम और ख़ौफ़ दिल में पैदा होकर, कार्रवाई में विघ्न डाल कर, उसको चलने न देंगे।

५—तजरुबा और इम्तिहान से मालूम हुआ है कि बा-वजूद हासिल करने भेद के, पूरे गुरु से, और मालूम होने बहुत से हालात और अंतर की कार्रवाई के, फिर भी अभ्यासी जीव, अंतर के बचन और नई कैफ़ियत जब २ उनको सुनाई और नज़राई देवे, ज्यों का त्यों नहीं समझ

सकते, और अक्सर, बेजा संशय और भरम चित्त में उठा कर, उसके फ़ायदे और बड़ाई की तमीज़ नहीं कर सकते। फिर, जब कि उनको अंतर के हालात और मुक़ामात और कैफ़ियतों से बिल्कुल बे-ख़बरी होगी, तब किस तरह मालिक की दया की, जो वह अंतर में किसी जीव पर करे, या कोई तमाशा क़ुदरत का दिखलावे, समझ और परख आ सकती है ?

६—जीवों की ताक़त और लियाक़त, इस लोक में, इस क़िस्म की रक्खी गई है कि वह दूसरे शख़्स की मदद से, जो उनसे ज़्यादा ताक़त और लियाक़त रखता होवे, आहिस्ता २ बारम्बार समझाने-बुझाने और कार्रवाई का नमूना दिखलाने से, बढ़ सकती है, और सिर्फ़ एक दफ़े के बचन का असर, चाहे जैसा वह बचन ज़बर होवे, क़ायम नहीं रह सकता, क्योंकि मन और इन्द्रियाँ, जो कि काम करने के औज़ार हैं, हर रोज़, किसी क़दर बदलते रहते हैं। और इसी सबब से भूल भी ज़्यादा है। इस वास्ते, जब तक कि किसी काम का बराबर सीखना और अभ्यास करना जारी नहीं रहेगा, और कोई शख़्स, बतौर उस्ताद या गुरु के, उस कार्रवाई की निगरानी और ताकीद नहीं करेगा, तब तक मन और इन्द्रियाँ, जिनका ख़्वास आराम-तलबी और भोगों में लिपट कर और उनका रस लेकर, मगन और निःचिंत हो रहने का है, कभी ऐसे काम, कि

जिन में इनको मेहनत और अपनी आदत से विलक्षण यानी जुदी और नई कार्रवाई करनी पड़े, दुरुस्ती से अंजाम नहीं देंगे।

७—दुनिया में जितने काम हैं, कोई मनुष्य बल्कि जानवर भी बग़ैर सिखाये, और अपने हम-जिन्सों को वह काम करते हुए देखे बग़ैर, नहीं सीखते, और न दुरुस्ती से उसकी कार्रवाई करते हैं। यहाँ तक कि उठना, बैठना, चलना, फिरना, खाना, पीना, कपड़ा पहिरना, खाना, बनाना, और इल्म और हुनर और कारीगरी और चालाकी, और बहुत से और काम, मामूली या ग़ैर-मामूली, बग़ैर सीखने और औरों को वह काम करते हुए देखने के, नहीं आते। फिर, जब कि दुनिया के काम कि जिन में मन और इन्द्रिय अपने पिछले जनमों के स्वभाव के मुवाफ़िक़ आसानी से लग जाते हैं, बग़ैर सिखाने वाले और हम-जिन्सों में बैठ कर उसकी कार्रवाई करने के, नहीं सीखे जाते हैं, तब मनुष्य लोग परमार्थ का कार्रवाई, जो कि कठिन है और उसकी चाल भी उल्टी है, किस तरह से, अंतर में मालिक का बचन एक दफ़े सुन कर, सीख सकते हैं? और उस बचन को कैसे, ज्यों का त्यों, समझ सकते हैं?

८—मालिक जब किसी को कोई बात बतावेगा, तो यही करेगा कि अंतर में उसको बचन सुनावेगा, या उसके

मन में प्रेरणा करेगा, पर दोनों हालत में, बग़ैर बाहर की मदद के, कोई कार्रवाई, उस बचन या प्रेरना के मुवाफ़िक़, नहीं बन सकती है। या यह कि मालिक उसको अंतर में, सच्चे सतसंग और पूरे गुरु के सन्मुख जाकर, उपदेश लेने की हिदायत या प्रेरना करेगा, और जब वह यह बचन मानेगा तो उसका, अभ्यास करके, सच्चे उद्धार का रास्ता जारी हो जावेगा, और सतगुरु की मेहर से एक दिन पूरा काम बन जावेगा।

६—जीवों में बहुत दरजे हैं और हर एक की समझ-बूझ और लियाक़त, अपने २ दरजे के मुवाफ़िक़ है। बाहर के बचन, हर एक जीव, अपनी २ लियाक़त और समझ के मुवाफ़िक़ समझता है और सबकी समझ एकसाँ नहीं होती, फिर अंतर का बचन, जो निहायत सूक्ष्म होगा, कैसे सब जीव ज्यों का त्यों समझ सकते हैं? हर एक की समझ जुदी २ है, और हर एक के मन और इन्द्रिय की ताक़त भी मुवाफ़िक़ उनके बर्ताव और व्यवहार और स्वभाव यानी रहनी के, जुदी २ है, फिर सब जीव एकसाँ नहीं हैं, और उनकी समझ और रहनी भी एकसाँ नहीं है। इस वास्ते, वे अंतर या बाहर का बचन भी एकसाँ नहीं ग्रहण कर सकते हैं, और आपस में फ़र्क़ ज़रूर रहेगा। फिर, मालिक अपने अंतरी बचन या प्रेरना से, हर एक की सम्हाल, जैसा कि चाहिये, नहीं कर सकता। इस वास्ते,

सिखाने और समझाने वाले की मदद बाहर से हर एक जीव को ज़रूर दरकार है।

१०—और मालूम होवे, कि अंतर का बचन सुन कर, जीवों को कैसे यक़ीन हो सकता है कि यह मालिक का बचन है या उनकी, अपने २ मन और बुद्धि की प्रेरना है, या कोई और रूह, मिस्ल भूत या जिन्न के, या कोई काल की कला अंतर में बोलती है ? इस में, अभ्यासियों को, जिनके सिर पर गुरू मौजूद हैं, भरम हो जाता है। फिर, जिनको गुरू नहीं मिले, वे कैसे भरम और संशय से, इस मुआमले में, बच कर किसी क़िस्म की कार्रवाई अंतरी बचन के मुवाफ़िक़, कर सकते हैं, या उसको जैसा कि चाहिये वैसा समझ सकते हैं ?

११—अब मालूम होवे कि जिस क़दर कार्रवाई दुनिया या परमार्थ की है, वह बिदून मोहब्बत या प्रेम के, दुरुस्ती से बन नहीं सकती, और मोहब्बत या प्रेम, जीव को, किसी में, बग़ैर देखने या उसकी महिमा सुनने के, आ नहीं सकता। और जो महिमा सुन कर भी प्रेम आवे तो वह बिदून देखने यानी दर्शन के, और उस तरफ़ से थोड़ी बहुत मदद मिलने के, बढ़ नहीं सकता। फिर मालिक के चरनों का प्रेम, किसी के मन में, पहिले तो महिमा सुन कर आवेगा, और फिर, वह दर्शन और दया पाकर बढ़ेगा। इस

वास्ते, जो मालिक अंतर में किसी को बचन सुनावे या प्रेरना करे, तो वैसा प्रेम, जो दर्शन पाकर और दया की परख करके आवेगा, पैदा नहीं हो सकता।

१२—जो करनी बताई जावे, वह ऐसी कठिन है कि बग़ैर मन और इन्द्रियों के रोकने के, दुरुस्ती से बन नहीं सकती। और माया के पदार्थ और इन्द्रियों के भोग ऐसे ज़बर हैं कि उनसे, बिदून बाहरी और अंतरी मदद के, हटना और उनसे नफ़रत करना, जीवों की ताक़त से बाहर है। फिर, किसी क़िस्म की करनी जीवों से दुरुस्ती से बन आना, और दिन २ उसमें तरक़्क़ी करना किस क़दर मुश्किल है? इसी सबब से, जितने उपाय और जतन कि पोथियों में लिखे हैं, सब कहने और सुनने की बातें रहीं, और करनी किसी से, उनके मुवाफ़िक़, नहीं बनती और इसी वजह से जीव का सच्चा उद्धार दुर्लभ हो गया।

१३—इस वास्ते ऐसी हालत और बे-ताक़ती जीवों की देख कर, कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल, आप संत सतगुरु रूप धारन करके प्रकट हुए, और जीवों को, अपने पुत्र की तरह प्यार करके, चरनों में खींचा, और मेहर और दया से अपने चरनों की प्रीत उनके मन में बसाई। इस प्रीत का हिरदे में बसाना, यही दया ख़ास है, क्योंकि प्रीत से जीव एक दूसरे से मिलते हैं, और प्रीत के सबब

से, एक दूसरे की तरफ़ खिंचता है। सो जिसके दिल में राधास्वामी दयाल के चरनों में प्रीत पैदा हुई, वही उस प्रीत के सबब से, भेद रास्ते का लेकर, उनके चरनों की तरफ़ खिंचता है, और चौरासी के चक्कर और काल और माया के घेर से निकल कर मुक्ति पद को प्राप्त होता है।

१४-ज़ाहिर है कि जीवों की प्रीत, अनेक पदार्थों और भोगों में, और कुटुम्ब परिवार और बिरादरी में, लग रही है, यानी उनका मन अनेक जगह बँध रहा है। सो, उन सब से हट कर, पहिले एक ज़ाहिरी स्वरूप में जब तक नहीं ठहरेगा, तब तक, उसका सूक्ष्म और अति सूक्ष्म और अरूप में लगना मुश्किल और ना-मुमकिन है। अब समझना चाहिये कि ऐसा चैतन्य और समर्थ ज़ाहिरी स्वरूप, जो कि जीवों के मन को सब तरफ़ से हटा कर अपने में लगावे, कौन है? वह स्वरूप सच्चे और पूरे गुरु का, ज़ाहिरी यानी देह रूप है। उन्हीं के दर्शन और बचन से कुल्ल मालिक के चरनों में प्रीत जागेगी और महिमा चित्त में समावेगी, और सच्चे अनुरागी जीवों को, उनका ज़ाहिरी स्वरूप और बचन निहायत प्यारे लगेंगे। और जिस क़दर जीवों की प्रीत उनमें बढ़ती जावेगी, उसी क़दर, वह दुनिया से आहिस्ता २ न्यारे होते जावेंगे। और फिर वही प्रीत, गुरु के सूक्ष्म और अति सूक्ष्म और विदेह रूप में लगती जावेगी, और ज़ाहिरी

स्वरूप से किसी क़दर नज़र हटती जावेगी। इस तौर से, अनुरागी जीव, भेद रास्ते का, और जुगत चलने की, दरियाफ़्त करके, राधास्वामी दयाल के चरनों की तरफ़, दिन २ चलता जावेगा, और एक दिन धुर पद यानी राधास्वामी धाम में पहुँच कर, कुल्ल मालिक के दर्शन पाकर, सच्ची मुक्ति को प्राप्त होगा।

१५—बग़ैर ऊपर की तरकीब के मुवाफ़िक़ चलने के, कोई जीव धुर पद में नहीं पहुँच सकता, क्योंकि चलना और चढ़ना, बग़ैर प्रेम के, नहीं बन सकता है। इस वास्ते, पहिले गुरु के चरन में प्रीत लगाना ज़रूर है। और ऐसे चैतन्य पुरुष और समर्थ गुरु, सिवाय मालिक के या जिसको कि वह आप अपनी दया से इस दरजे पर पहुँचावें, दूसरा नहीं हो सकता। फिर ज़ाहिर है कि जब तक मालिक आप नर रूप धर कर संसार में न आवे, तब तक, जीवों के सच्चे उद्धार की कार्रवाई जारी नहीं हो सकती।

१६—और मालूम होवे कि कुल्ल मालिक, सिवाय गुरु स्वरूप के, निज रूप से भी, जीवों के उद्धार में मदद देता है। यानी जो जीव कि गुरू का सतसंग करके निर्मल किये गये, यानी अन्तर में रास्ता तै कर के किसी ऊंचे दरजे पर पहुंचाये गये, वहाँ, उनको ताक़त परखने कुल्ल मालिक की दया और मदद को, हासिल होवेगी, और वहाँ से

धुर मुक़ाम तक कुल्ल मालिक अपनी मेहर से, उनको आप मदद देकर, यानी गुरु स्वरूप में दर्शन देकर पहुँचावेगा।

१७-लेकिन, जब तक कि जीव, नीचे दरजे में माया और तमोगुण के घेर में पड़े हुए हैं, उनको, कुल्ल मालिक की दया की धार नज़र नहीं आ सकती है। इस वास्ते, पहिले उनकी सफ़ाई और किसी दरजे तक चढ़ाई, बग़ैर गुरु स्वरूप के उपदेश और मदद के, नहीं हो सकती है। यानी पहिले, उनका भाव और प्यार गुरु के देह स्वरूप में लगाया जावेगा, और उस प्रीत के वसीले से, उनके स्थूल और सूक्ष्म बन्धन काटे जावेंगे, तब अन्तर में वह दरजा हासिल होगा कि जहाँ से कुल्ल मालिक के चरनों में सच्ची और गहरी प्रीत प्रकट होकर, सुरत को निज धाम यानी राधास्वामी के चरनों में पहुँचावेगी।

१८-ऊपर के लिखे हुए से साफ़ ज़ाहिर है कि मालिक का, संसार में, नर रूप धारन करके प्रकट होना, वास्ते उद्धार जीवों के, यानी खींचने ऊपर की तरफ़ को, नीचे के दरजों में से, निहायत ज़रूर है, क्योंकि उन नीचे दरजों से सुरत का उबार सिवाय कुल्ल मालिक के, जब वह आप सतगुरु रूप धारन करके संसार में प्रकट होवे या उसकी ख़ास अंश के, जिसको वह अपनी ताक़त देकर संसार में भेजे, दूसरा कोई नहीं कर सकता।

१६—यह सतगुरु रूप, जीवों को, अपने चरनों में लगा कर और अपनी प्रीत उनके हिरदे में बसा कर, दिन दिन ऊपर की तरफ खींचता है। बिना सतगुरु के प्रेम-प्रीत के, कोई जीव, नीचे का देश छोड़ कर, ऊँचे देश में नही पहुँच सकता। और इस वास्ते कुल्ल मालिक का या उसके निज अंश का, गुरु स्वरूप धारन करके संसार में आना निहायत ज़रूर है, और यही उसकी ख़ास दया जीवों के उबार के वास्ते है कि उनको प्रेम-प्रीत यानी भक्ति का दान देकर, और सुरत-शब्द अभ्यास की, जिस क़दर मुनासिब और ज़रूरी है, कमाई करा कर, माया और काल और चौरासी के चक्कर से बचा कर, निज धाम में पहुँचा कर, अपने निज स्वरूप के दर्शन देता है, और जनम-मरन की फाँसी से, अपनी मेहर और दया से, छुड़ा लेता है।

२०—जो जीव कि ज़्यादा नीचे दरजे में पड़े हैं और मन और इन्द्रियों के भोग-विलास में अटक रहे हैं, उनका उबार भी मंजूर है। लेकिन उनकी सफ़ाई बग़ैर उनके तन और मन को थोड़ा बहुत कष्ट देने के, नहीं हो सकती। सो यह कष्ट और कलेश जो उनको वक़्त मुनासिब पर दिया जाता है, शुरू दरजे की दया है। जैसे कि खिलाड़ी और नटखट लड़कों को, बाप या उस्ताद ताड़ मार करके सम्हालता है, यानी उनका चाल-चलन अपनी मरज़ी के मुवाफ़िक़ दुरुस्त कर लेता है, इसी तरह, मालिक

नीचे के दरजों के जीवों को, तकलीफ़ और तंगी का दण्ड देकर, निर्मल कर लेता है। तब वे लायक गुरु की सेवा और सतसंग के होते हैं, और फिर गुरु स्वरूप की मेहर और मदद से ज़्यादा ऊँचे दरजे पर चढ़ाये जाते हैं, जहाँ से कि कुल्ल मालिक, उनको, अपनी अन्तरी मेहर व दया से अभ्यास कराके, और प्रेम बढ़ा कर, अपने महल में बुला लेता है। इसी का नाम सच्ची मुक्ति और सच्चा उद्धार है।

बचन १६

"इतसे मोड़ और उतको जोड़" यानी संसार और माया के पदार्थों से चित्त को हटा कर, राधास्वामी दयाल के चरनों में, यानी स्वरूप और शब्द की धार में जोड़ना चाहिये

१—जो कोई सच्चा कल्यान और उद्धार अपने जीव का चाहे, उसको यह काम सिर्फ़ संत अथवा राधास्वामी मत में शामिल होकर और सुरत-शब्द के अभ्यास की कमाई करके पूरा पूरा बन सकता है। और किसी मत में जो दुनिया में जारी हैं, यह काम जैसा चाहिये, दुरुस्त नहीं बन सकता।

२—कुल्ल मालिक का देश यानी सुरत का भंडार

ऊँचे से ऊंचा है, और वहीं से आदि-सुरत की धार निकली, और उतर कर, जगह २ ठहर कर, और मंडल बाँध कर, रचना करती हुई, पिंड में तीसरे तिल के मुक़ाम पर ठहरी है, और वहीं से पिंड की रचना की सम्हाल कर रही है। और दो धारें, दोनों आँखों के तिल के मुक़ाम पर ठहर कर, देह और दुनिया की कार्रवाई करती हैं, और मुख उनका, बाहर की तरफ़, और पिंड में नीचे की तरफ़ है।

३--जो धारें कि नीचे की तरफ़ पिंड में फैली हैं, उनका बंधन देह के अंग २ में हो रहा है, और जो कि बाहर की तरफ़ जारी हैं, वह अनेक प्रकार के भोगों और पदार्थों में, और भी कुटुम्ब-परिवार और बिरादरी वग़ैरा में बँध रही हैं। अपनी धारों की ज़ंजीरों से, मन और सुरत, संसार में बंध कर, फँस गये हैं।

४--मन अनेक तरंगें भोग-बिलास और संसार के मान-बड़ाई की उठाता रहता है, और उनके पूरा करने के वास्ते, अनेक तरह के जतन यानी करम करता है।

५--इस कार्रवाई में जो और जीवों को सुख पहुँचा तो उसका फल किसी क़दर सुख मिलता है और जो जीवों को दुख पहुँचा तो उसकी एवज़ दुख भोगना पड़ता है। खुलासा यह कि करमों के चक्कर से जीव कभी बाहर नहीं होता है, और ऊंच-नीच देश और जोनों में सदा भरमता रहता है।

६--इस चक्कर से जो कि माया के घेर में हर वक़्त

चल रहा है, कोई जीव बाहर नहीं जा सकता, क्योंकि देह की आशा और भोगों की इच्छा, उसको हमेशा नीचे के देशों में, और करम-अनुसार जोनों में भरमाये रखती है। यानि उसके मन और सुरत का रुख और झुकाव, अपनी चाहों के सबब से, सदा, नीचे और बाहर की तरफ़, माया के मंडल में, रहता है।

७—जितने मत कि दुनिया में जारी हैं, उन सब में, जो कुछ कि परमार्थी कार्रवाई अक्सर की जाती है, वह सब बाहरमुखी है, और जो कुछ किसी मत में अंतरी अभ्यास जारी है, उसकी कार्रवाई छः चक्रों के अन्तरगत, यानी पिंड की हद्द के अंदर में, की जाती है, और कहीं २ पिंड के परे, ब्रह्मांड के नीचे के दरजे तक, उस कार्रवाई की रसाई बयान की है। पर वहाँ के अभ्यास का तरीक़ा, मिस्ल प्राणायोग वग़ैरा के, ऐसा कठिन और ख़तरनाक है कि किसी जीव से, चाहे वह गृहस्थ आश्रम छोड़ कर विरक्त भी हो जावे, वह अभ्यास, दुरुस्ती से बनना निहायत मुश्किल बल्कि ना-मुमकिन है।

८—इसी सबब से, सब जीव बाहरमुखी परमार्थ में लग रहे हैं। और जो कि ऐसी कार्रवाई का सिलसिला सच्चे मालिक के देश या उसके चरनों की धार से, अंतर में, नहीं लगा हुआ है, इस वास्ते, वह बाहरमुखी कार्रवाई, सिर्फ़ शुभ करम का फल देती है, और जनम-मरन और दुख-

सुख से छूटना, और सच्चे मालिक के चरनों में पहुंच कर अमर और परम आनन्द को प्राप्त होना, मुमकिन नहीं है।

६—और जो कोई, बिलफ़र्ज़ थोड़ा-बहुत, अन्तरी कार्रवाई करके, पिंड के नाके तक, या ब्रह्मांड के नीचे के दरजे में पहुँचे, वह बहुत काल को सुखी हो जावेगा, पर जनम-मरन से बिलकुल रहित नहीं होवेगा। इस तरह, सच्चा उद्धार किसी का न होगा, यानी सच्चे मालिक का दर्शन किसी को हासिल नहीं हो सकता, और न उसके देश की, जो कि पिंड और ब्रह्मांड के परे है, और जहाँ माया बिलकुल नहीं है, किसी को ख़बर मिल सकती है।

१०—ऐसी हालत जगत के जीवों की देख कर, परम पुरुष पूरन धनी कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल, संत सतगुरु रूप धार कर, इस संसार में प्रकट हुए, और जीवों को, अति दया करके, सच्चे और पूरे उद्धार की सहज जुगत बताई, यानीं सुरत-शब्द मारग का उपदेश किया, जिसकी कमाई, जो सच्चा शौक़ रखता होवे, चाहे मर्द होवे या औरत, जवान होवे या बूढ़ा, विद्वान होवे या अनपढ़, आसानी के साथ कर सकता है, और रफ़्ता २ एक दिन, सच्चे और कुल्ल मालिक के चरनों में पहुंच कर, परम आनन्द को प्राप्त हो सकता है।

११—इस अभ्यास का मतलब यह है कि मन और सुरत की धार को, जो नीचे और बाहर की तरफ़ भोगों

और माया के अनेक पदार्थों में बह रहा है, इधर से हटा कर या मोड़ कर, ऊँचे की तरफ़ को अपने अंतर में चलाना चाहिये ।

१२—कुल्ल मालिक का देश ऊंचे से ऊँचा है, और उसका भेद और रास्ता और स्थानों का हाल संतों के उपदेश से मालूम होगा, यानी हर एक स्थान का नाम और रूप और आवाज़ वग़ैरा का भेद संत बताते हैं। सो उस उपदेश के मुवाफ़िक़, स्वरूप और शब्द के आसरे, मन और सुरत को समेट कर, निज घट में चढ़ाना चाहिये।

१३—कुल्ल काम दुनिया के, प्रीत और शौक़ के साथ, दुरुस्त बनते हैं। इसी तरह जिसके मन में सच्चे और कुल्ल मालिक और उसके देश की महिमा सुन कर, प्रीत और शौक़ आया, वही अधिकारी संत मत के उपदेश का है, और उसी के मन और सुरत की धार, आसानी के साथ, अंतर में, ऊपर की तरफ़ चढ़ेगी ।

१४—दुनिया में जिसका जिससे विशेष प्यार और मुहब्बत है, वह एक दूसरे से चल कर मिलते हैं। इसी तरह, जिसका प्यार चरनों में कुल्ल मालिक के आया, और भेद रास्ते और मंज़िलों का, और जुगत चलने की, उसको मालूम हुई, तब शौक़ और प्रेम के साथ, उसके मन और सुरत अपने प्रीतम सच्चे मालिक के दर्शन के वास्ते, उसी रास्ते पर आहिस्ता २ चलना शुरू करेंगे, और जिस क़दर उनकी चाल चलेगी,

उसी क़दर आनन्द रास्ते में उनको मिलना शुरू हो जावेगा, यानी कुछ २ रोशनी या प्रकाश भी नज़र आता जावेगा, और आवाज़ भी रसीली सुनने में आवेगी। इस तरह शौक़ और प्यार दिन २ बढ़ता जावेगा और उसके साथ चाल भी बढ़ती जावेगी।

१५–फिर जिस क़दर कि अंतर में कैफ़ियत नज़र आवेगी और आनन्द मिलेगा, उसी क़दर, शौक़ मालिक के दर्शनो का बढ़ता जावेगा, और उसी क़दर मन और इन्द्रियाँ, इस तरफ़, यानी दुनिया के भोग बिलासों की तरफ़ से हटती जावेंगी, और दुनिया और उसका सामान फीका लगता जावेगा, और दुनियादारों के संग से तबीयत में उदासीनता आती जावेगी। इसी का नाम इधर से मोड़ना और उधर को जोड़ना है।

१६–सच्चे शौक़ीन और दर्दी परमार्थी को, इस अभ्यास के करने में, ज़रा भी तकलीफ़ नहीं होती, बल्कि और रस और आनंद आता है, और कुल्ल मालिक की दया भी उसको अंतर और बाहर मालूम होने लगती है। तब प्रतीत, यानी यक़ीन बढ़ेगा, और उसके साथ प्रेम-प्रीत भी बढ़ेगी, और दिन २ तरक़्क़ी होती जावेगी और इसी तरह एक दिन निज घर में, जो कि अमर और अजर और प्रेम और आनन्द का महा भण्डार है, पहुँच कर, अपने सच्चे माता-पिता राधास्वामी दयाल का दर्शन पावेगा, और तब

बिलास और आनन्द में मगन रहेगा। काल, कष्ट और कलेश और जनम-मरन वहाँ नहीं है, क्योंकि वहाँ माया का नाम निशान भी नहीं है।

१७–यह दुनिया और देह दुख-सुख और मल-मूत्र का भाँडा है। यहाँ रह कर कोई परम आनंद को, जो एक रस सदा क़ायम रहे, प्राप्त नहीं हो सकता। इस वास्ते संत फ़रमाते हैं कि जो कोई दुक्खों से और जनम-मरन की फाँसी से बचना चाहे, वह जिस क़दर जल्दी मुमकिन होवे, उसी क़दर, संत सतगुरु की दया और मेहर लेकर, इस पिंड और संसार से न्यारे होने का जतन शुरू कर देवे, तो एक दिन कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल की दया से, पिंड और ब्रह्माण्ड के पार, संत अथवा दयाल देश में पहुँच जावेगा।

१८–ज़ाहिर है कि जिस क़दर कार्रवाई स्वार्थ और परमार्थ, यानी दुनिया और दीन की, जो आदमी से बन रही है, या बन सकती है, वह सब इसकी तवज्जह की धार के सबब से बनती है, और तवज्जह या चित्त की धार में मन और सुरत की धार शामिल है। अब जब तक कि आदमी की तवज्जह की धार, बाहर की तरफ़, जड़-पदार्थों में जैसे इन्द्रिय-भोग वग़ैरा में, जारी रहेगी, तब तक समझना चाहिए कि चैतन्य-धार का ख़र्च ही ख़र्च है, और जड़-पदार्थों के साथ मेल और बंधन होता है, और इस वास्ते, उनके भाव

और अभाव में (जिस क़दर आसक्ति होगी) उसी क़दर सुख-दुख ज़रूर भोगना पड़ेगा। जो तवज्जह दुखदाई पदार्थ की तरफ़ से हटा कर, दूसरी तरफ़ जोड़ दी जावे, तो वह दुख बहुत हलका और कम हो जावेगा, और जो पूरी २ तवज्जह बदल दी जावे तो वह दुख बिल्कुल मालूम नहीं पड़ेगा।

१६—राधास्वामी मत के अभ्यास की यही ख़ूबी और बड़ाई है, कि इस में, आदमी की तवज्जह, इसके सुरत-चैतन्य के भण्डार की तरफ़, सहज में फेरने की तरकीब काम में लाई जाती है। वह चैतन्य-भण्डार आनन्द और सुख का घर है। सो जब तवज्जह, उस तरफ़ को, पूरी २ आती है, फ़ौरन थोड़ा-बहुत सुख और आनन्द प्राप्त होता है और दुख और चिन्ता बिसर जाती है।

२०—जो कोई चिन्ता और तकलीफ़ या रोग-सोग की हालत में अपनी तवज्जह पूरी-पूरी—(१) बानी के पाठ के सुनने में, या (२) मुक़ाम का ख़याल करके नाम के सुमिरन और स्वरूप के ध्यान में, या (३) शब्द की धुन में, या (४)संत और साध की ज़बानी, चर्चा और बचन में, लावे, तो उसी वक़्त, संतों के अभ्यास का असर अपने अन्तर में मालूम कर सकता है यानी ज़रूर उसकी चिंता या तकलीफ़ या बीमारी या रंज किसी क़दर हलके और कम हो जावेंगे, और इस तरह पिछले कर्मों का भोग, बहुत कम व्यापेगा।

और जो अभ्यास जारी रहा, तो दिन दिन पाप-कर्म कटते जावेंगे, और कुछ अर्से में पूरी सफ़ाई हो जावेगी, और आइन्दा को आनन्द बढ़ता जावेगा, और कुल-मालिक राधास्वामी दयाल की दया व मेहर की परख आती जावेगी, और चरनों में प्रीत और प्रतीत और अभ्यास की लगन बढ़ती जावेगी।

२१—अब ग़ौर करना चाहिये, कि सब जीव वास्ते प्राप्ति सुख और दूर होने दुक्खों के, उमर भर, रात-दिन जतन करते रहते हैं, और जो सुख कि हासिल होता है, वह तुच्छ और नाशमान है, और हरचन्द कि यहाँ का दुख भी नाशमान है, पर बाज़े २ दुख ऐसे भारी हैं कि उमर भर तकलीफ़ देते हैं! फिर, वास्ते प्राप्ति निर्मल और ठहराऊ सुख और आनन्द के, ओर दूर करने या जड़ से काट देने तकलीफ़ और दुक्खों के, किस क़दर तवज्जह, हर एक शख़्स को, चाहे मर्द होवे या औरत, करना वाजिब और मुनासिब है? और इस काम के करने की जुगत सिर्फ़ राधास्वामी मत में जारी है, और वह इस क़दर सहज है कि जो थोड़ा भी सच्चा शौक़ होवे, तो वह दुरुस्ती से बन पड़ेगी, और वह शौक़ दिन २ बढ़ता जावेगा, और पूरी करनी करा कर, एक दिन अभ्यासी को निज घर में पहुँचा कर, निःचिंत कर देगा।

बचन २०

मन और सुरत का मुख, अंतर में, ऊपर की तरफ़ मोड़ने, और आहिस्ता २ चढ़ाने में, हमेशा सुख और आनन्द, ज्यादा से ज्यादा मिलेगा, और दुख-तकलीफ़ और चिन्ता दूर और कम होते जावेंगे। इस वास्ते यह अभ्यास कुल्ल जीवों को, चाहे औरत होवे या मर्द, वास्ते अपने असली फ़ायदे के, करना लाज़िम और मुनासिब है।

१—दुनिया में सब जीव, वास्ते प्राप्ति सुख और आनन्द के, रात-दिन मेहनत और कोशिश करते हैं, और दुक्खों से बचने या उनको दूर करने के वास्ते भी बराबर तदबीर और जतन करते हैं। पर जो सुख कि यहाँ प्राप्त होते हैं, वे सब मन और इन्द्रियों के विषय हैं, यानी मन और इन्द्रियों को, उन से, स्वाद और रस मिलता है, और उसका असर बहुत थोड़ी देर तक ठहरता है, और फिर जाता रहता है। और जो दुख कि भारी हैं, जैसे सख़्त बीमारी और मौत, उनके दूर करने का कोई जतन या तदबीर, आदमी के इख़्तियार में नहीं है, यानी वे ला-इलाज हैं, और सब को चार-नाचार सहने पड़ते हैं, बल्कि छोटे

दुक्खों को भी कोई शख़्स उनके मुक़र्ररा वक़्त से पहिले नहीं हटा सकता, और न कम कर सकता है।

२—सबब तुच्छ और नाशमान होने, दुनिया के सुक्खों का, यानी इंद्रियों के भोगों का, यह है कि यह रस और स्वाद जड़-पदार्थों के संग से प्राप्त होते हैं, और जड़-पदार्थों में चैतन्य-अंस बहुत कम है, और जो कि यह बात तहक़ीक़ और निर्णय हो चुकी है कि जितने सुख और आनन्द और रस और स्वाद हैं, वे सब सुरत चैतन्य की धार के वसीले से, जो इंद्रियों के घाट यानी द्वारे पर आकर ठहरती है, हासिल होते हैं। इस वास्ते, जो धार कि इन्द्रियों के घाट से, ऊँचे देश में जारी है, उससे, सुरत और मन को मिलने से, ज़रूर सुख और आनन्द और रस निर्मल और ज़्यादा मालूम होवेगा, और उसी वक़्त में, वग़ैर करने दूसरे जतन के, तकलीफ़ चाहे किसी किस्म की होवे यानी मानसी या देह की, कम मालूम पड़ेगी, यानी किसी क़दर उसको इफ़ाक़ा हो जावेगा।

३—अब ग़ौर करना चाहिये, कि जो कोई इस तरह का जतन बतावे कि जिससे सुरत और मन और इन्द्रियों का रुख ऊँचे देश की तरफ़ को सहज में उलटता जावे, और अंतर में स्वतन्त्र यानी अपने इख़्तियार से जितनी देर चाहे, ऊपर के दरजे का रस और आनन्द ले सके, तो उस जतन या जुगत को, किस क़दर तवज्जह के साथ, हर

एक औरत और मर्द को सीखना, और उसके मुवाफ़िक़ कार्रवाई करना, लाज़िम और मुनासिब है, ख़ास कर, जब कि वह जुगत ऐसी है कि विशेष रस और आनन्द प्राप्त करावे, और भी उसी वक़्त चिन्ता और तकलीफ़ को हटा देवे, या कम कर देवे, यानी वह जतन दुहरे फ़ायदे का असर रखता है।

४—और वह जतन यह है कि मन और सुरत को, तवज्जह के साथ, ऊँचे देश में, संतों के भेद के मुवाफ़िक़, रूप में जोड़े, और शब्द की धुन के साथ, जो हर वक़्त घट २ में हो रहा है, लगावे, और उसी धार को पकड़ कर ऊपर को चढ़ावे। इस जतन का नाम, ध्यान और सुरत-शब्द योग है और परम पुरुष राधास्वामी दयाल ने, उसको, इस क़दर सहज कर दिया है कि लड़का, जवान, बूढ़ा, औरत होवे या मर्द, गृहस्थ होवे या विरक्त, पढ़ा-लिखा होवे या अनपढ़, हर एक शख़्स आसानी और आराम के साथ, बग़ैर किसी ख़तरे के, कर सकता है और जल्द उसका असर और फ़ायदा अपने अंतर में देख सकता है।

५—इसी जतन की कार्रवाई करके, जीव, दरजे-ब-दरजे अपने मन और सुरत को, घट में चढ़ा कर, माया के घेर से बाहर जा सकता है, और देहियों के बन्धन और उनके लाज़िमी दुख-सुख से सच्चा छुटकारा हासिल कर सकता है, और फिर वहाँ से आलम-ए-रूहानी यानी निर्मल-चैतन्य देश

में पहुँच कर, अपने सच्चे माता-पिता कुल्ल मालिक सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल के दर्शन पाकर अमर और अजर हो सकता है।

६—यह जतन कोई जादू या मन्त्र नहीं है। सिर्फ़ तवज्जह का, दरजे-ब-दरजे और आहिस्ता २ ऊँचे स्थानों में, जो कि घट २ में वक़्त उतार सुरत के, क़ुदरती रचे गये हैं, लगाने और जमाने का काम है। जिस क़दर जिसको तवज्जह अंतरी, रूप या शब्द में ठहरेगी, उसी कदर, उसको रस और आनन्द प्राप्त होगा, और दिन २ सफ़ाई होती जावेगी, और दुनिया का मैल और आलायश और नापाकी घटती जावेगी, यानी संसारी चाहें और इंद्रिय-भोगों की बासना, कम होती जावेंगी, और रफ़्ता २ सुरत, मन और इन्द्रियों का संग छोड़कर और विदेह होकर, निर्मल-चैतन्य यानी दयाल देश में चढ़ जावेगी। इस मुक़ाम में पहुंचने पर, सच्चा उद्धार और सच्ची मुक्ति हासिल होती है, यानीं जनम-मरन से सच्चा छुटकारा हो जाता है और अमर और परम आनन्द की प्राप्ति होती है, क्योंकि वह देश रूहों का भंडार है। और महा विशेष और निर्मल चैतन्य वहाँ भरपूर है, और जो कि सुरत चैतन्य है और सत्त और अमर और अजर और महा आनन्द स्वरूप है, फिर उस देश के अविनाशी सुख और आनन्द का क्या अनुमान किया जावे कि उसका अंदाजा बिल्कुल अक़्ल और क़यास में नहीं आता है?

७–ऊपर के लिखे हुए फ़ायदे की तसदीक़ और जाँच, अभ्यासी जीव, अपनी इसी जिन्दगी में कोई दिन के अभ्यास के बाद, अच्छी तरह कर सकता है, और थोड़ा-बहुत रस और आनन्द अभ्यास शुरू करते ही मिलने लगता है। इससे ज़्यादा क्या सबूत इस जतन और अभ्यास की बड़ाई का दरकार है? इस वक़्त के जीवों पर निहायत दरजे की दया, कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल ने फ़रमाई है, कि ऐसा बढ़के दरजे का अभ्यास, इस क़दर सहज कर दिया है कि हर कोई उससे आसानी के साथ फ़ायदा उठा सकता है।

८–अब जीवों को निहायत ग़ौर के साथ, अपने असली नफ़े और नुकसान का विचार करना ज़रूर है कि जब कि वे इस दुनिया के तुच्छ और नाशमान सुख और आराम के लिए ऐसी मेहनत और मशक़्क़त कर रहे हैं कि उमर भर इसी में खो देते हैं, तो फिर वास्ते प्राप्ति अमर और परम आनन्द के, किस क़दर तवज्जह और कोशिश उनको करना वाजिब है कि जिससे बारम्बार जनम धर कर, दुख-सुख भोगने से हमेशा के वास्ते रिहाई हो जानी मुमकिन है?

९–जो कोई यह ख़्याल करे कि अभ्यासी को इस काम के करने में घरबार या रोजगार छोड़ना पड़ेगा,

सो इस बात की, संत अथवा राधास्वामी मत में, कुछ ज़रूरत नहीं है। इस मत में जिस क़दर त्याग है, वह मन से है, बाहर से गृहस्थी और रोजगार के छोड़ने की ज़रूरत नहीं पड़ती, यानी जब तक कि अभ्यासी को गहरा रस और आनन्द, अंतर में, ऊँचे दरजे का हासिल न होवे, तब तक वह दुनिया की कुल्ल कार्रवाई मुख़्तसर तौर पर, यानी संक्षेप करके बराबर किये जावेगा, और जब इस क़दर आनन्द हासिल होगा कि फिर तवज्जह दूसरी तरफ़ को, यानी दुनिया के काम में नहीं कर सकता, तब कुल्ल-मालिक सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल, अपनी मेहर और दया से, उस अभ्यासी के कारोबार का बन्दोबस्त आप कर देंगे, कि जिसमें उसको और उसके कुटुम्बियों को किसी क़िस्म की तकलीफ़ न होगा।

१०—ऊपर लिखा गया है कि दुनिया में बाज़े दुख बहुत भारी, और बाज़े रोग ला-इलाज यानी असाध हैं, सो उन की तकलीफ़ भी सुरत-शब्द के अभ्यास से बहुत कम और हल्की हो जावेगी, यानी जिस क़दर कि अभ्यासी को ताक़त चढ़ाने मन और सुरत की, आँख के मुक़ाम से ऊँचे की तरफ़, दिमाग़ में, अभ्यास के वसीले से, हासिल होगी, उसी क़दर चिन्ता और फ़िकर और दुख और तकलीफ़ मन और देह की, उसको कम व्यापेगी।

११—देखने में आता है कि तवज्जह के रुख़ बदलने

से, यानी चित्त के एक तरफ़ से दूसरी तरफ़ मुख मोड़ने से, आदमी की हालत फ़ौरन बदल सकती है। जैसे कोई आदमी किसी फ़िकर और चिन्ता में बैठा हुआ है, और उस वक़्त उससे कोई अचरजी ख़बर या बात कोई शख़्स आकर कहे, तो जितनी देर उस बात का ज़िक्र और निर्णय वग़ैरा होता रहेगा, और उसकी तवज्जह उस तरफ़ लगी रहेगी, तब तक वह चिन्ता या फ़िकर उसको नहीं सतावेगा। ऐसे ही, अगर बदन के किसी अंग में किसी क़िस्म की तकलीफ़ है, और उस वक़्त बीमार की तवज्जह किसी ख़ास काम या बात की तरफ़ लगा दी जावे, तो उसको, वह तकलीफ़ जब तक कि तवज्जह बँटी रहेगी, बहुत कम मालूम होगी।

१२—अब मालूम होवे, कि राधास्वामी मत में अभ्यास, मन और सुरत की धार या मुख को, घट में ऊँचे की तरफ़ मोड़ने का, कराया जाता है, और वह ऊँचे का देश दरजे-ब-दरजे विशेष सुख और आनन्द का भंडार है, और जीव को बैठक से नीचे के देश में और बाहर की तरफ़, उस क़दर सुख और आनन्द नहीं है, यानी दरजे-बदरजे कम होता गया है, और दुख और तकलीफ़ का मसाला और सामान उस नीचे के देश में बढ़ता गया है। फिर, जिस किसी को कि अभ्यास के बल से ताक़त, सुरत और मन के मुख मोड़ने और चढ़ाने की, हासिल है, वह जब चाहे

अपने इख़्तियार से ऊँचे देश में चढ़ कर, विशेष आनन्द ले सकता है और दुख और तकलीफ़ के मुक़ाम से हट सकता है ।

१३–अब समझना चाहिये कि यह बात किस क़दर भारी फ़ायदे की है, कि एक ही काम करने से, एक ही वक़्त में, दुख और तकलीफ़ और चिन्ता और फ़िक्र घट जावे या बिल्कुल हट जावे, और सुख और आनंद उसी वक़्त ज़्यादा से ज़्यादा मिलता जावे ।

१४–ऐसी जुगत, हर एक को, चाहे औरत होवे या मर्द, इस दुनिया में जानना बहुत ज़रूर और मुनासिब मालूम होता है, क्योंकि इस देश में दुख और सुख दोनों का चक्कर चल रहा हैं, और जीव उनके भोगने में लाचार है । फिर जिन जीवों को संतों की जुगत सुरत-शब्द जोग की मालूम है और वह उसका नित्त अभ्यास करते रहते हैं, और जिन्होंने घट का भेद और सच्चे मालिक का पता और निशान राधास्वामी मत का उपदेश लेकर मालूम कर लिया है, और उस सच्चे मालिक की सच्ची सरन हिरदे से दृढ़ कर ले ली है, उनको, किस क़दर आसानी के साथ मदद हर वक़्त अपने घट में कुल्ल मालिक की दया से मिल सकती है ? और सुख-दुख की हालत में, किस क़दर शान्ति और ताक़त अपने अंतर में जब चाहें जब हासिल कर सकते हैं ?

१५—जब कोई सख़्त तकलीफ़ या चिन्ता पैदा होती है, उस वक़्त कोई जीव किसी की मदद नहीं कर सकता, और न धन और सम्पत्ति और न हुकूमत कुछ काम दे सकती है। ऐसे कष्ट के समय में, सिर्फ़ सच्चा मालिक ही अपनी दया से कष्ट निवारण कर सकता है। सो उस कुल्ल-मालिक का पता और भेद और निशान किसी मत में खोल कर नहीं बयान किया है कि जिसको समझ कर, जीव, दुख की हालत में, उस मालिक के चरणों में इस तौर से बिनती और प्रार्थना करे कि जिसकी ख़बर चरनों तक पहुँच सके, और वहाँ से दया आवे और उससे थोड़ी, बहुत शान्ति उस वक़्त हासिल होवे।

१६—यह भेद सिर्फ़ राधास्वामी मत में खोल कर समझाया जाता है, बल्कि जीव का, इसके पिंड में बैठक के स्थान से कुल्ल-मालिक के चरनों तक, सूत लगा दिया जाता है, और कुल्ल-मालिक के धाम का निशाना और वहाँ तक अपने मन और सुरत के पहुँचाने की जुगत बतला दी जाती है, कि जिससे जब यह चाहे, उसी वक़्त अपने मन और सुरत की धार को चरनों से जोड़ सकता है, बल्कि निज धाम तक कुछ रसाई हासिल कर सकता है। और इस कार्रवाई का उसी वक़्त फ़ायदा मालूम कर सकता है, यानी किसी क़दर, ताक़त और शान्ति और सरूर और आनन्द को प्राप्त हो सकता है। यह किस क़दर

भारी फ़ायदा है कि किसी को दुनिया भर में, सिवाय सच्चे और प्रेमी परमार्थी के, जो कि राधास्वमी मत के भेद और अभ्यास से वाक़िफ है, और चरन-सरन दृढ़ करके उसकी कमाई कर रहा है, हासिल नहीं है।

१७—अब इस बात को समझ कर, जीवों को इख़्तियार है कि अपने हाल और आइन्दा के फ़ायदे के वास्ते, चाहे राधास्वामी मत के उपदेश को अंगीकार करें या नहीं। यह काम जब्र या ज़बरदस्ती या झूठे लालच और आसा से नहीं बन सकता। लेकिन जो कोई कि सच्चा परमार्थी है यानी जिसके मन में सच्चे मालिक के चरनों में सच्ची प्रीत और प्रतीत हैं, चाहे वह थोड़ी होवे, वह इस अभ्यास को आहिस्ता २ करके, उससे ऊपर का लिखा हुआ फ़ायदा उठा सकेगा, और कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल की दया को, अपने हर काम में, अंतर और बाहर, और परमार्थ और स्वार्थ में दिन-दिन परखता जावेगा, और तब अपने भागों को सराह कर राधास्वामी दयाल के चरनों में सच्चा शुकराना अदा करके, दिन दिन प्रीत और प्रतीत बढ़ाता जावेगा, और एक दिन, निज धाम में पहुँच कर, दुख-सुख यानी माया के देश से न्यारा होकर, हमेशा के वास्ते परम आनन्द को प्राप्त होगा।

———

बचन २१

वर्णन रौशन और अँधेरी किरनियों का जो कि पिंड और ब्रह्मांड की रचना में चैतन्य और जड़ की प्रकट अंस हैं, और उपदेश वास्ते पहुँचने निर्मल चैतन्य यानी हमेशा के नूरानी देश में, जहाँ अँधेरा यानी काल और माया बिल्कुल नहीं हैं

१–इस रचना में दो पदार्थ हैं, एक चैतन्य और दूसरा जड़। चैतन्य का ज़हूरा रोशन किरनियाँ हैं। जड़ का, अँधेरी किरनियाँ।

२–जो कि यहाँ की रचना स्थूल है और जड़ चैतन्य की मिलौनी से हुई है, इस वास्ते यहाँ रोशनी और अंधेरा दोनों मिलकर कार्रवाई कर रहे हैं, यानी कभी रोशनी होती है और कभी अंधेरा हो जाता है।

३–अंधेरा, काल स्वरूप है और इसमें हमेशा भूल और भरम पैदा होते हैं। इस सबब से, यहाँ परमार्थ की निस्बत जो कि रोशनी रूप है, भूल और भरम का बहुत ग़लबा रहता है, यानी परमार्थी बात जल्दी भूल जाती है और परमार्थी कार्रवाई में अनेक तरह के संशय और भरम पैदा होते हैं कि जिसके सबब से, कोई जीव, सच्चे मालिक

की पहचान या उसके चरणों में पहुँचने का जतन दुरुस्ती के साथ नहीं कर सकता है।

४–जिस किसी को, भाग से, संत सतगुरू का सतसंग मिल जावे, तो उसके सब संशय और भरम दूर होकर सच्चे मालिक के चरनों में सच्ची प्रीत और प्रतीत पैदा होकर, दिन २ बढ़ सकती है, और वही प्रीत और प्रतीत एक दिन, उस अभ्यासी को, परम आनन्द देश में, सच्चे मालिक के सन्मुख पहुँचा कर, हमेशा को जनम-मरन से रहित कर देगी।

५–इस वास्ते, हर एक आदमी को, औरत होवे या मर्द, चाहिये कि अँधेरे और उजेले की मिलौनी के स्थान से, जहाँ कि भूल और भरम की कसरत है, हट कर, जिस क़दर जल्द मुमकिन होवे, नित्त रोशनी यानी महा विशेष चैतन्य के धाम में पहुँचने का जतन, शौक़ और प्रेम के साथ, अपने घट में करे। और जो ऐसा नहीं करेगा, तो वह हमेशा के वास्ते अँधेरे के मुक़ाम में, जहाँ रोशनी यानी चैतन्य की धार बहुत कम है, पड़ा रहेगा, और नीच-ऊँच जोनों में जनम-मरन का कष्ट सहता रहेगा, और दिन २ ज़्यादा अंधेरे के देश में उसका उतार होता जावेगा और अज्ञान यानी नादानी और कष्ट और कलेश बढ़ते जावेंगे।

६–इस अंधेरे के देश को छोड़ कर, ऊपर की तरफ़,

यानी नूरानी देश में जाने के वास्ते सिर्फ़ एक ही सच्चा और सहज और क़ुदरती जतन मुक़र्रर है, और वह यह है कि रोशनी की धार को जो कि चैतन्य की धार है, पकड़ कर, ऊँचे देश की तरफ चलना शुरू करे। वह रोशनी और चैतन्य की धार, शब्द और रूह यानी जान और अमृत की धार है। सो धुन की डोर पकड़ कर, जहाँ से कि शब्द या नूर या जान की धार आती है, उलट कर, अपने घट में चलना और चढ़ना चाहिये।

७—जो कोई यह कहे कि हम रोशनी की धार को पकड़ कर, स्वरूप के आसरे, निर्मल-चेतन्य देश में पहुंच जावेंगे, यह बात मुमकिन नहीं है। इस तरकीब के साथ सिर्फ़ एक दर्जा तै होवेगा, लेकिन जब भारी रोशनी नज़र आवेगी, तब उसके मंडल से गुज़रना मुश्किल या ना-मुमकिन हो जावेगा। और रोशनी में बहुत दरजे हैं, यानी माया के घेर में (जिसमें पिंड और ब्रह्माण्ड शामिल हैं), ब-सबब मिलौनी माया के, कमी-बेशी होती चली गई है। सो इन दरजों को तै करके, निर्मल चैतन्य देश यानी हमेशा के नूरानी स्थान में पहुँचना, जहाँ अँधेरी किरनें और माया का ग़ुबार बिलकुल नहीं हैं, बग़ैर भेद रास्ता और स्थानों के स्वरूप के, और मदद शब्द के अभ्यास के, ना-मुमकिन है।

८—निर्मल-चैतन्य देश हमेशा नूरानी है। वहाँ स्याही यानी अंधेरा अथवा काल और माया का ग़ुबार बिलकुल नहीं

है। वह नूर और रोशनी सेत रंग है। उस सेत का वर्णन कुछ नहीं हो सकता है, और न इस लफ़्ज़ के कहने से किसी की समझ में उस सेत की क़ैफियत आ सकती है।

९–महा निर्मल चैतन्य देश में रंग, रूप, और रेखा नहीं है। सिर्फ़ नूर ही नूर है। और सत्तलोक से नीचे के देश में नूर थोड़ी-बहुत स्याही यानी अंधेरी किरनों से मिला हुआ है।

१०–जितने रंग हैं, सब ब्रह्माण्ड और पिंड देश, यानी दूसरे और तीसरे दरजे में रचना के हैं, और यह चैतन्य और माया यानी नूरानी और अँधेरी किरनों की मिलौनी से ज़ाहिर हुए। पहिले, लाल रंग, और फिर पीला रंग, और फिर नीला यानी श्याम रंग, और यही रंग तीनों गुन सतोगुन, रजोगुन और तमोगुन के हैं। और बाक़ी के रंग इन तीनों की कमी और बेशी और मिलौनी से ज़ाहिर हुए। इस देश में जो सेत रंग है, वह किसी क़दर निर्मल है, पर थोड़ी सी श्याम किरनियाँ उसमें भी मिली हुई हैं। और सब रंग इसी से प्रकट हुए।

११–रोशनी यानी नूर का इस कदर तेज है कि इसके आसरे चलना और चढ़ना मुश्किल है, और अजान अभ्यासी को इसके दरजे और क़ैफ़ियत की पहिचान करना भी मुमकिन नहीं है। लेकिन शब्द की धार को पकड़ कर, सहज २ अभ्यासी चल सक़ता है और रोशनी

के मैदानों और स्थानों को पार कर सकता है।

१२—अब ख़्याल करो कि अँधेरा यानी श्याम रंग और श्याम किरनें, काल और माया का ज़हूरा हैं। सो जहाँ तक कि अभ्यासी को अंधेरा और उजाला मिले, या जहाँ तक कि श्याम रंग या अंधेरा, थोड़ा या बहुत, नज़र आवे, वहाँ न ठहरे, और अपना अभ्यास जारी रख कर, ऊँचे देश की तरफ़ अपनी चाल, शब्द और स्वरूप के आसरे, जारी रखे। यह स्वरूप हर एक स्थान पर, सुरत के उतार के वक़्त, क़ुदरती रचा गया है और जब तक कि उस मंडल की रचना क़ायम है, बराबर क़ायम रहेगा।

१३—पिंड देश, यानी तीसरे दरजे में, प्रलय के वक़्त रचना का अभाव यानी सिमटाव हो जाता है, और महा प्रलय का असर जो कभी २ होती है, ब्रह्माण्ड तक पहुंचता है। महा सुन्न के परे किसी क़िस्म की प्रलय का असर नहीं पहुँचता, यानी उसके ऊपर जो कुछ कि रचना है, वह अव्वल दरजे, यानी निर्मल चैतन्य देश में शामिल है, और सदा एक रस क़ायम रहती है, और वही देश संतों का है, जहाँ काल कलेश और जनम मरन नहीं है।

१४—अंधेरे का ख़वास है कि वह नूरानी किरनों को निगल जाता है। इसी तरह काला कपड़ा या कम्बल, रोशनी या बिजली की धार को खींचता है, यानी अपने

में जल्द जज़्ब कर लेता है या समा लेता है

१५—सुरत-चैतन्य नूरानी है और काल, अँधेरा रूप है। इस वास्ते अपनी हद्द में यह हमेशा उसको निगलता-उगलता रहता है। अपना रूप उसको नहीं बना सकता। यानी सुरत का, और अंधेरे या काल का जौहर एक नहीं है, और न यह दोनों आपस में तदरूप होकर मिल सकते हैं। पर, अंधेरा सुरत को अपने पेट में धर लेता है। इसी सबब से रचना के तीसरे दरजे में, जहाँ काल और माया का बहुत ज़ोर है, जनम-मरन जल्द होता है, और जीवों को दुख और कलेश भी ज़्यादा है, क्योंकि अमृत रूपी नूरानी किरनें यहाँ बहुत कम हैं, और अंधेरी यानी ज़हरीली किरनियाँ बहुत हैं। और ये हमेशा नूरानी किरनियों का आवरण यानी ग़िलाफ़ हो जाती हैं।

१६—संहार शक्ति काल का ख़वास है, यानी हर एक चीज़ की सूरत को बदल देना, या बिगाड़ देना, और स्वरूप उसका भयानक है। असल में सुरत को काल कुछ नुक़सान नहीं पहुँचा सकता, पर उसके खोल यानी देह को खा जाता है, क्योंकि वह उसी मसाले का बना हुआ है। इस सबब से सुरत हमेशा काल से डरती रहती है और यह आम बात है कि अँधेरे में सब को डर लगता है। इस सबब से, जब तक कि सुरत अँधेरे के स्थान से, यानी काल की हद्द से बाहर न होगी, और संतों के हमेशा के नूरानी

देश में नहीं पहुँचेगी, तब तक काल से निर्भय नहीं होगी, यानी जनम-मरन का ख़ौफ़, काल की हद्द में, बराबर लगा रहेगा।

१७–संतों ने, और ख़ास कर परम पुरूष राधास्वामी दयाल ने, मुफ़स्सिल भेद काल और दयाल का मय उसकी हद्द के बयान किया है। काल की हद्द में जितने स्थान हैं, वे सब प्रलय या महा प्रलय के समय जरूर सिमट जावेंगे, यानी उनकी रचना का अभाव हो जावेगा। इस वास्ते लाज़िम हुआ कि काल की हद्द के पार, ज़रूर जैसे बने तैसे, हर एक जीव को जाना चाहिए, नहीं तो जनम-मरन नहीं छूटेगा, और नीचे के देश में सुरत सर-गरदाँ और परेशान भरमती रहेगी, और कहीं विश्राम या सच्चा चैन नहीं मिलेगा।

१७–इस वास्ते, राधास्वामी दयाल के मत में शामिल होकर, भेद काल और दयाल देश का लेकर, जिस कदर स्थान कि काल देश में हैं, वहाँ से अभ्यास करके, पार होकर, दयाल देश में पहुँचना, और वहाँ राधास्वामी धाम में विश्राम करना चाहिए। तब कारज पूरा बनेगा, यानी तब सच्चा उद्धार और सच्ची मुक्ति हासिल होगी।

शब्द १२, बचन ४१, सार बचन छंद बंद

निरखो री कोई उठ कर पिछली रतियाँ ॥टेक॥

माया छलन तरंग मन रोकन, घट में कँवल खिलतियाँ ॥ १ ॥

अर्थ--पिछली चार घड़ी पहिले सूरज के निकलने से, सुबह तक, रात के वक़्त, अभ्यास करने से, माया को छलने, और मन की तरंग रोकने की किसी क़दर ताक़त आवेगी, और घट में कँवल का भी दर्शन होगा।

सीतल सागर मीन मरम जस, न्हावत मल मल गतियाँ ॥ २ ॥

अर्थ—तब सुरत मछली की तरह सीतल सागर में स्नान करके सफ़ाई हासिल करेगी।

सिला उठाय कँवल दल फोड़त, तोड़त द्वार सुनत जहाँ बतियाँ ॥ ३ ॥

अर्थ--पहिले परदे को उठा कर और श्याम कँवल का दल फोड़ कर, यानी तीसरे तिल के अंदर सुरत ने धंस कर शब्द की आवाज़ सुनी।

चमक जोत धारा धुन झकियाँ, मन माया कूटत जहाँ छतियाँ ॥ ४ ॥

अर्थ—जोत की चमक और वहाँ की धुन की धार मालूम हुई, और मन और माया वहाँ पर छाती कूटने लगे कि यह अभ्यासी सुरत, हमारी हद्द से निकल गई।

हरख हरख धावत पद उत्तम, तम संसार सकल बिनसतियां ॥ ५ ॥

अर्थ--और ख़ुश होकर सुरत वहाँ से आगे को बढ़ती चली और संसार यानी त्रिलोकी की माया का अँधेरा दूर हुआ।

मौज निहार पुरूष घर पावत, धावत सुरत निरतियाँ ॥ ६ ॥

अर्थ–राधास्वामी दयाल की मौज के अनुसार, सुरत और निरत, सत्तलोक की तरफ़ को दौड़ने लगीं ।

पीवत अमी झकोल कँवल पद, केल करत सत मतियां ॥ ७ ॥

अर्थ–सुरत, ऊपर को चढ़ कर और दसवें द्वार में अमी का रस लेती हुई, और वहाँ से आगे बढ़ कर, सत्त शब्द के साथ बिलास करती हुई चलती है ।

को कह सके नाम की महिमा, संत बतावत जो गत पतियाँ ॥ ८ ॥

अर्थ–संत के नाम की महिमा कोई नहीं कर सकता है । वे आपही उसकी गत और पत वर्णन करते हैं ।

राधास्वामी कहत सुनाई, मूल मिलो चढ़ हटियां ॥ ९ ॥

अर्थ–राधास्वामी दयाल समझा कर फ़रमाते हैं कि मूल पद से मिलना चाहिए, रास्ते के मुक़ामात तै करके ।

बचन २२

चैतन्य को विशेश चैतन्य और महा चैतन्य से मेल करना चाहिए, न कि सामान्य चैतन्य और जड़ से

कड़ी नम्बर ४, शब्द १०, बचन नम्बर १४
पोथी सार बचन छंद बंद

"तू चेतन यह जड़ सब मिथ्या क्यों कर मेल मिलानी"

१—इस लोक की रचना में मनुष्य सबसे श्रेष्ठ और विशेष चैतन्य है, और हरचंद थोड़े फ़ायदे या कुछ काम लेने के लिए, अपने से कम चैतन्य वालों से व्यवहार या बर्ताव करता है, पर चाह उसकी हमेशा यही रहती है कि अपने से बढ़ कर या बराबर वालों से व्यवहार और बर्ताव करे। बल्कि जो कोई सबसे बढ़ कर है, उससे मिलने और वर्ताव करने की चाह सब के मन में बहुत ज़बर बनी रहती है।

२—कुल्ल मनुष्य अपने से कम के साथ मिलना और बर्ताव करना सिर्फ़ कोई काम लेने या कुछ धन और पदार्थ के फ़ायदे के लिये करते हैं, जैसे चौपायों के साथ, दूध पीने और सवारी लेने या बोझा लादने या और कोई मेहनत और मशक़्क़त का काम लेने की नज़र से, बर्ताव किया जाता है। और इसी तरह परिन्दों को उनकी ख़ूबसूरती देखने या ख़ुश आवाज़ सुनने या और कोई क़िस्म का खेल या उनकी आपस में लड़ाई का तमाशा देखने के लिये पालते हैं, और ऐसे ही कीड़े-मकोड़े वग़ैरा भी, वास्ते तमाशा दिखाने या उनकी ख़ूबसूरती देखने और दिखाने की नज़र से पकड़ कर रक्खे जाते हैं और फल

और फूल वाले और उम्दा लकड़ी के दरख्तों की परवरिश और निगहबानी, फल खाने, और खुशबू लेने, और खूबसूरती देखने, और लकड़ी काम में लाने के लिए की जाती है, और अनेक जड़-पदार्थों की और उनके खानों की निगहबानी और हिफ़ाज़त यानी रक्षा, उनकी पैदावार को अपने काम में लाने और बेच कर उससे धन पैदा करने को नज़र से की जाती है।

३—खुलासा यह है कि जितने चैतन्य यानी जानदारों और जड़ पदार्थों से, जिनका ज़िक्र ऊपर लिखा गया, जो कोई मनुष्य मेल करता है, वह सिर्फ़ कुछ काम लेने या धन पैदा करने के निमित्त है। और जितना जिससे फ़ायदा होता है, उसी क़दर उसके पालन या निगहदाश्त में तवज्जह और धन खर्च करता है। इससे ज़्यादा मेल करने की ख्वाहिश या और किसी किस्म की आसा उन जानवरों या जड़-पदार्थों से नाहीं रखता।

४—लेकिन जो कोई आदमी, कोई खास गुन या जौहर रखता है, या किसी गुन में सबसे ज़बर है, या विशेष धनवान या हुकूमतवान या अमीर या राजा है, या बिशेष खूबसूरत है, तो उसके देखने और उससे मिलने की चाह सब मनुष्यों के दिलों में पैदा होती है, और ऐसों से मिल कर निहायत खुशी दिल

में पैदा होती है और अपनी ख़ुश-नसीबी समझी जाती है, और ख़ास कर राजों और अमीरों से मिल कर अपने तईं बड़ा आदमी ख़्याल करते हैं, और इस मेल के हासिल करने के वास्ते तन, मन, धन उमंग के साथ ख़र्च करते हैं।

५—जो कुछ कि ऊपर लिखा गया है, यह सब दुनियवी कार्रवाई में दाख़िल है और जो कुछ कि इस में फ़ायदा या ख़ुशी हासिल होती है, वह भी दुनियवी है। और मालूम होवे कि दुनिया के दुनिया के जितने फ़ायदे या ख़ुशी के काम हैं, वे सब परमार्थ के मुक़ाबले में तुच्छ और नाशमान हैं।

६—परमार्थी लाभ, यानी फ़ायदा, और परमार्थी ख़ुशी का इस क़दर भारी दरजा है कि जिस किसी को यह सच्चा २ और पूरा हासिल होवे, तो फिर उसको किसी चीज़ की चाह बाक़ी नहीं रहेगी, और सब रस और ख़ुशी और सुख दुनिया के, उसकी नज़र में, फीके मालूम होंगे। और वह मर्तवा और दरजा सच्चे और पूरे परमार्थी को हासिल होता है कि जिसकी बराबरी कुल्ल रचना में कोई नहीं कर सकता, यानी न तो इस लोक के भोग, बिलास और पदार्थ और राज और हुकुमत वग़ैरा सच्चे परमार्थी को लुभा सकते हैं और न ऊँचे लोकों के भोग और राज उसकी तवज्जह को अपनी तरफ़ खींच सकते हैं।

७—सच्चा और पूरा परमार्थी नाम, सच्चे और कुल्ल

मालिक के आशिक़ यानी भक्त का है। सो उसकी नज़र में सिवाय अपने प्रीतम कुल्ल मालिक के दूसरा नहीं ठहर सकता। वह भक्त अपने माशूक़ सच्चे मालिक के सिवाय, दूसरे से मिलना या प्रीत-भाव का बर्ताव करना भी नहीं चाहता, क्यों कि इस लायक उसकी नज़र में सिवाय सच्चे गुरू के, जिनकी मेहर और मदद से अपने प्रीतम का भेद और निशान और उससे मिलने का रास्ता और तरीक़ा मालूम हुआ है, और कोई नहीं मालूम होता। इस वास्ते उसकी प्रीत पहले सतगुरू में, और फिर, सच्चे मालिक में, जो सतगुरु का निज रूप है, क़ायम होती है, और दिन २ बढ़ती जाती है, जब तक कि निज धाम में पहुँच कर सच्चे मालिक का दर्शन न पावे, और वहाँ पहुँच कर परम आनन्द को प्राप्त होता है, और जहाँ किसी क़िस्म का कष्ट और क्लेश और दुख और धन्धा और चिन्ता और फ़िकर का नाम और निशान भी नहीं है, ऐसा भारी फल सच्चे परमार्थी को सच्चे परमार्थ की कमाई से मिलता है।

८—अब ख़्याल करो कि दुनिया में कोई मनुष्य किसी से नहीं मिलता है, जब तक कि थोड़ा-बहुत अपना फ़ायदा और काम निकलता न देखे और न अपना तन, मन, धन वहाँ खर्च करता है। तो फिर किस क़दर अचरज और अफ़सोस की बात है कि परमार्थ के हासिल करने के वास्ते जीव, जड़ पदार्थों के सन्मुख दीन होवें, या वहाँ तन, मन, धन

लगावें, जैसे धातु या पाषाण की बनी हुई मूर्त्ति या पिछले महात्माओं के किसी निशान या पोथी और ग्रन्थ या मकान या दरिया वग़ैरा की यात्रा और पूजा करना या कोई दरख़्त या किसी और जानदार को (जो कि मनुष्य से बहुत नीचे दरजे पर हैं) परमार्थी फ़ायदा उठाने की नज़र से बड़ा मान कर उसकी पूजा या यात्रा करना ?

९—जब कि कुल्ल दुनिया में लोग अपने से बड़े के मिलने की चाह रखते हैं, और उसके लिये मेहनत और जतन बल्कि रुपये ख़र्च करते हैं, फिर परमार्थ में कुल्ल मालिक से मिलने और उसको प्रसन्न करने की चाह ज़बर मन में होनी चाहिये। किस तरह लोग जड़ यानी बेजान चीज़ों या जानवरों की पूजा करना पसन्द करते हैं कि जहाँ से कोई क़िस्म का जवाब रज़ामन्दी या ग़ैर-रज़ामन्दी का नहीं मिल सकता है, और न किसी तरह की हिदायत या उपदेश निस्बत कार्रवाई के होना मुमकिन है ?

१०—यह चाल आम तौर पर सब क़ौमों और मुल्कों में जारी है, और कोई भी इस चाल को ना-पसंद नहीं करता या यह कि उसको ना-मुनासिब नहीं कहता, बल्कि और उसके जारी रहने में मदद देते हैं।

११—इससे मालूम होता है कि आम तौर पर जीवों के दिल में सच्चे और कुल्ल मालिक के मिलने की सच्ची

चाह नहीं है और जो कुछ कि लोग कार्रवाई करते नज़र आते हैं, वे या तो पैरवी ख़ानदानी रसम की है या यह कि ऐसा ख़ौफ़ दिल में पैदा हुआ है कि पुरानी रसम के मौक़ूफ़ करने में दुनियावी नुक़सान या किसी तरह का हर्ज न हो जावे।

१२–बल्कि बहुत सी क़ौमों और मुल्कों में ऐसा ख़्याल जम गया है कि सच्चे मालिक को कोई जान और पहिचान नहीं सकता, और न उसके चरनों तक किसी की पहुँच हो सकती है। इस वास्ते सब की तवज्जह का झुकाव कर्म और धर्म की तरफ़ या जीवों के उपकार के कामों में हो गया है, और मालिक का खोज और उसके मिलने के रास्ते की तलाश किसी क़दर बंद हो गई।

१३–और जो किसी क़ौम में भेद और मुक़ाम मालिक का ज़ाहिर किया है, तो उसके मिलने का रास्ता और जुगत ऐसा कठिन और ख़तरनाक़ बयान की है कि जिसकी कार्रवाई गृहस्थियों से ना-मुमकिन और विरक्तों से निहायत मुश्किल नज़र आती है–जैसे प्राणों का रोकना और चढ़ाना वग़ैरा। इस सबब से भी आम तौर पर खोज और तलाश सच्चे मालिक और उसके मिलने के तरीक़े का बंद हो गया।

१४–इस वास्ते, बजाय सच्चे मालिक के, औतारों

और महात्माओं और पैग़म्बरों और वलियों के निशान और मकान और तसवीरों और नक़ल वग़ैरा की पूजा सब देशों में जारी हो गई, और आम लोग उतनी ही ज़ाहिरी कार्रवाई करके तृप्त हो गये।

१५–पर जो कोई कि सच्चा खोजी है, और दर्द परमार्थ का, यानी शौक़ मिलने अपने मालिक का मन में रखता है, और इस दुनिया के हाल और चाल को देख कर, चित्त उसका उदास हुआ है, वह कभी इस क़िस्म की पूजाओं में, जिनका ज़िक्र ऊपर लिखा गया, राज़ी नहीं होगा, और जो कुछ कि कार्रवाई परमार्थ की, उसको करनी मंजूर होगी, वह चैतन्य पुरुष की, जो परमार्थ में अपने से बढ़कर होगा, करेगा और वहां से उपदेश और हिदायत लेता हुआ, अपना काम बनावेगा, यानी रास्ता तै करके, एक दिन, सच्चे मालिक के दरबार में पहुँच कर अपना जनम सुफल करेगा।

१६–जो इस क़िस्म के सच्चे परमार्थी जीव हैं, उन्हीं के वास्ते यह बचन कहा गया है। और जो कि भूल या भर्म या अनजानता के सबब से आम लोगों के साथ परमार्थी कार्रवाई में शामिल हो गये हैं, पर जिनके मन में सच्चा दर्द है, वे भी सच्चे अधिकारी हैं, वे इस बचन को सुन कर, ग़फ़लत की नींद से जाग उठेंगे, और सच्चे परमार्थ

का तरीक़ा और चाल दरियाफ़्त करके, उसके मुवाफ़िक़ कार्रवाई शुरू करेंगे। इन्हीं जीवों से यह कहा जाता है कि अपने से बढ़ कर चैतन्य-पुरुष ढूँढो, और वह चैतन्य-पुरुष, वक़्त के सच्चे गुरु हैं। उनका सतसंग करके महा चैतन्य पुरुष का जो कि कुल्ल मालिक है, पता और भेद लेकर उसकी प्राप्ति का जतन शुरू कर दो, और कुल्ल मालिक और सतगुरु की मेहर और दया को, अपने अन्तर और बाहर परखते हुए, और प्रीत और प्रतीत चरनों में बढ़ाते हुए, रास्ता तै करते जाओ रफ़्ता २ एक दिन काम पूरा बन जावेगा

१७—और उन्हीं सच्चे परमार्थी जीवों को यह समझाया जाता है कि तुम चैतन्य हो, और महा चैतन्य पुरुष अविनाशी की अंस हो, यानी उसका और तुम्हारा जौहर एक ही है, और माया के रचे हुए भोग और परमार्थ, जिनका रस इन्द्रियों के वसीले से लेते हो, सब जड़ हैं और नाशमान, फिर तुम्हारा उनसे असला मेल नहीं है। इस वास्ते उनमें अपना बर्तावा होशियारी के साथ रक्खो।

१८—उन भोगों से देह और इन्द्रिय और किसी क़दर मन को अहार यानी ताक़त मिलती है, पर सुरत यानी रूह को उनसे कुछ मदद या फ़ायदा हासिल नहीं होता, बल्कि जो कोई ज़्यादातर बर्ताव इन भोगों में करेगा,

तो उसकी सुरत और मन शिथिल और गदले हो जावेंगे, यानी उनकी सफ़ाई में बहुत ख़लल पड़ जावेगा, और सुस्ती और तमोगुण यानी माया का नशा दिन-दिन बढ़ता जावेगा, और नतीजा उसका यह होगा कि वह शख़्स नीचे के दरजे की रचना में गिरता जावेगा।

१६—इस वास्ते, कुल्ल मालिक दयाल और संत सतगुरु अपने सच्चे परमार्थी जीवों को, यानी प्रेमी जन और भक्तों को होशियार करते हैं कि तुम चैतन्य हो, और महा चैतन्य कुल्ल मालिक की अंस हो, सो तुमको चाहिये कि अपने माता-पिता महा चैतन्य से नाता जोड़ो, और गहरा मेल पैदा करो, यहाँ तक कि उसके धाम यानी निर्मल चैतन्य और निर्माया देश में पहुँच कर, उसके दर्शनों का बिलास और आनन्द हासिल करो।

२०—और जड़-पदार्थों यानी माया-रचित भोगों से दिन २ अपनी तवज्जह हटाते जाओ, और सिर्फ़ ज़रूरत-मात्र उनमें बर्ताव रक्खो, यानी इस क़दर कि जिसमें औसत दरजे पर देह का गुज़ारा हो जावे, और फ़ज़ूलियों को जिस क़दर बन सके, कम और दूर करते जाओ।

२१—सिवाय सच्चे परमार्थी जीवों के, बाक़ी कुल्ल जीवों को जो थोड़ा-बहुत भी सोच और विचार करके अपने नफ़े और नुक़सान की कार्रवाई की जाँच कर सकते हैं,

कहा जाता है कि जब कि तुम सब कामों में अपना नफ़ा और फ़ायदा सरीह देख कर कार्रवाई करते हो, और हमेशा अपने से बढ़कर, बल्कि सबसे बढ़कर लोगों से मेल और बर्ताव करना चाहते हो, तो फिर परमार्थी कामों में क्यों ऐसी बे-परवाही और ढीलम-ढाल के तौर पर कार्रवाई करते हो कि ज़रा भी अपना नफ़ा, हाल या आइन्दा का, नहीं देखते, और अन्धाधुन्ध नादानों साथ के शामिल होकर अपना तन, मन, धन फ़िजूल और बे-फ़ायदा खर्च करते हो ?

२२—तुम को मुनासिब है कि ऐसे का संग करो कि जिस के दर्शन और बचन से तुम्हारे मन और बुद्धि साफ़ होवें, और हिरदे की आँख दिन २ खुलती जावे, कि जिससे असली हाल और कैफ़ियत इस दुनिया की, और भी बड़ाई और भारी नफ़ा सच्चे परमार्थ का, नज़र में आता जावे, और सत्य वस्तु को ग्रहण करते जाओ, और धोखा देने वाले और नाशमान पदार्थों से हटते जाओ, कि जिससे अख़ीर वक़्त पर पछताना न पड़े, क्योंकि उस वक़्त का अफ़सोस कुछ फ़ायदा न देगा। जो कुछ बने, इसी जिंदगी में बनाओ, बल्कि जवानी के वक़्त से, कार्रवाई सच्चे परमार्थ की, शुरू कर दो, और बुढ़ापे के वक़्त, इसी जिंदगी में उसका फल थोड़ा-बहुत देख लो, जिससे अपने मरने

के पीछे के फ़ायदे का हाल जीते-जी मालूम हो जावे और कोई संदेह बाक़ी न रहे।

२३—यह बचन संत सतगुरु दया करके सुनाते हैं। जिनका जल्द उद्धार होने वाला है, वे इसको शौक़ और ख़ुशी के साथ मानेंगे, और जिनका अभी चक्कर जनम-मरन का बाक़ी है, वे नहीं मानेंगे। पर उनके हिरदे में भी बीजा सच्चे परमार्थ का पड़ जावेगा और आइंदा किसी वक़्त पर, शाख़ और बर्ग, यानी डाल-पत्ते पैदा करके रफ़्ता २ फूल और फल देगा, यानी वे जीव भी एक दिन सँतों के परमार्थ के भागी हो जावेंगे।

———

बचन २३

ध्यान में आसानी अभ्यास की, और भजन में किसी क़दर कठिनता का वर्णन

१—अकसर अभ्यासी लोग शिकायत इस बात की करते हैं कि भजन में मन कम लगता है, और गुनावन और ख़्यालात तरह २ के, बहुत उठा करते हैं। सबब इसका यह है कि मन अभी, जैसा चाहिये, साफ़ नहीं हुआ है, यानी उसमें दुनिया की ख़्वाहिशें, अनेक तरह के भोगों

की, धरी हुई हैं। जब भजन में बैठ कर तवज्जह शब्द की धार की तरफ़, जो ऊपर से नीचे को उतरती है, की जाती है, उस वक़्त जो ख़्यालात या चाहें ज़बर हैं, उन्हीं की गुनावन पैदा होती है, और उस गुनावन के साथ, सुरत की धार, बजाय आवाज़ को पकड़ कर ऊपर की तरफ़ चढ़ने के, ज़बर तरंग के साथ, नीचे को उतर आती है, और उस ख़्याल में इस क़दर लिपट जाती है कि अभ्यासी को अक्सर ख़बर भी नहीं रहती कि मैं क्या कर रहा हूँ।

२—इलाज उसका यह है कि सतसंग चेत कर करे, और बचनों को विचार कर सोचे, और समझे, और मन में से फ़िज़ूल ख़्वाहिशें भोग-बिलास की घटाता और हटाता जावे, और सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल के चरनों की प्रीत और प्रतीत दिन २ बढ़ाता जावे। जिस क़दर शौक़ तरक़्क़ी अभ्यास और प्राप्ति दर्शन का, बढ़ता जावेगा, और संसार और भोगों की तरफ़ से तबीयत किसी क़दर हटती जावेगी, उसी क़दर सफ़ाई मन और सुरत की होती जावेगी, और जब वक़्त अभ्यास के, माया और काल, मन और सुरत को अपनी तरफ़, भोगों का ललचाव देकर खींचेंगे, तो निर्मल मन और निर्मल सुरत उस वक़्त होशियार होकर भोगों की तरंग और ख़्यालों को हटा कर, ब-दस्तूर अपनी तवज्जह शब्द की धुन में रख कर, चढ़ते रहेंगे।

३—जो कि ऐसी सफ़ाई के हासिल होने के लिये, यानी मन से ख़्वाहिश भोगों की घटने या दूर होने के वास्ते, निरन्तर यानी बराबर अभ्यास शौक़ के साथ, कुछ अर्से तक, करना ज़रूर है और फिर भी कोई न कोई इन्द्रिय या पाँचों में से कोई न कोई दूत थोड़ा-बहुत ज़बर बना रहता है, और ज़ोर उसका आहिस्ता २ बहुत देर में घटता है। इस वास्ते मुनासिब और बेहतर मालूम होता है कि अभ्यासी, ऐसी हालत में कि जब भजन के वक़्त तरंगें काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार वग़ैरा, या किसी इन्द्रिय के विषय की ज़बर, उठती होवें, तब अभ्यासी ध्यान पर ज़्यादा ज़ोर देवे, यानी उसको ज़्यादा अर्से तक करे, और भजन थोड़ी देर। यानी जिस क़दर थोड़ी-बहुत सफ़ाई के साथ बन पड़े, उतना ही करे, और बाक़ी वक़्त अपने अभ्यास का, सुमिरन और ध्यान में लगावे।

४—भजन के अभ्यास में मन और सुरत को, शब्द की धार के आसरे, जो ऊपर से नीचे को आती है, चढ़ाना पड़ता है। और इस सबब से जब कोई तरंग उठती है, और उसका रुख नीचे की तरफ़ को है, तो शब्द की धार, ज़बर तरंग के साथ, मन और सुरत को नीचे की तरफ़ रुजू होने में मदद देती है, और इस सबब से अभ्यासी को अपनी सम्हाल रखना कठिन हो जाता है।

५–लेकिन, ध्यान के अभ्यास में, जिस क़दर कि शौक़ और प्रेम है, उसी मुवाफ़िक़ मन और सुरत की धार हिरदे के मुक़ाम से उठ कर, अपने प्रीतम से मिलने, या उसका दर्शन करने, या उनके चरनों को स्पर्श करने के लिए, ऊपर को, उस मुक़ाम की तरफ़ जहाँ कि ध्यान जमाया गया है, चढ़ती है। इस हालत में दूसरी क़िस्म की तरंग का पैदा होना, और नीचे की तरफ़ को उसका झुकाव बन नहीं सकता, जब तक कि अभ्यासी आप ही ध्यान को छोड़ कर दूसरा ख़्याल न उठावे, और जो ऐसा करेगा तो उसका ध्यान और शौक़ प्रीतम से मिलने का, ग़लत हो जावेगा।

६–खुलासा यह कि भजन के समय जो कोई ज़बर ख़्वाहिश मन में धरी हुई है, उसको शब्द की धार जगा देती है और ध्यान के समय शौक़ और प्रेम की धार, जो अभ्यासी के हिरदे से उठती है, वह और ख़्वाहिशों की तरंग को नहीं उठने देती, यानी दबाये और सुलाये रखती है। और जिस क़दर कि प्रेम ज़्यादा होगा, उसी क़दर और तरंगें ज़ईफ़ और कमज़ोर होती जावेंगी। इस सबब से ध्यान में, अभ्यासी को आसानी से कार्रवाई करने का मौक़ा मिलता है, और भजन में बग़ैर तीव्र यानी ज़बर बैराग के, भोगों की ज़बर ख़्वाहिश का रोकना और हटना मुश्किल हो जाता है।

७–मतलब यह है कि ध्यान में अभ्यासी जिस क़दर कि प्रेम और शौक़ उसके दिल में है, उसी से थोड़ी-बहुत कार्रवाई, बग़ैर मुक़ाबला विरोधी ख़्वाहिशों के, कर सकता है, और भजन में विरोधी ख़्वाहिशें जल्द जाग उठती हैं, और ताक़त पैदा करके अभ्यासी के मन और सुरत की धार को जल्द नीचे की तरफ़ गिरा देती हैं।

८–सबब इसका यह है कि शब्द ज़्यादा सफ़ाई चाहता है, और जब तक कि अभ्यासी के मन और सुरत में, भोगों की चाह की मलीनता धरी हुई है, वह उसको फ़ौरन प्रकट करके, मन और सुरत की मलीन धार को नीचे को गिरा देता है, यानी अपने सन्मुख से हटा देता है।

९–और ध्यान में इस क़दर फ़ायदा है कि शौक़ और प्रेम की धार, जो अभ्यासी के हिरदे से उठ कर ऊपर को रवाँ होती है, वह अभ्यासी के मन और सुरत की धार को, जो प्रेम की धार के संग चलती है, निर्मल और साफ़ करती हुई, ऊपर की तरफ़ को खींचती है, और स्वरूप उस प्रेम की धार को ताक़त देता है, और मिलने के शौक़ की धार ऊपर को चढ़ती जाती है, उसी क़दर ऊँचे देश का रस और आनन्द मिलता जाता है। और शान्ति और शीतलता आती-जाती है कि जिसके

सबब से मलीन ख़्वाहिशें कमज़ोर होती जाती हैं, और अभ्यास दिन २ बढ़ता जाता है, यानी एक धाम से दूसरे और दूसरे से तीसरे और इसी तरह सत्तलोक तक ध्यान के वसीले से अभ्यासी अपनी सुरत की धार को गौन अंग करके पहुँचा सकता है।

१०—हरचन्द कि ध्यान में किसी क़दर आसानी है, पर जो शौक़ चढ़ाई का और स्वरूप में थोड़ा-बहुत प्रेम नहीं है, या सुरत और मन किसी क़दर ऊँचे चढ़ कर रस और आनन्द नहीं लेते, तो इस अभ्यास में भी गुनावन और ख़्यालात तरह २ के उठते हैं, और जब तक कि अभ्यासी के चित्त में किसी क़दर सच्चा वैराग दुनिया की तरफ़ से, और सच्चा अनुराग सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल और सतगुरु के चरनों में, न होगा, तब तक, उसके सुरत और मन, गुनावन और ख़्यालात के संग लिपट कर नीचे उतर आवेंगे, और ध्यान दुरुस्त नहीं बनेगा और न कुछ रस और आनन्द आवेगा। इस वास्ते हर हालत में थोड़ा-बहुत बैराग भोगों से, और अनुराग चरनों में, ज़रूर दरकार है, तब अभ्यास दुरुस्त बन पड़ेगा और कुछ आनन्द भी प्राप्त होगा और तब आहिस्ता २ तरक़्क़ी भी होती जावेगी, और यह बैराग और अनुराग सतगुरु या साध के संग से आवेगा, और साध से मुराद सच्चे और प्रेमी अभ्यासी से है।

११—ध्यान में इस क़दर आसानी है कि यह अभ्यास स्वरूप के आसरे किया जाता है, और स्वरूप में प्रेम जल्द आ सकता है, चाहे स्वरूप मुक़ामी है या गुरु का, और ज़ाहिर है कि जिस स्वरूप या जिस चीज़ में प्यार होता है, तो उसकी तरफ़ मन और सुरत की धार जल्द उठ कर रवाँ होती है और भजन में शब्द की धार को पकड़ के शब्दी की तरफ़ चलना बग़ैर सफ़ाई और गहरे प्रेम के, मुश्किल है।

१२—अंतरी यानी मुक़ामी स्वरूप का जब कभी मौज से अभ्यास के वक़्त दर्शन हो जाता है, तो फिर चाहे वह हर रोज़ प्रकट न होवे, उसका ख़्याल करके थोड़ा-बहुत प्यार हिरदे में पैदा हो सकता है, और गुरु स्वरूप का तो साक्षात दर्शन बाहर होता है, तो जो कोई उसका तसव्वुर यानी ध्यान अंतर में करे, और वह कभी २ प्रकट हो जावे, तो उसमें विशेष प्यार जल्द आ सकता है, और जब कभी प्रकट न होवे तो उसका ख़्याल करने से भी (अगर मन में सच्चा प्यार और भाव है) किसी क़दर प्रेम हिरदे में पैदा हो सकता है। और मालूम होवे कि जो स्वरूप गुरू का अंतर में प्रकट होता है, वह हाड़-माँस का नहीं है, बल्कि ऐन चैतन्य है, क्योंकि चैतन्य मंडल में अंतरजामी पुरुष, अपने प्रेमी और भक्त जन के निमित्त, गुरु स्वरूप का आकार धारन करता है, और वह चैतन्य

आकारी स्वरूप बराबर अभ्यासी के संग, अगुवे के तौर पर, मदद देता जावेगा, और जिस क़दर कि अभ्यासी ऊँचे मुक़ाम पर ध्यान करेगा उसी क़दर वह स्वरूप भी ऊँचे देश में ज़्यादा निर्मल यानी सूक्ष्म और लतीफ़ और ज़्यादा नूरानी होता जावेगा।

१३—खुलासा यह है कि गुरू का आकारी स्वरूप अभ्यासी के संग बराबर सत्तलोक तक रहेगा और रास्ते में मन और सुरत के सिमटाव और चढ़ाई में बराबर मदद देता जावेगा।

१४—यह गुरू स्वरूप चैतन्य और अविनाशी और देखने में आकार सहित, पर असल में निराकार है, और जो अभ्यासी सेवक का, गुरू स्वरूप में, सच्चा प्यार और भाव है, तो यह स्वरूप हमेशा उसके संग रहेगा, और ज़ाहिर है कि इस स्वरूप के सामने कोई विघ्न मन और माया का ठहर नहीं सकता, बल्कि जब तक कि अभ्यासी के मन और सुरत, इस स्वरूप के ध्यान या ख़्याल में लगे रहेंगे, तब तक दूसरा ख्याल और किसी क़िस्म का पैदा नही हो सकता। इस तौर से माया और मन और काल और कर्म के विघ्न ध्यानी अभ्यासी से दूर रहते हैं।

१५—जो सच्चा परमार्थी है, वह जिस वक़्त कि सतसंग में गुरु के सन्मुख जाता है, फ़ौरन उसकी हालत

बदल जाती है यानी दर्शन करते ही प्रेम हिरदे में उमँगता है। और दुनिया के ख्याल उसी वक्त दूर हट जाते हैं। और जिस क़दम देर तक कि गुरू के सन्मुख हाज़िरी रहती है, मन और सुरत दर्शन और बचन में सिमट कर लगे रहते हैं, और अन्तर में आहिस्ता २ उनका खिचाव ऊँची तरफ़ को होता रहता है। फिर जब ऐसा अभ्यासी अपने अन्तर में ध्यान या भजन के समय गुरु स्वरूप का ध्यान या ख़्याल करेगा, तब वही हालत उसकी जो बाहर गुरू के सन्मुख होती है, अन्तर में हो जावेगा, यानी प्रेम उमँगेगा और संसारी ख्याल और चाहें दूर हो जावेंगी। फिर ऐसी हालत में ध्यान का रस और आनन्द निर्विघ्न मिलेगा, और शब्द भी जो कि अन्तर में हर वक़्त मौदूद है, आसानी से प्रकट होकर गुञ्जारने लगेगा और उस वक़्त अभ्यासी को इख़्तियार होगा कि चाहे धुन में लग जावे या स्वरूप का रस लेवे, या दोनों कामों, यानी भजन और ध्यान को मिला कर उनका रस लेवे।

१६—संतों के और राधास्वामी दयाल ने ख़ास कर, अपनी बानी में प्रेम पर ज़्यादा जोर दिया है। मतलब उसका यह है कि प्रेम की मदद से काम जल्द और आसानी से बन सकता है, और निरे बैराग से इस क़दर फ़ायदा हासिल नहीं हो सकता और न निरी समझ-बूझ मत की, ऐसा फ़ायदा दे सकती है।

१७—कुल्ल काम दुनिया के शौक़ और मुहब्बत से चल रहे हैं, और जहाँ किसी का शौक़ और प्यार नहीं है, वहाँ उससे कुछ कार्रवाई नहीं हो सकती। इस वास्ते सब जीवों को चाहिए कि सच्चे और पूरे परमार्थ के हासिल करने के लिए, सच्चे मालिक के चरनों में सच्चा प्रेम लावें, और जो कि कुल्ल मालिक अरूप है, और किसी को दर्शन उसका पहले नहीं हो सकता, इस सबब से उसमें प्रेम करना मुश्किल है, लेकिन जो कोई पहले गुरु स्वरूप में प्यार लावे और फिर गुरू के निज स्वरूप से मिलने का जतन करना शुरू करे, तो उसका प्यार अरूप पद में, आहिस्ता २ पैदा होता और बढ़ता जावेगा, और सच्चे गुरू, उपदेश के वक़्त, उस निज रूप का भेद देंगे, जो कि अकह और अपार और रूप, रंग, रेखा से न्यारा है, और उसका और सेवक का और कुल्ल रचना का वही निज रूप है। तब इस तौर पर भेद को समझ कर, और रास्ते की मंज़िलें और ठेके दरियाफ़्त करके, अभ्यास चलना शुरू करेगा, और जो प्रेम उसे गुरु स्वरूप में आया है, वही उलट कर, उनके निज स्वरूप में लगता और बढ़ता जावेगा, और इस तरह एक दिन कारज उसका पूरा बन जावेगा।

१८—कुल्ल मतों में जो कि दुनिया में जारी हैं, यही कसर नज़र आती है कि या तो नक़ली और जड़ रूप में मिसल मूरत और तसवीर और निशान और

ग्रन्थ वग़ैरा के अटक गये, और असल का खोज न किया, और या अरूप का थोड़ा-बहुत भेद सुन कर और बुद्धि से समझ कर और आप को वही लक्ष स्वरूप मान कर, तृप्त हो गये, और उस अरूप के देश की ख़बर और मिलने की जुगत न पाकर, इस माया देश के सामान्य चैतन्य को व्यापक ठहरा कर, उसके साथ एकता कर बैठे, और इस तरह दोनों गिरोह ने भारी धोखा खाया, कि न इधर के हुए, न उधर के। यानी सच्चे मालिक का पता और भेद न पाकर उससे मिलने का जतन न करके परम और अमर आनन्द को प्राप्त न हुए और इस दुनियाँ में भी अपनी मनमुखी करतूत के सबब से सुख और चैन न पाया यानो चौरासी की भरमना न मिटी।

१६—यह लोग गुरु की महिमा ज़बानी करते हैं, और पुराने आचार्य्यों ने अपने ग्रन्थों में साफ़ २ और खोल कर, ज़ोर के साथ लिखी है, पर यह लोग ब-सबब न मिलने सच्चे गुरु के, उस महिमा के मुवाफ़िक़ कार्रवाई नहीं करते, और इसी सबब से प्रेम से ख़ाली फिरते हैं और सिद्धान्त पद की पहुँच और प्राप्ति नहीं होती।

२०—इख़लाक़ और धर्म और परोपकार और सच बोलने वग़ैरा की चाहे जिस क़दर बड़ाई बयान की जावे, पर उसके मुवाफ़िक़ बर्ताव करना और रहना, बग़ैर अंतरमुख अभ्यास के, कि जिस से मन और सुरत इन्द्रियों

के घाट से हट कर प्रेम और ज्ञान के स्थान पर अन्तर में पहुँचे, किसी सूरत और किसी शख़्स से, ज्यों का त्यों मुमकिन नहीं है। एक बक़्त में चाहे जैसा त्याग और बैराग कोई दिखला देवे, पर वह हालत जब तक अंतर में घाट नहीं बदलेगा, कभी एक रस क़ायम नहीं रह सकती। इस वास्ते बजाय धरम और इख़्लाक़ और पर-उपकार बग़ैरा पर जोर देने के, मुनासिब है कि वह जतन किया जावे कि जिससे मालिक के चरनों में प्रेम पैदा होवे, और उससे मिलने की चाह, निर्माया देश में, कुल्ल रचना के परे, प्रकट होकर, उसके मुवाफ़िक़ कार्रवाई शुरू की जावे, तो आहिस्ता २ यह गुन भी यानी धरम और इख़्लाक़ वग़ैरा, ऐसे अभ्यासी में, आप ही आप बरतने लगेंगे, और प्रेम जो कि कुल्ल रचना की जान है, और महा निर्मल देश में जिसका असली बासा है, प्रकट होकर, कुल्ल सफ़ाई कर देगा, और सब विकारों को हटा देगा और ऐसा प्रेमी निज देश में जो कुल्ल मालिक का धाम है, बासा पाकर परम आनन्द को प्राप्त होगा।

२१—इस बचन से ऐसा नहीं समझना चाहिए कि भजन करना मने है या ओछा काम है, बल्कि उस को दुरुस्ती से करने के बास्ते, मन में सफ़ाई और प्रेम पैदा करना चाहिये। इस क़दर समझ, इस बचन से, लेनी चाहिये कि जब कभी भजन में नापाक गुनावन और बुरे

ख्याल या अपवित्र और पाप की भरी हुई तरंगें बारम्बार उठें, तो ऐसी हालत में भजन कम कर देना चाहिए और बजाय उसके, ध्यान का अभ्यास ज़्यादा करना चाहिये, और संत संग्रह भाग पहिले में से काम, क्रोध, और मन-माया और साध और मृतक का अंग पढ़ कर, और उसके मतलब को विचार कर, अपने मन को धिक्कार देकर समझना चाहिए, कि आइन्दा अपवित्र और ना-मुनासिब तरंगें न उठावे, और राधास्वामी दयाल और सतगुरु की अप्रसन्नता और पाप कर्मों के दुखदाई फल का डर दिला कर, मन को होशियार और सफ़ाई की तरफ़ रुजू करना चाहिये। जब मन सफ़ाई और प्रेम के साथ कार्रवाई करने लगे, तब भजन का वक़्त जिस क़दर मुनासिब हो बढ़ा दिया जावे, नहीं तो ध्यान का अभ्यास व-दस्तूर ज़्यादा किया जावे, और उसके बाद, थोड़ी देर के वास्ते भजन का अभ्यास भी जारी रहे।

२२—जिस किसी की ऐसी हालत है कि जब भजन में बैठे तब ही नाक़िस और ना-मुनासिब तरंगें उसके मन में प्रकट होकर उसके भजन को ख़राब करती हैं, और शब्द का रस नहीं लेने देती, और वह शख़्स उन तरंगों को अपने बल से नहीं रोक सकता या विषयों के ख्याल के आधीन होकर उन तरंगों को रोकना नहीं चाहता, तो उसको चाहिये कि भजन बिलकुल मौक़ूफ़ कर दे, या सिर्फ़

दस मिनट करे और मन और माया और काम क्रोध वग़ैरा के अंगों का पाठ, समझ २ कर संत संग्रह भाग पहिले में से रोज़मर्रा करे, और भी शब्द हुकमनामे को "चेतो मेरे प्यारे तेरे भले की कहूँ", रोज़ दो मर्तवा पढ़े, और सिर्फ़ सुमिरन और ध्यान करता रहे, और जब तक इस अभ्यास से मन और सुरत उसके किसी क़दर निर्मल और साफ़ न होवें, तब तक शब्द का अभ्यास यानी भजन मुल्तवी रक्खे, और संसार में और परमार्थ में बहुत होशियारी और डर के साथ बर्ताव करे, कि जिसमें पाप कर्म उससे न बनें, और न उनके ख़्याल अन्तर में उठें, नहीं तो भारी हर्ज उसके परमार्थ की कमाई में होगा।

बचन २४

वर्णन निर्मल और कपट या लपेट की भक्ति का

१—निर्मल भक्ति उस सच्चे प्रेम को कहते हैं, जो सच्चे मालिक के चरनों में, उसके दर्शन की प्राप्ति के निमित्त, सच्चे दर्दी परमार्थी के मन में पैदा होवे, और सतगुरु और साध यानी प्रेमी जन का संग करके दिन २ बढ़ता जावे।

२—कपट और लपेट की भक्ति उसको कहते हैं, कि जो किसी दुनिया के मतलब के हासिल होने के निमित्त, या सिद्धि और शक्ति की प्राप्ति की आस धर कर, या किसी के दबाव से, या किसी की नाराजगी, या किसी क़िस्म के

नुक़सान के डर से, या किसी की ख़ातिरदारी और ख़ुशामद, या उसको अपनी तरफ़ मुतवज्जह करने की ग़रज से, संत सतगुरु या मालिक के चरनों में की जावे। ऐसी भक्ति जब कोई मतलब पूरा हो जावेगा या जब कि दबाव और डर नही रहेगा, तब घट जावेगी, या बिलकुल जाती रहेगी।

३—निर्मल भक्ति चाहे थोड़ी हो या कच्ची हो, वह सतगुरु और प्रेमी जन के सतसंग और अन्तर अभ्यास की मदद से दिन २ बढ़ती और पकती जावेगी, और सच्चे मालिक और सतगुरु की दया, उस भक्त पर, दिन २ बिशेष होती जावेगी, और उसका असर अन्तर और बाहर वह सच्चा भक्त देखता जावेगा, यानी अभ्यास में रस और आनन्द और परचे मिलते जावेंगे और अन्तर और बाहर रक्षा और सम्हाल होती हुई उसको मालूम होती जावेगी।

४—कपट और लपेट की भक्ति करने वाला अन्तर अभ्यास बहुत कम करेगा, लेकिन बाहर की कार्रवाई में बड़े शौक़ और जोश के साथ शामिल होवेगा और अपने मतलब के, थोड़ा-बहुत हासिल हो जाने को ही दया समझ कर, आइन्दा को कार्रवाई ढीली या बन्द कर देगा।

५—संतों के सतसंग में सिर्फ़ कुल्ल मालिक सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल की महिमा और उनके दर्शन और धाम

की प्राप्ति के निमित्त जो जतन कि मुक़र्रर किया गया है, उसी का वर्णन किया जाता है और उस सतसंग की रक्षा कुल्ल मालिक आप करते हैं। इस सबब से, जो जीव कि सच्ची और निर्मल भक्ति करते हैं, उनको, मदद और तरक़्क़ी दिन २ मिलती जाती है और जो कि कपट और लपेट की भक्ति करते हैं, उनको, सतसंग में बराबर ठहराने की मौज नहीं होती है, क्योंकि सतसंग को गदला करना मंजूर नहीं है। लेकिन ऐसे जीवों के हिरदे में सच्चे परमार्थ का बीजा डालना मंज़ूर है और इस वास्ते जब तक कि वे लपेट की भक्ति के आसरे सतसंग में शामिल रहें, तब तक उनको बचन सुना कर, बहुत कुछ गढ़त उनके मन और बुद्धि की, की जाती है और जो थोड़ा-बहुत भी भाग्यवान परमार्थ का है, तो जहाँ तक मुमकिन होता है, संत सतगुरु अपनी मेहर और दया से, कपट और लपेट को हटा कर उसकी भक्ति निर्मल कर देते हैं। और फिर वह भी सच्चे और निर्मल प्रेमियों में शामिल होकर, अपने घट में अभ्यास का रस और आनन्द लेकर, और निर्मल परमार्थ की क़दर और महिमा जान कर, और अपनी पिछली हालत पर शरमा कर, और पछता कर, सच्ची भक्ति में दिल और जान से क़दम रखता है, और अपने सच्चे मालिक और सतगुरु को रिझाने, और अपने ऊपर मुतवज्जह करने का शौक़, दिन २ उसके दिल में बढ़ता जाता है।

६—इस वास्ते भक्तों की चार क़िस्में मुक़र्रर करी हैं—पहिला, गुरुमुख, कि जिसको सतगुरु की किसी क़दर पहिचान और परख आई, और तन, मन, धन से पूरी भक्ति कर रहा है। दूसरा, खोजी परमार्थी, कि जो सच्ची और निर्मल चाह परमार्थ की लेकर सतगुरु के चरनों में आया और सतसंग करके दिन २ अपनी समझ-बूझ और प्रेम और अभ्यास को बढ़ाता जाता है। तीसरा, आरथी जो कोई तकलीफ़ या बीमारी या किसी क़िस्म के दुख और कलेश से निहायत दुखी होकर, चरनो में आया और वास्ते दूर होने दुख के दया माँगता है, और हित-चित से सतगुरु का दर्शन करता है और बचन सुनता है, और जब मौज से उसकी तकलीफ़ या रोग दूर हो गया, तब परमार्थ की महिमा समझ कर निर्मल भक्ति करने लगा, और फिर वह भी सच्चे परमार्थियों के गोल में दाखिल हो गया। और चौथा, स्वार्थी, जो कि दुनिया के कोई मतलब या काम बनाने के इरादे से संतों के सतसंग में आया, और होशियारी से बचन सुनता रहा, और सच्चे भक्तों के साथ भक्ति के सर्व-अंगों में शौक़ के साथ बर्ताव करता रहा, और जब मेहर और दया से वह काम उसका थोड़ा-बहुत बन गया, तब उमँग के साथ सच्चा और निर्मल परमार्थ कमाने लगा और दुनिया के मतलब और कामों को तुच्छ और ओछा देख कर, अपनी पिछली सकाम

भक्ति की हालत पर अफ़सोस करके, आइंदा को निर्मल भक्ति करने लगा और सच्चे प्रेमी और भक्तों के ग़ोल में दाख़िल हो गया।

७–आरथी और स्वार्थी जीवों को, भक्तों की ज़ैल में इस सबब से दाख़िल किया कि इन में से बाज़े, सच्ची और निर्मल भक्ति में शामिल हो जाते हैं, और बहुतेरे अपनी आसा पूरन होने पर सतसंग छोड़ कर चले जाते हैं। जो सतसंग से अलेहदा हो गये, उनके भी बीजा पड़ जाता है, और कुछ अर्से बाद इसी जनम में, उनको सच्चा परमार्थी बना कर, सतसंग में मिला देता है, और नहीं तो दूसरे जनम में ज़रूर सच्चे परमार्थी बन कर, और सतगुरु के सतसंग में शामिल होकर कमाई करेंगे।

८–जीवों को मुनासिब है कि अपने मन की हालत दरियाफ़्त करके जहाँ तक मुमकिन होवे, सच्ची और निर्मल भक्ति, कुल मालिक राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु के चरनों में करें, यानी दाता से दाता ही को माँगें और दात पर सिवाय इस क़दर कि जो वास्ते औसत दरजे के गुज़रान के ज़रूरी है, ज़्यादा तवज्जह न करें, तो मन और सुरत उनके निर्मल होते हुए, अंतर में चरनों की तरफ़ चलेंगे, और एक दिन माया के घेर से निकल कर निर्मल चैतन्य यानी निर्माया पद में पहुँच कर, परम आनंद को प्राप्त होंगे। और जो आसा सिर्फ़ दात की रही

और वह दात माया के पदार्थ हैं, और हमेशा क़ायम नहीं रह सकते, तो जो थोड़ी-बहुत दात मिली भी, तो वह ठहराऊ न होगी, और न उसका भोग सदा एक-रस प्राप्त होगा, और आख़िर को नतीजा यह होगा कि जिस ने दात चाही और दाता का निरादर किया, तो उसको न दाता मिला और न दात का पूरा २ सुख मिला, और लपेट की भक्ति की कमाई मुफ़्त बरबाद गई।

६—अब समझना चाहिए कि जितने भोग, मन और इन्द्रियों के हैं, वह सब जड़ और नाशमान हैं, और माया देश की रचना में शामिल हैं। फिर जो कोई उनकी प्राप्ति के लिए जतन करेगा या तरंग उठावेगा, वह भी माया देश में रहेगा। इस सबब से देहियों के दुख-सुख और जनम-मरन की तकलीफ़ से उसकी रिहाई हरगिज़ नहीं होगी। इस वास्ते कुल्ल जीवों को मुनासिब और लाज़िम है, कि संसार के भोगों की चाह, ज़रूरत के मुवाफ़िक़, उठावें, और ज़रूरत के मुवाफ़िक़, उनकी सम्हाल और रक्षा करें, और उनकी असली हालत और क़ैफ़ियत को समझ कर, उनमें ऐसा भरोसा, और चित्त का बंधन, पैदा न करें कि जिससे उन्हीं की प्राप्ति के निमित्त चाह उठाना और जतन करना फ़र्ज़ समझें, और वही आसा, सतसंग में और मालिक के चरनों में, हर दम पेश करें, क्योंकि जो उनके मन और बुद्धि की ऐसी हालत रही, तो उनकी सुरत, माया

के संग लिपटी रहेगी और भूल और भरम दिन २ बढ़ते जावेंगे, और परमार्थ की महिमा और उसकी क़दर उनके चित्त में कभी नही समावेगी, और इस में बहुत भारी हर्ज और नुक़सान उनके परमार्थ का होगा।

१०—जो जीव कि इस बचन को मान कर उसके मुवाफ़िक़ कार्रवाई शुरू कर देंगे, वे अलबत्ता सच्चे परमार्थ की दौलत पावेंगे, और उन्हीं को सच्चा परमार्थी समझना चाहिए। और बाक़ी के जीव, जो जगत की आसा नहीं छोड़ना चाहते हैं, और संसारी पदार्थों और भोगों में आसक्त रहते हैं, उन्हीं का नाम दुनियादार है, और जब तक वे, संतों के बचन के मुवाफ़िक़, कार्रवाई नहीं करेंगे, तब तक वे, मन और माया के जाल में फँसे रहेंगे और उद्धार नहीं होगा।

बचन २५

सच्चे परमार्थ की कमाई के वास्ते, सच्ची और निर्मल चाह, और प्यार ख़ौफ़ ज़रूर है, और जो यह बातें न होंगी, तो जो कुछ कार्रवाई परमार्थ की की जावेगी, वह कर्म में दाख़िल होगी, प्रेम और भक्ति की तरक़्क़ी नहीं होगी

१—दुनिया में, विचित्र रचना हर एक खान की, यानी क़िस्म २ के जीव और बनस्पति वग़ैरा को देख कर, सोच और ग़ौर करने वाले मनुष्य को, बहुत भारी तमाशा कुल्ल मालिक की क़ुदरत का नज़र आवेगा, और ऐसे ही आसमानी रचना सूरज और चाँद और तारागण की, और उनका दौरा कि जो सैकड़ों और हज़ारों वर्षों में ख़तम होता है, और चाल जो कि क़ायदा मुक़र्रर पर बराबर बे-शुमार वर्षों से चली आई है, और जारी रहेगी, देख कर, भारी अचरज और रोब और दबदबा कुल्ल मालिक की महा बड़ाई और महा कारीगरी और महा शक्ति का, दिल में पैदा होगा। ऐसी भारी क़ुदरत और ताक़त, और ऐसे ऊँचे दरजे की रोशनी नज़र आवेगी कि उसको देख कर अक़्ल हैरान होगी, और दृष्टि की ताक़त नहीं कि अदना दरजे के नूर और रोशनी को भी बरदाश्त कर सके। ऐसी क़ैफ़ियत और हालत रंग-बरंग रचना की देख कर, दिल बहुत जोश और शौक़ के साथ चाहेगा कि उस क़ुदरत का तमाशा नज़दीक से नज़दीक पहुँच कर देखे, और रात-दिन उसी की सैर करता रहे और उस सच्चे कुल्ल करतार यानी मालिक के सन्मुख पहुँच कर, दर्शन का बिलास और आनन्द हासिल करे।

२—और जब ऐसा सोच और विचार वाला मनुष्य दुनिया के समान की नाशमानता, और दूसरे हाल पर

नज़र करेगा, तो उसका दिल एकाएक ख़ौफ़ लाकर ठंडा होकर भिच जावेगा, और यहाँ के सामान और कारख़ाने को दिल लगाने के लायक़ न देख कर, खोज और तलाश इस बात की शुरू करेगा, कि उस कुल्ल मालिक का देश कहाँ है, और वह मालिक कैसा है, और कैसे मिले, और जनम-मरन और दुख-सुख के घेरे से निकल कर, कैसे पार पहुँचे, और अमर और परम आनन्द देश को कैसे प्राप्त होवे।

३—जब ऐसा शौक़ देखने, सैर मालिक की क़ुदरत का, और भी उसके दर्शनों का, और ऐसा ख़ौफ़ इस संसार की हालत और कार्रवाई दुख-सुख और जनम-मरन की कैफ़ियत का देखकर, मन में पैदा होवे, उस को सच्चा खोज और दर्द परमार्थ का कहते हैं। ऐसे सच्चे खोजी को, अबेर-सबेर, यानी जल्द या थोड़े अर्से के बाद, ज़रूर संत सतगुरु जो कुल्ल मालिक और उसके भेद से वाक़िफ़ हैं, और नित्त उसके धाम में जाकर दर्शन का रस और आनन्द लेते हैं, मिलेंगे, और भेद रास्ते का, और जुगत चलने की, बता कर अपनी मेहर और दया से उसको सब कैफ़ियत क़ुदरत की दिखलाते हुए, एक दिन निज घर में पहुँचा देंगे। जिसके दिल में ख़ौफ़ और शौक़ इस क़िस्म का, जैसा कि ऊपर ज़िकर हुआ, पैदा हुआ है, वही सच्चा खोज, सच्चे मालिक का, करेगा और कुल्ल मालिक की दया और सतगुरु की मदद से रास्ता उसका जारी हो जावेगा।

४—ऐसे खोजी को, जिस वक़्त संत सतगुरु भेद के बचन सुनावेंगे, और जुगत चलने की समझावेंगे, तब उस खोजी को ज़रूर अंतर और बाहर एक क़िस्म का रस और आनन्द प्राप्त होगा, और उस रस और आनन्द की चाट पाकर, दिन २ वही ख़ौफ़ और शौक़ बढ़ता जावेगा, और उस खोजी से कमाई यानी अभ्यास ज़्यादा कराता जावेगा, और थोड़े अर्से में, वह अभ्यासी, अपनी हालत अंतर और बाहर बदलती हुई देख कर, मगन होता जावेगा।

५—जब तक इस क़िस्म का ख़ौफ़ और शौक़ या दोनों में से एक, किसी के दिल में पैदा न होगा, तब तक उसको सतसंग में रस नहीं आवेगा, और न उस का मन अभ्यास की तरफ़ तवज्जह करेगा, बल्कि इस संसार को ही अपना देश, और देह-ख़ाक़ी को अपना स्वरूप समझ कर, भोगों में उसका झुकाव रहेगा, और दुनिया प्यारी लगेगी, और इस सबब से देह के सम्बन्धी दुख-सुख और जनम-मरन की तकलीफ़ उसको हमेशा भोगनी पड़ेगी।

६—अब समझना चाहिये कि यह संसार और उसके सब पदार्थ और भोग, और यह देह और इन्द्रियाँ वग़ैरा, सब नाशमान हैं, यानी हमेशा इनका रंग और रूप बदलता रहता है, और इसमें दुख और कलेश विशेष और सुख थोड़ा है, और चाहे किसी राजा और महाराजा और सेठ या साहूकार को सर्व-भोग और सर्व-पदार्थ, इस संसार में,

हासिल भी हो जावें, तो भी वक़्त मौत के, एक दम ज़बर-दस्ती छोड़ने पड़ेंगे, और उस वक़्त भारी दुख उनके वियोग का सहना पड़ेगा, और आइन्दा कर्मों के मुवाफ़िक़, नीच-ऊँच जोनों में भरमना और नाक़िस करनी का फल भोगना पड़ेगा, और वहाँ ऐसी हालत में कोई उसका सहाई और मददगार न होगा।

७—इस वास्ते कुल्ल जीवों को चाहे औरत होंवे या मर्द, मुनासिब और लाज़िम है कि थोड़ा-बहुत ख़ौफ़ और शौक़, कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के चरनों का, अपने जीव के कल्यान के निमित्त, अपने दिल में पैदा करें, और संत मत के मुवाफ़िक़ प्यार और डर के साथ थोड़ी-बहुत कार्रवाई, सुरत और मन को आकाश में और उसके परे चढ़ाने की, करें। इससे उन जीवों पर सच्चे और कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल की दया आवेगी, और आहिस्ता २ उनके जीव का कारज बनना शुरू हो जावेगा, और एक दिन धुर धाम में पहुँच कर परम आनन्द को प्राप्त हो जायँगे।

८—जिस-किसी के मन में थोड़ा भी प्रेम और भाव सतगुरु और मालिक के चरनों में, आवेगा, तो सतगुरु और कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल उसको आहिस्ता २ अपनी दया से बढ़ाते जावेंगे, और जब वह प्रेम और भक्ति

गहरे हो जावेंगे, तब वह जीव विशेष दया का अधिकारी हो कर, रफ़्ता २ एक दिन परम पद में पहुँच जावेगा।

६—ऐसा प्यार और भाव और ख़ौफ़, कुल्ल मालिक और सतगुरु और सतसंग की महिमा सुन कर, और उस सतसंग में शामिल होकर, आवेगा, क्योंकि वहाँ पर हर क़िस्म के बचन सुनने और समझने में आवेंगे, और उनके असर से मन और चित्त की मलीनता दूर होती जावेगी, और घट में सफ़ाई और रोशनी बढ़ता जावेगी, और ना-मुनासिब जगह या पदार्थों में उसकी प्रीत दिन २ घटती जावेगी।

१—जो सच्चा ख़ौफ़ या सच्चा प्रेम मालिक के चरनों में, या सतगुरु की तरफ़ दिल में नहीं पैदा हुआ है, तो न सतसंग दुरुस्ती से बनेगा और न अभ्यास में मन लगेगा, और इस वास्ते जो यह करतूत की भी जावेगी, तो वह नेम-मात्र या दिखलावे के लिए, या कोई और मतलब से की जावेगी, और उसमें परमार्थी फ़ायदा बहुत कम मिलेगा, क्योंकि वह करम में दाख़िल होगी, भक्ति और प्रेम में नहीं शुमार हो सकती है।

११—भक्ति और प्रेम-अंग के साथ जो काम किया जावे, और उसमें कोई वासना या आसा संसारी मतलब की, न होवे तो वह करतूत मालिक के दरबार में क़बूल और मंजूर होती है, और उसके एवज़ में दया और मेहर

आती है कि जो दिन २ प्रेम और भक्ति को बढ़ाती है और संसार और उसके पदार्थों की तरफ़ से सहज में चित्त उदास होता जाता है।

१२—लेकिन जो करतूत परमार्थी, संसारी कामना लेकर या दिखावे या नेम के तौर पर की जावे, तो उस में सुरत और मन शामिल नहीं होंगे या यह कि वह करतूत भक्ति-अंग से ख़ाली होगी और इस वास्ते सिर्फ़ कर्म का फल उसमें मिलेगा।

१३—हर एक परमार्थी को मुनासिब है कि अपनी चाह और प्यार की जाँच करता रहे कि यह कोई संसारी मतलब के सबब से तो पैदा नहीं हुए हैं, या उसकी वजह से इन में कमी और ज़्यादती तो नहीं हुई है।

१४—जब कभी ऐसा शक गुज़रे या थोड़ी-बहुत मिलौनी मालूम पड़े, तो फ़ौरन अपने मन की सफ़ाई करे, यानी संसारी अंग को, परमार्थ की चाह और प्यार से निकाल देवे, नहीं तो उसका परमार्थ गदला रहेगा और जैसी चाहिये तरक़्क़ी नहीं होगी, यानी सच्चे मालिक और सतगुरु को ख़ास प्यार और दया उस पर नहीं आवेगी और यह भारी नुक़सान की बात है।

१५—ख़ौफ़ चाहे किसी सबब से पैदा हुआ होवे, जो वह जीव को परमार्थ की तरफ़ मुतवज्जह करे, तो उस

हालत में जो परमार्थी करतूत, जैसे सतसंग और सेवा और ध्यान और भजन और सुमरन और पाठ वग़ैरा बन पड़ेगा, वह सच्ची भक्ति में दाख़िल होगा, यानी कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल और सतगुरु उस करतूत को सच्ची परमार्थी कार्रवाई में दाख़िल फ़रमा कर, उसके एवज़ में, प्रीत और प्रतीत की दात बख़्शेंगे, और यह दात जीव को सच्चा परमार्थी बनावेगी, और उसकी परमार्थी कार्रवाई को दिन २ बढ़ावेगी, और कुल्ल मालिक और सतगुरु के चरनों में सच्चा प्यार और भाव उसके हिरदे में पैदा कर देगी। इस वास्ते जो ख़ौफ़ कि जीव को परमार्थ में लगावे, चाहे वह किसी क़िस्म का है, हमेशा मुबारक है, और जिस किसी के दिल में वह पैदा होवे, वही बड़भागी जीव है, और उसी का परमार्थी कारज एक दिन दुरुस्त बन जावेगा।

१६—यह कड़ी इस जगह मुनासिब और ज़रूर मालूम होती है।

डर करनी डर परम गुरु, डर पारस डर सार।
डरत रहे सो ऊबरे, ग़ाफ़िल खाई मार॥

इस कड़ी के अर्थ यह हैं कि डर जिस किसी के दिल में आया, वह करनी का फल देगा, यानी ज़रूर जीव से परमार्थी करनी करावेगा, और नाक़िस कामों से बचावेगा। इस वास्ते, वह डर ऐन करनी रूप है और वही डर गुरु स्वरूप है कि हिरदे में जीव के, बैठ कर उससे भलाई और बुराई का तमीज़ कराके, भलाई के कामों में लगावेगा

और कुल्ल मालिक के चरनों में दिल-ओ-जान से सेवा करावेगा, और दिन २ प्यार और भाव पैदा करके बढ़ावेगा। और फिर वही डर हिरदे की सफ़ाई करता हुआ उसको लोहे से कंचन बनावेगा। और फिर वही डर सार, यानी कुल्ल का, खुलासा और जौहर है। जिसके हिरदे में वह बैठा, उस को सर्व-अंग से निर्मल करके, जौहर-कुल्ल से मिला देगा।

१७—जिस किसी के दिल में ऐसा डर पैदा हुआ, वही माया के घेर के पार जावेगा और उसी का सच्चा उबार समझना चाहिये कि निर्मल चैतन्य यानी निर्माया देश में पहुंच कर अपने सच्चे माता-पिता कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल का दर्शन पाकर परम आनन्द को प्राप्त होगा।

१८—और जिस किसी के दिल में किसी क़िस्म का ख़ौफ़ नहीं पैदा हुआ, वह बेहोश और ग़ाफ़िल रहेगा, यानी जो करतूत कि अपने फ़ायदे के वास्ते उसको करना चाहिये, वह नहीं करेगा, और इस सबब से नुक़सान उठावेगा और अपने पाप कर्मों का फल दंड भोगेगा।

१६—ख़ौफ़ में भी दरजे हैं। पहिले, बालकपन में माता-पिता का डर जीव को फ़ायदे की तरफ़ मुतवज्जह करेगा और नुक़सान से बचावेगा। इससे ज़्यादा उमर में, उस्ताद का डर जीव के हक़ में मुफ़ीद होगा, यानी उसकी बुद्धि को रोशन करेगा, और समझ-बूझ और नेक और बद की तमीज़ को जगावेगा, और जब विद्या और बुद्धि

हासिल हो गई, तब हाकिम और बिरादरी का डर जीव को संसार और व्यवहार में सीधे रास्ते पर चलावेगा, यानी वाजिबी तौर पर कार्रवाई करना सिखावेगा, और जब दुनिया का हाल और उसकी ना-पायदारी (नाशमानता) और पदार्थों की तुच्छ कैफ़ियत की थोड़ी-बहुत ख़बर हुई, तब सतगुरु का उपदेश और ख़ौफ़ जीव को परमार्थ की तरफ़ लगावेगा, और संसार और भोगों की तरफ़ से हटाता जावेगा, और जब थोड़ा-बहुत अंतरी अभ्यास बन आवेगा तब कुल्ल मालिक का ख़ौफ़ इसकी तवज्जह को चरनों की तरफ़ खींचेगा, और संसार और उसके सामान की तरफ़ से (जो कि एक दिन ज़रूर छोड़ना पड़ेगा) इसके चित्त को उदासीन और बे-परवाह कर देगा, और तब इस का परमार्थी काम सब तरह दुरुस्त हो जावेगा, और तब वह कुल्ल से सच्चा निडर हो जावेगा।

२०—जो कोई दरजे-बदरजे इन ख़ौफ़ों में, जिनका ज़िक्र ऊपर हुआ, नहीं बरता और जिसकी चाल-ढाल निडर के तौर पर रही है, वह गुरू और मालिक का भी ख़ौफ़ नहीं मानेगा, और इन दोनों जगह निडरताई के साथ बर्ताव करने में उसका सरासर नुक़सान होगा। नहीं तो जिस किसी के दिल में सच्चा ख़ौफ़ गुरू और मालिक का आया, वह उनकी दया के प्रताप से एक दिन तमाम रचना से निडर हो जावेगा।

२१–माँ, बाप और उस्ताद और हाकिम और बिरादरी का डर संसारी है, और दुनिया की कार्रवाई दुरुस्ती के साथ कराने के वास्ते ज़रूर दरकार है। लेकिन परमार्थ में सिर्फ़ गुरू और मालिक का डर काफ़ी है। वह सब काम बना देगा और उसके मुक़ाबले में संसारी डर को पेश करना, या उसके सबब से परमार्थी कार्रवाई में या गुरू और मालिक के हुक्म के बर्ताव में कसर करना, या उनको छोड़ देना, निहायत ना-मुनासिब और ना-दुरुस्त है। और ऐसे संसारी डर के मानने वाले का भारी नुक़सान परमार्थ का होता है।

२२–इस जगह पर इस क़दर बयान करना ज़रूर है कि इस बचन में जहाँ-कहीं लफ़्ज़ परमार्थ और गुरू का आया है, वहाँ मतलब सच्चे और पूरे परमार्थ और सच्चे और पूरे गुरू से है, और ऐसा परमार्थ और ऐसे गुरू सिर्फ़ सत मत में कि वही कुल्ल रचना में सत्त मत है, मिल सकते हैं।

बचन २६

सतसंग, अंतर और बाहर, सम्हाल कर करना चाहिये, तब फल और फ़ायदा उसका प्रकट होगा

१–सच्चे परमार्थी को मुनासिब है कि सतसंग होशियारी से करे, तब उसका फ़ायदा उसको प्रत्यक्ष मालूम होगा।

२—जब बाहर के सतसंग में शामिल होवे, तब चाहिये कि अपने नेत्रों से गुरु या साधके नेत्रों को (जो सतसंग के अधिष्ठाता यानी अफ़सर हैं) दृष्टि जोड़ कर ताकता रहे, चाहे वे उसकी तरफ़ देखें या नहीं, और फिर चंद मिनट बाद, मध्य में दोनों आँखों के, यानी तीसरे तिल का ख़्याल करके, दृष्टि को जमावे। जो इस तरह अभ्यास करने में आँखें पूरी २ खुली न रहें तो कुछ हर्ज नहीं।

३—इस तरह दृष्टि जोड़ के बैठने में दर्शन का भी रस आवेगा और बचन भी कुछ कैफ़ियत के साथ सुनने में आवेंगे यानी उनके अर्थ साफ़ और गहरे समझ में आवेंगे, या यह कि उनके अर्थ का असर दिल पर ज़्यादा होगा और वे प्यारे लगेंगे।

४—इस तरह की बैठक, ध्यान के अभ्यास में शुमार की जाती है, और इस क़दर एहतियात चाहिये कि कोई दूसरा ख़्याल, किसी क़िस्म का, दिल में न आवे, बल्कि जैसा कि बचन सुनता जावे, उसको उसी वक़्त अपने ऊपर घटा कर, अपने मन की हालत की जाँच करता जावे यानी विचार करे कि कौन अंग ना-मुनासिब उसके मन में धरा है, या बर्ताव में आता है, और उसका नुक़सान उसी वक़्त समझ कर, उसको सच्चे मन से त्याग करे, और जो अँग बेहतर और माक़ूल बचनों के मालूम होवे, उसकी बड़ाई अपने अंतर में उसी वक़्त तौल कर सच्ची ख़्वाहिश के साथ ग्रहण करता जावे।

५—इस तौर पर इस अभ्यास की हालत में नाक़िस अंग के छोड़ने की ख़्वाहिश और माक़ूल यानी बेहतर अंग के ग्रहण करने की सच्ची चाह का असर दिल पर बहुत मज़बूत होता है। पर शर्त यह है कि इसी तरह पर मनन और विचार बचनों का, जो वक़्त सतसंग के सुनने में आवें, हर रोज़ जारी रहे, तो कोई दिन में बहुत सफ़ाई मन की हासिल होवेगी, और अपने हाल की निरख और परख की ताक़त बचन सुनते २ आती जावेगी, और उसका यह फ़ायदा होगा कि सिवाय सतसंग के, और वक़्तों में भी, अपने मन की चाल की ख़बर और उसकी सम्हाल थोड़ी-बहुत होती रहेगी, और रफ़्ता २ इस अभ्यास से होशियारी और सम्हाल की ताक़त बढ़ती जावेगी, और ग़फ़लत और भूल घटती जावेगी।

६—जब कोई दिन इस तौर पर बाहर का सतसंग जारी रहेगा, तो अंतर का सतसंग भी किसी क़दर दुरुस्त हो जावेगा, यानी ध्यान के वक़्त, मन और सुरत चंचलता छोड़ कर, स्वरूप और नाम में, और वक़्त भजन के, शब्द में एकाग्र होकर थोड़ी देर को जमने लगेंगे, और जब कोई गुनावन या किसी क़िस्म के ख़्यालात पैदा होंगे, तो अभ्यासी को जल्द उनकी ख़बर हो जावेगी, और अपनी सम्हाल थोड़ी सी कोशिश से कर सकेगा, यानी उन ख़्यालों को आसानी से दूर कर सकेगा। इसी तरह रफ़्ता २ ध्यान और

भजन का रस थोड़ा २ मिलना शुरू हो जावेगा और आइंदा को तरक़्क़ी होती जावेगी।

७—और जो कि ऐसे अभ्यासी को घंटे-दो-घंटे बाहर के सतसंग में बैठा कर, मन और सुरत के सिमटाव और जमाव का रस लेने की आदत हो जावेगी, तो जब सतसंग से अलेहदा होगा, तब उसी वक़्त जो वह ध्यान और भजन करेगा, तो ज़रूर उसके मन और सुरत, आदत के मुवाफ़िक़, अंतर में थोड़े-बहुत निश्चल होकर अभ्यास का रस हासिल करेंगे, और यही अभ्यास और आदत, रस और आनन्द के आसरे, आहिस्ता २ बढ़ती जावेगी, और दिन २ हालत भी बदलती जावेगी।

८—मालूम होवे कि अंतर के सतसंग में अभ्यासी को इस क़दर एहतियात और होशियारी दरकार है कि भजन के वक़्त, मन और सुरत, जिस क़दर मुमकिन होवे, धुन का रस लेते रहें, और ध्यान के वक़्त नाम और स्वरूप में स्थिर होकर सिमट जावें, और थोड़ा-बहुत सिमटाव और जमाव का रस पावें, लेकिन यह हालत अंतर के सतसंग की, उस वक़्त हासिल होगी कि जब अभ्यासी, गुनावन और ख़्यालों को छोड़ कर, धुन और रूप में लगेगा।

९—जो शौक़ तेज़ है और भोगों की तरफ़ से किसी क़दर चित्त में बैराग है, तो मन और सुरत जल्द सिमट कर काम में लग जावेंगे। नहीं तो बाहर का सतसंग जो

इस तरकीब से कि जो ऊपर लिखी गई, किया जावेगा, उससे बहुत मदद अंतर के सतसंग में, वास्ते एकाग्र करने मन और सुरत के, मिलेगी यानी अंतर का सतसंग व अभ्यास किसी क़दर दुरुस्ती से बन पड़ेगा, और आइन्दा आहिस्ता २ तरक़्क़ी भी होती जावेगी।

१०—और जो सच्चे परमार्थी जीव शौक़ भी तेज़ रखते हैं, और किसी क़दर दुनिया से बैराग भी उन के चित्त में है, और मौक़ा पाकर, बाहर का सतसंग, ऊपर की लिखी हुई तरकीब के मुवाफ़िक़ करेंगे, तो उनको, दोनों सतसंग में यानी अंतर और बाहर, ज़्यादा रस मिलेगा और मन और सुरत उनके, जल्द उमंग के साथ अभ्यास में लगेंगे और तरक़्क़ी भी ज़्यादा होती जावेगी।

११—ऊपर की तरकीब के मुवाफ़िक़ जो कोई परमार्थी जीव सतसंग करेंगे, उनकी हालत ज़रूर बदलती जावेगी, यानी उन पर सतसंग का रंग चढ़ता जावेगा, और नतीजा उसका यह होगा कि दिन २ सतगुरु और सच्चे मालिक राधास्वामी दयाल के चरनों में प्रीत और प्रतीत बढ़ती जावेगी, और दुनिया और उसके सामान और उसका कारखाना, दिन २ उनकी नज़र में फीका पड़ता जावेगा, और उस तरफ़ से तवज्जह हटती जावेगी, यानी ज़रूरत के मुवाफ़िक़ कि जिसमें दुनिया में गुज़ारा, औसत दरजे पर हो जावे, तवज्जह दुनिया के कारोबार में रहेगी, और फ़िज़ूल

चाह और फ़िज़ूल कोशिश उसके कामों में दूर हो जावेगी।

१२—इसी तरह दिन २ ऐसे परमार्थियों की मालिक के चरनों में नज़दीकी, और मन और इन्द्रियों के घाट से (यानी दुनिया से) अंतर में किसी क़दर दूरी होती जावेगी।

१३—यही मतलब सतसंग या परमार्थ की कमाई का है, और सच्चे परमार्थियों को यह कैफ़ियत सच्चे मालिक की दया से ज़रूर हासिल होती जावेगी। इसकी परख वे आप ब-ख़ूबी कर सकेंगे, और कुछ थोड़ी सी उन लोगों को भी, जो रात दिन शुरू से उनके संग रहते हैं, ख़बर पड़ेगी।

१४—मालिक के चरनों में प्रेम की तरक़्क़ी का हाल निकटवर्ती लोगों को ठीक नहीं मालूम हो सकेगा, लेकिन दुनिया और उनकी तरफ़ से अभ्यासी के चित्त के हटाव का हाल, उनको थोड़ा-बहुत ज़रूर मालूम हो जावेगा।

१५—जो वे भी थोड़े-बहुत परमार्थी हैं, तो ऐसी हालत अपने प्यारे रिश्तेदार की देख कर ख़ुश होंगे और उस में प्यार और भाव ज़्यादा लावेंगे, और जो वे संसारी हैं तो ऐसी हालत देख कर, अपने रिश्तेदार से नाराज़ होवेंगे, और उसके परमार्थ की शिकायत करेंगे, और आप उसके साथी न होंगे।

१६—जो लोग कि सतसंग करते हैं, पर न तो दर्शन में चित्त लगाते हैं, और न बचन चेत कर सुनते हैं, उनकी हालत, बहुत सुस्ती के साथ, देर में बदलेगा। जब २ कोई

बचन सुनने में आ जावेगा और उसका थोड़ा-बहुत असर दिल पर होवेगा, सो थोड़े अर्से के लिए, तवज्जह और मेहनत के साथ अभ्यास करेंगे, और कुछ फ़ायदा भी हासिल होगा, लेकिन जब उस बचन का असर कम हो जावेगा, तब करनी के भी ढीले होते जावेंगे। फिर कोई दिन बाद, जब मुनासिब मौक़ा (मौज) और शामिल होने बड़े आदमियों के सतसंग में कोई बचन चित्त देकर सुनेंगे, फिर शौक़ के साथ करनी शुरू करेंगे, और थोड़े दिन बाद फिर ढीले हो जावेंगे, लेकिन जो मौज से सतसंग कभी २ ज़ोर-शोर के साथ होता रहा, तो यह लोग भी होशियार होते रहेंगे, और रफ़्ता २ अपनी कार्रवाई दुरुस्ती से करने लगेंगे, और तब उनकी भी हालत बदल जावेगी यानी परमार्थ का रंग चढ़ता जावेगा।

१५७—कोई २ ऐसे जीव भी सतसंग में आते हैं कि वे बचनों के वक़्त या तो गुनावन करते रहते हैं, या दूसरे से आहिस्ता २ बातें करते रहते हैं, और जो यह काम न करें तो सो जाते हैं। इन जीवों की हालत ज़्यादा देर के बाद बदलेगी यानी पहले, उनका चित्त कोई दिन में दर्शन और बचन में लगना शुरू होगा, और फिर आहिस्ता २ शौक़ और प्रेम बढ़ता जावेगा, और करनी दुरुस्त होती जावेगी, तब हालत भी सच्ची बदलती जावेगी।

१५८—खुलासा यह है कि जब तक जीव सच्चा होकर

तवज्जह के साथ सतसंग नहीं करेगा, तब तक उसके मन और बुद्धि और इंद्रियों की गढ़त दुरुस्ती से नहीं होगी और न अंतर सतसंग यानी अभ्यास उससे दुरुस्ती से बन पड़ेगा, और इस वास्ते उसकी पुरानी चाल-ढाल भी नहीं बदलेगी। लेकिन इस क़िस्म के जीव भी कि जो हर रोज़ सतसंग में नेम से शामिल होते हैं, पर अभी पूरी तवज्जह के साथ बचन नहीं सुनते दुनियादारों से बेहतर हैं, कि यह रफ़्ता २ एक दिन प्रेमी हो जावेंगे, और फिर दुरुस्ती के साथ करनी करके, अपना काम सतगुरु राधास्वामी दयाल की दया से बनवा लेंगें, और संसारी लोग जो कभी सतसंग का दर्शन भी नहीं करते, दिन २ माया के चक्कर में फँस कर, नीचे के दरजों में गिरते चले जावेंगे।

१६—सच्चे और पूरे गुरू, यानी संत सतगुरू, और उनके सतसंग की महिमा बहुत भारी है। जो कोई थोड़े-बहुत भाव के साथ, कोई दिन भी, उनके सतसंग में जैसे-तैसे शामिल होगा, उसके भी उद्धार का रास्ता दया से जारी हो जावेगा। बल्कि जो कोई, भाव से एक दिन भी सतसंग में शामिल होकर बचन सुनेगा, उसके भी किसी क़दर कर्म कटेंगे, और सच्चे परमार्थ का बीजा उसके हिरदे में बो दिया जावेगा और वह आइन्दा किसी न किसी वक़्त पर फले-फूलेगा यानी संत सतगुरु के सतसंग में शामिल होकर भक्ति करके, अपने जीव का कारज करा लेगा।

२०—इस वास्ते कुल्ल जीवों को मुनासिब और लाज़िम है कि जहाँ-कहीं संत सतगुरु का सतसंग जारी होवे, वहाँ, जैसे बने, तैसे शामिल होकर अपने परमार्थ का भाग बढ़ावें। जो जीव कि थोड़े-बहुत संस्कारी या अधिकारी परमार्थ के होंगे, उनको फ़ौरन असर उसका मालूम होगा, और शौक़ के साथ भक्ति में शामिल हो जावेंगे, और जो अधिकारी नहीं हैं, उनके हिरदे में संत सतगुरु अपनी दया से, बीजा परमार्थ का, डाल देंगे कि वह आइन्दा उन जीवों को भक्ति में शामिल करके उनका कारज बनावेंगे।

२१—संतों की महिमा और दया का क्या वर्णन किया जावे कि अपने निंदकों को भी दया से भक्ति दान बख़्शते हैं, और अबेर-सबेर यानी इसी जन्म में, ख़्वाह आइन्दा के जनम में, उनको भी सतसंग में शामिल करके और भक्ति और अभ्यास कराके, मुक्ति-पद या परम धाम में पहुँचाते हैं।

२२—सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल की ऐसी दया है कि जो कोई सच्चे मन से, उनकी सरन में आया, और भक्ति और अभ्यास सुरत-शब्द मार्ग का करने लगा, और प्रीत और प्रतीत चरनों में दिन २ बढ़ाता जाता है, तो सिर्फ़ उसी का नहीं, बल्कि उसके निज रिश्तेदार और प्यार वालों का, जैसे माता, पिता, स्त्री, पुत्र, भाई और भतीजों का भी उद्धार अपनी दया से फ़रमावेंगे। जो इनमें से कोई

भक्ति में शामिल हो गया तो वह अपने वास्ते, आप कमाई करने लगा, और खास दया का अधिकारी हो गया, और जो कोई शामिल नहीं हुआ, तो उसके ऊपर राधास्वामी दयाल इस वजह करके कि वह उनके सच्चे प्रेमी भगत की सेवा और दर्शन करता रहा, और कभी २ परमार्थी काम में मदद भी देता रहा है, अपनी तरफ से दया करके उसके उद्धार का रास्ता जारी फ़रमावेंगे।

२३—जिस क़दर, जिस-किसी की राधास्वामी दयाल के चरनों में भक्ति ज़बर है, और सरन पक्की और मज़बूत है, उसी क़दर उसके कुटुम्बी और रिश्तेदारों पर बल्कि नौकरों पर भी दरजे-बदरजे दया, वास्ते उनके उद्धार के, राधास्वामी दयाल फ़रमावेंगे।

२४—और जिस-किसी की भक्ति बहुत ज़बर है, उसके दूर तक के रिश्तेदारों पर भी दया का असर, वास्ते उनके जीव के सुख और कल्यान के, पहुँचेगा, और जो कोई उसके ख़ास रिश्तेदारों में से, जैसे माता, पिता, स्त्री, पुत्र, बहन-भाई और दादा और नाना-नानी और सास-ससुर में किसी का भी चोला छूट गया है, तो जहाँ-कहीं उसकी सुरत होगी, वहीं, उसको दया का असर और फ़ायदा पहुँचेगा।

२५—और जिस-किसी की भक्ति सर्व-अंग करके पूरी और निहायत ज़बर है, तो आप तरन-तारन हो जावेगा

यानी उसको साध या संग गति जीते-जी, हासिल हो जावेगी और वह आप राधास्वामी दयाल की दया से जिस क़दर जीवों को चाहेगा, उनका उद्धार कर देगा।

बचन २७

जीवों को वास्ते बचाव तकलीफ़ और दुक्खों से, और प्राप्ति सच्चे और अमर सुख और आनन्द के, अपने घट में, संतों की जुगत के मुवाफ़िक़, स्वरूप का ध्यान, और शब्द के सुनने का थोड़ा-बहुत अभ्यास ज़रूर करना चाहिए

१—कुल्ल जीव सुख और आराम चाहते हैं और दुक्खों से डरते और घबराते हैं, और जो कोई, किसी क़िस्म का जतन, वास्ते प्राप्ति सुख, और घटने और दूर होने दुख के, बताता है, तो उसको ख़ुशी से करने को तैयार होते हैं।

२—दुनिया में अनेक तरह के सुख हैं, लेकिन वे या तो इन्द्रियों के भोग हैं या मन को ताक़त और खुशी देने वाले हैं, जैसे धन और मान-बड़ाई और हुकूमत वग़ैरा, और ये सब नाशमान हैं, और हमेशा कम और ज़्यादा होते रहते हैं, और जीव का इनमें से कोई संगी और सच्चा

मददगार नहीं है। यानी तक्लीफ और भारी दुख और कलेश और मौत के वक़्त में, इनसे बहुत कम मदद और सहारा मिलता है। पर जीव मन और इन्द्रियों के रस लेने में ऐसे ग़ाफ़िल हो जाते हैं कि उन सुक्खों को, अपनी ज़िन्दगी भर का संगी और आराम देने वाला समझ कर सच्चे और अविनाशी सुख की तलाश और क़दर नहीं करते, और बारम्बार धोखा खाकर आख़िर को हाथ मलते और पछताते रह जाते हैं।

३–इसी तरह दुख और कलेश और मुसीबत भी, तरह २ की, जीवों को सताती है। किसी-किसी का थोड़ा-बहुत उपाय या इलाज बन जाता है, पर बहुत से दुख और आफ़तें ऐसी हैं कि उनमें कोई जतन या तदबीर काम नहीं देती, और आदमी निहायत लाचार होकर उनको भोगता है, और बे-इख़्तियारी में रोता और चिल्लाता है।

४–संत दयाल ऐसी हालत जीवों की देख कर, निहायत दया करके, समझाते हैं कि यह दुनिया धोखे की जगह है, और यहाँ के भोग और सुख तुच्छ और नाशमान, और जीव को लुभा कर, जड़ पदार्थों में फँसाने वाले हैं। इन से होशियार रह कर सच्चे और परम-आनन्द का खोज करके, उसकी प्राप्ति के निमित्त थोड़ा-बहुत जतन इस ज़िन्दगी में, अपने जीव के सच्चे कल्यान के वास्ते, ज़रूर करना चाहिए। उस का फ़ायदा इसी ज़िन्दगी में इस क़दर

मालूम हो सकता है कि जब वह आनन्द (जो कि घट-घट में भर-पूर है) अपने इख़्तियार से, कोई दिन के अभ्यास के बाद, एक छिन में अपने अंतर में मिल सकता है, तो उसके रूबरू कुल्ल भोग संसार के (जो कि मन और इन्द्रियों के विषय यानी रस देने वाले हैं) किसी क़दर फीके और तुच्छ नज़र आवेंगे, और उनकी तरफ़ तबीयत कम तवज्जह करेगी और दिन २ उस सच्चे और परम आनन्द के बढ़ाने के वास्ते ज़्यादा कोशिश करेगी, और भारी तकलीफ़ और दुख के वक़्त, वह आनन्द बहुत सहारा देगा, और मौत के वक़्त, ज़्यादा से ज़्यादा या पूरा हासिल होकर, जीव का निहाल कर देगा कि उसकी बराबर कोई खुशी इस दुनिया में नहीं है और न हो सकती है।

५–इस आनन्द का भंडार, हर एक जीव के घट में मौजूद है, और उसकी धारा भी पिंड की तरफ़ जारी है, पर जीव उससे बिलकुल बे-ख़बर हैं। इस सबब से वे निर्मल और गहरा रस नहीं ले सकते, और तुच्छ और नाशमान रस के वास्ते, जो कि भोगों और अनेक जड़ पदार्थों से इन्द्रिय द्वारे किसी क़दर हासिल होता है, निहायत मेहनत और कोशिश करते हैं।

६–ज़ाहिर है कि जिस क़दर सुख और रस और आनन्द जीव को हासिल होता है, वह असल में सुरत-चैतन्य की धार में है। तो उस भंडार में जहाँ से यह धारें

निकली हैं, किस क़दर गहरा और विशेष रस और आनन्द होना चाहिए? और उसके थोड़ा-बहुत हासिल करने के वास्ते, हर एक जीव को, औरत होवे या मर्द, किसी क़दर तवज्जह और कोशिश करना ज़रूर और उसके हक़्क़ में मुफ़ीद, मालूम होता है।

७—और जो कोई अपने घट में, वास्ते प्राप्ति परम आनन्द के, जतन नहीं करेंगे, या संतों के बचन की प्रतीत न करके, सारी तवज्जह अपनी, संसार के सुख और आराम की प्राप्ति में लगावेंगे, तो उन जीवों को भारी तकलीफ़ और मौत के वक़्त अपनी कार्रवाई की ख़बर पड़ेगी कि कैसा धोखा खाया, और जमदूतों के हाथ से अनेक तरह के कष्ट और क्लेश सहने पड़ेंगे।

८—ऐसी भारी भूल इस दुनिया में पड़ी हुई है कि जीव इसी ज़िन्दगी में, अपने प्यारों और भरोसे वालों के हाथ से धोखा खाते हैं, और ख़ूब उनको जाँच हो जाती है कि कोई उनका सच्चा मददगार नहीं है कि जो आराम और तकलीफ़ के वक़्त एकसाँ बरते, फिर भी उनका झुकाव और खिंचाव उन्हीं लोगों की तरफ़ रहता है, और इस सबब से बारम्बार अपनी कार्रवाई का फल भोगते हैं, और उस में दुखी-सुखी होते हैं और अपनी कार्रवाई पर पछताते हैं और अफ़सोस करते हैं।

९—जो किसी को, अंतर में, विशेष सुख और आनन्द

के मौज [illegible] होने का [illegible] न आवै, और उसके लिए जतन करने को [illegible] नहीं चाहिए [illegible] इसी मतलब से कि दुख और क्लेश से बचाव [illegible] और मदद मिलै और अहार व्यवहार और [illegible] [illegible] न आवै, वह जुगत कि [illegible] [illegible] [illegible] के, और चढ़ाने मन और [illegible] कुछ [illegible] के बचनों [illegible] बताई है, उसका अभ्यास शौक़ और प्रीति के साथ ज़रूर करें, क्योंकि दुखों से सब जीव डरते हैं, और [illegible] तक मुमकिन होवे, उनसे बचना या उनको दूर हटाना चाहते हैं

१८—जो [illegible] कार्रवाई और अभ्यास की, थोड़ी-बहुत [illegible], तो फिर सुरत और मन, अभ्यास करते २ [illegible] और आनन्द ज़रूर पावेंगे, और इस आनन्द को [illegible] पैदा होकर [illegible] दिन २ [illegible], ज़्यादा [illegible] और ज़्यादा से ज़्यादा आनन्द पाकर पूरी [illegible] के चरनों में जा जावेगी। तब वे जीव अपने भागों को सराहेंगे और संतों की दया और मेहर का शुकराना करेंगे

१९—संतों ने जो जुगत कि बताई है, वह यह है कि शब्द यानी आवाज़ का (जो घट २ में भरपूर है) सुनते हुए, और स्वरूप का ध्यान करते हुए, अपने सुरत और मन को निज घट में, ऊपर की तरफ़ थोड़ा-बहुत चढ़ाना चाहिए

और यह अभ्यास नित्त जारी रखना चाहिए। इसकी बरकत से दिन २ सफाई होती जावेगी, और मालिक के चरनों में प्रीत बढ़ती जावेगी, और उसके साथ ही आनन्द भी दिन २ ज़्यादा मिलता जावेगा, और वह आनन्द सुरत को एक दिन उसके निज घर में पहुँचा कर छोड़ेगा। और वहाँ पहुँच कर सच्चे मालिक का जो कुल्ल रचना का माता-पिता है, दर्शन पावेगा और महा आनन्द को प्राप्त होवेगा, और तब अपनी नर देही और संतों की भारी दया की महिमा जान पड़ेगी।

१२—धुर मुक़ाम या दयाल देश में पहुँचना तो आहिस्ता २ ज़्यादा अर्से में होगा, पर जिस क़दर जिस किसी के मन और सुरत अंतर में चढ़ेंगे, उसी क़दर वह संसार और उसके सामान से अलेहदा होता जावेगा, और मालिक के से ख़वास उसमें आते जावेंगे, और रस और आनन्द मिलता जावेगा, और चिंता-फ़िक्र और ख़ौफ़ और तकलीफ़ और दुख वग़ैरा का असर दिन २ कम और दूर होता जावेगा और एक दिन सच्चा निरभय और अचिन्त कर देगा, कि जहाँ संसारी दुख-सुख का असर नहीं पहुँचता है।

१३—यह संतों का अभ्यास इस क़िस्म का है कि जब जो कोई संसार के दुक्खों से डर कर अपने अंतर में ऊपर की तरफ़ को चलेगा, तो फ़ौरन उसको थोड़ा-बहुत सहारा

मिलेगा, यानी जैसे कि बालक डर कर, या कोई चोट खाकर अपने माता-पिता की गोद की तरफ़ भागता है, और वहाँ पहुँचते ही उसको सच्ची पनाह और सहारा मिल जाता है, इसी तरह कुल्ल मालिक के चरनों से, अन्तर में सुरत मिल कर, ताक़त और रस और सहारा और पनाह पा सकती है। इस वास्ते हर एक जीव को, अपने आराम और कल्यान के वास्ते मुनासिब और लाज़िम है कि इस आसरे और मदद के ठिकाने को, अपने अंतर में नित्त खोजते और उसका रास्ता काटते रहें, तो एक दिन संसार की तकलीफ़ और दुक्खों और जनम-मरन की आफ़त से बच कर परम और अमर आनन्द को प्राप्त होंगे।

१४—जो किसी हालत में मन और सुरत, शब्द में दुरुस्ती से न लग सकें, तो चित्त से स्वरूप का ध्यान ऊँचे स्थान पर करना चाहिए, या अपने ख़्याल को उस मुक़ाम पर पहुँचा कर जमाना चाहिए। इस तरह तवज्जह ऊँचे की तरफ़ करने से ज़रूर थोड़ा-बहुत सहारा अन्तर में दया का, मिलेगा।

बचन २८

साध के संग की महिमा और उसका फ़ायदा, जो सच्ची दीनता और प्रेम के साथ संग किया जावे

१—ऐसा कहा है कि साध के संग से कोटि जनम के पाप, एक छिन में, कट जाते हैं। यह बात ज़ाहिरा मुश्किल

मालूम होती है, लेकिन जब [illegible] किया जावे तब मालूम होगा कि यह कुछ [illegible] नहीं है, क्योंकि [illegible] ने [illegible] पहचाना और पाया है और उसके [illegible] बहुत है। जो कोई [illegible] के [illegible] उसके [illegible] उसको [illegible] थोड़ी [illegible] में यह [illegible] हो जाता है कि [illegible] दिल के [illegible] में [illegible] मालूम पड़ता है। [illegible] और यह [illegible] रहा है, [illegible] कि [illegible] के [illegible] उसी [illegible] का [illegible] और [illegible] होने का कारण हुआ [illegible] है।

[illegible] उन्हीं का [illegible] अपना पूरा काम [illegible] जो कोई [illegible] और [illegible] के [illegible] जुगल [illegible] दिल उनके मुताबिक [illegible]

निष्कपट और हित के साथ होना चाहिए। यानी जैसे साध हिदायत करें उसी के मुवाफ़िक़ कार्रवाई की जावे। और शक सन्देह और बे-यक़ीनी को दख़ल न दिया जावे। जैसे सोना या चाँदी या राँगा पिघला कर जिस साँचे में ढाला जावे, वह उसी का रूप बन जाता है, इसी तरह जो जीव सच्ची दीनता और प्रेम के साथ निष्कपट होकर साध का संग करे, वह भी उनकी दया से साध बन जाता है।

३—सच्ची दीनता से मतलब यह है कि खोजी दर्दी, सच्चे परमार्थ का ऐसा ग़रजमंद होवे, जैसे बीमार हकीम और दवाई का मुहताज है—जैसे हकीम कहता है उसी मुवाफ़िक़ दवा खाता-पीता है और परहेज करता है। या जैसे नौकरी का चाहने वाला हाकिम के सामने सच्चा दीन-अधीन होता है यानी, जो हाकिम हुक्म करे और काम सुपुर्द करे, उसको दिल और जान से दुरुस्ती के साथ अंजाम देता है, और हाकिम को राज़ी करने के वास्ते अपनी ताक़त के मुवाफ़िक़ पूरी मेहनत और कोशिश करता है। ऐसी सच्ची ग़रज जिस किसी के मन में पैदा हुई, वह सच्चे और पूरे परमार्थ के हासिल करने के लिए, सर्व अंग से साध या संत के वचन को सुनेगा और मानेगा, और तन-मन से उसकी कार्रवाई यानी अभ्यास दुरुस्ती से करेगा। तब उनकी मेहर और दया से उसकी

ताक़त बढ़ती जावेगी, और दिन २ उसको काम बनता जावेगा, और वे उसको एक दिन अपने मुवाफ़िक़ बना लेवंगे।

४—इस वास्ते हर एक जीव को, जिसके मन में सच्ची और पूरी चाह, अपने जीव के कल्यान की, पैदा हुई है, मुनासिब है कि पहिले सच्चे और पूरे संत या साध का खोज करके, उनके सनमुख प्रेम-भाव और दीनता के साथ जावे, और चित्त देकर उनके बचन सुने, ओर सिर्फ़ बचन से उनकी परख करे, यानी जो उनके दर्शन और बचन से, इसके मन में सच्चे मालिक के चरनों में प्यार और भाव पैदा होवे, और संसार और उसके पदार्थों की तरफ़ से किसी क़दर नफ़रत यानी उदासीनता चित्त में आवे, और सच्चे मालिक के दर्शनों का चाव दिन-दिन बढ़ता जावे और जो जुगत कि वे बतावें, उसके अभ्यास से दिन २ मन और सुरत, पिंड और संसार की तरफ़ से हट कर, ऊँचे देश की तरफ़ घट में चलते और चढ़ते जावें, और थोड़ा-बहुत इस कार्रवाई का रस मिलता जावे, और मालिक के चरनों में अनुराग और संसार से बैराग बढ़ता जावे, तो यही निशान और सबूत इस बात का है कि जिनके संग से ऐसी हालत पैदा हुई, वे ज़रूर सच्चे और पूरे संत या साध हैं, और उनके संग और उनकी जुगत की कमाई से ज़रूर एक दिन काम पूरा बन

जावेगा इसी क़दर पहिचान शुरू में (जो एक, दो या तीन महीने के संग से थोड़ी-बहुत हासिल हो सकती है) काफ़ी है। फिर ज़्यादा संग और अन्तर में अभ्यास करने से यही पहिचान बढ़ती जावेगी, और उनकी गत-मत और दया और मेहर की थोड़ी-बहुत परख और प्रतीत होती जावेगी। और फिर यही परख और प्रतीत दिन २ बढ़ती जावेगी, और उसके साथ प्रेम भी बढ़ता जावेगा, और उनके चरनों की सरन भी पकती जावेगी। इस तरह तरक़्क़ी होते २ एक दिन काम पूरा बन जावेगा।

५—सच्चे परमार्थी को, जो ऊपर लिखे के मुवाफ़िक़ कार्रवाई करता है, मुनासिब है, कि अपने परमार्थी और संसारी व्यवहार और चाल-चलन की अच्छी तरह सम्हाल रक्खे, कि जिससे उसकी परमार्थी कार्रवाई, और उसकी तरक़्क़ी में ख़लल न पड़े, यानी परमार्थी शुभ-कर्म की दिन २ कार्रवाई बढ़ती जावे, और परमार्थी अशुभ-कर्म में ज़रूरत के मुवाफ़िक़, और मुनासिब और वाजिबी तौर पर बर्ताव करे, और व्यवहारी शुभ-कर्म की कार्रवाई जहाँ तक बन सके, जारी रक्खे, लेकिन अशुभ-कर्म से बिलकुल परहेज़ करे।

६—परमार्थी शुभ-अशुभ कर्मों की तफ़सील यह है। परमार्थी शुभ-कर्म उसको कहते हैं कि जिससे मन और सुरत और इन्द्रियों की धार को, इधर यानी बाहर और नीचे की तरफ़ से

दूर हो सकता होवे, तो ऐसे ख़र्च करने या हक़ को छोड़ने में ताम्मुल न करे, और जहाँ तक बने आपस में मिल कर फ़ैसला कर लेवे, ताकि अदालत तक नौबत न पहुँचे, क्योंकि ऐसे झगड़ों में, पीछे करके, बहुत ख़र्च बे-फ़ायदा होता है और तकलीफ़ और चिंता बे-फ़ायदा उठानी पड़ती है कि जिससे परमार्थी के अभ्यास में बहुत ख़लल पड़ता है।

(९) परमार्थ और अपने मत के मुआमले में भी मुर्खों के साथ बहस और हुज्जत बे-फ़ायदा न करे। जो कोई न माने, तो उस पर किसी तरह का ज़ोर और दबाव न डाले और न लड़ाई और झगड़ा करे, बल्कि ऐसे लोगों से अपने मत और अभ्यास को गुप्त रक्खे।

(१०) बिरादरी और दोस्त और आश्ना और पड़ोसी लोगों की तान और मलामत का ख़याल कर के अपनी परमार्थी कार्रवाई में ढीला न होवे। ये सब मूर्ख हैं और इनकी परमार्थी अक़्ल और समझ बालकों के मुवाफ़िक़ है। फिर इनकी बात-चीत पर ख़्याल करना, अक़्लमन्दों का (जो कि परमार्थ की समझ दुरुस्त रखते हैं) काम नहीं है। जहाँ तक बने, ऐसे लोगों से अपना बचाव करके दूर रहना या ज़्यादा हेल-मेल न करना मुनासिब है और उनके हक़ को, इस वजह से कि वे परमार्थ में विघ्न डालते हैं, रोकना

या बन्द करना मुनासिब नहीं है। परमार्थी शख़्स को क्षमा और बरदाश्त करना चाहिए।

(११) जो कोई परमार्थी कार्रवाई में ख़लल डाले या उल्टी सलाह बतलावे, उसकी बात नही माननी चाहिये, लेकिन उसके साथ हुज्जत या तकरार करना या अपनी समझौता देना ना-मुनासिब है।

७—व्यवहार या संसारी शुभ-अशुभ कर्म की तफ़सील यह है :—

(१) शुभ कर्म यह है कि जहाँ तक मुमकिन होवे, मन से, बचन से, और कर्म करके सब को सुख पहुँचाना और जो सुख न पहुँचा सके, तो दुख भी न देना। जो तन और धन थोड़ा बहुत इस काम में लगे, और अपने परमार्थ में किसी तरह का ख़लल न पड़ता होवे, तो उसके लगाने में दरेग़ (सोच) न करे।

(२) अशुभ कर्म यह है कि ख़ास अपने या किसी अपने अज़ीज़ के मतलब के लिए, किसी को मन से, बचन से, या कर्म करके दुख पहुँचाना। जहाँ तक मुमकिन होवे इस मुआमले में, परमार्थी को, एहितयात और परहेज़ करना मुनासिब है।

(३) लेकिन जो लोग ब-सबब परमार्थी कार्रवाई के दुखी होवें यानी जो वे उल्टी सलाहें देवें और यह उनकी बात न

है। फिर जो कोई एसे गुरुओं का, सच्चे मन और सच्चा दीनता और भाव के साथ संग करेगा, वे उसको थोड़े अर्से में, वह छँटी हुई बातें और जुगती, जो कि कुल्ल का मक्खन है, अपनी मेहर और दया से समझा कर, और अंतर में अभ्यास करा कर, सब कारख़ाना क़ुदरत का दिखला देंगे। फिर विद्यावान की क्या ताक़त कि ऐसे परमार्थी अभ्यासी का मुक़ाबला करे, या उसके साथ परमार्थ की बात-चीत कर सके? क्योंकि वह लिखी-पढ़ी बातें, तोते की तरह बना सकता है, और अंतर के क़ुदरत के भेद से बिल्कुल बे ख़बर है, और अभ्यासी परमार्थी असल हाल क़ुदरत का, अंतर-दृष्टि के साथ देख कर, कहता है। इस वास्ते इन दोनों में ज़मीन और आसमान का फ़र्क़ है, यानी विद्यावान मन और इन्द्रियों के घाट पर बैठा हुआ, अक़्ली बातें, अंधों के मुवाफ़िक़ करता है और अभ्यासी, रूहानी यानी सुरत की दृष्टि से देख कर, भेद कहता है। वह विद्यावान मंज़िल पर कभी नहीं पहुँचेगा, और जनम-मरन की फाँसी उसकी कभी नहीं काटी जावेगी, और यह प्रेमी परमार्थी, एक दिन, अपने निज घर में पहुँच कर, सच्चे मालिक का दर्शन पाकर, और जनम-मरन से रहित होकर, परम आनन्द को प्राप्त होगा।

———

बचन २९

वर्णन महिमा सुरत-शब्द मार्ग और संत सतगुरु और कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल की मेहर और दया का, कि जिससे, सहज में, जीवों का सच्चा उद्धार होता है

१—इस दुनिया में आम तौर पर, और ख़ास कर इस ज़माने में, दुख ज़्यादा है, और आराम कम, और सब जीव आराम की प्राप्ति और दुख की निवृत्ति के लिये, अपनी ताक़त के मुवाफ़िक़ जैसा कि दुनिया में दस्तूर है जतन करते हैं, पर निर्मल और ठहराऊ सुख और आनंद किसी को हासिल नहीं है। और जो कोई ज़्यादा सुखी नज़र आता है, वह भी दुख से ख़ाली नहीं है, क्योंकि रोग और सोग सब जीवों के साथ लगे हुए हैं, और उनके मुतलक़ दूर करने का जतन किसी के इख़्तियार में नहीं है।

२—ऐसा सुख और आनन्द कि जो हमेशा क़ायम रहे, और महा निर्मल होवे, सिर्फ़ संतों की जुगत की कमाई से हासिल हो सकता है, और वह अभ्यास रूहानी है, यानी सुरत को अन्तर में चढ़ाने से हासिल होता है।

देह धर कर, दुख-सुख सहता रहेगा, और जिस क़दर उसकी आसक्ति और बंधन, जीवों और पदार्थों में होगा, उसी क़दर कर्म करेगा, और उनका फल, दुख-सुख भोगेगा, और फिर, उसी स्वभाव और भोगों की आसा के सबब से, बारम्बार, ऊँचे-नीचे देश में देह धरता रहेगा, यानी जनम मरन के चक्कर से उसका बचाव नहीं होगा और सख़्त दुक्खों में, कोई उसकी सहायता नहीं कर सकेगा।

८—इस वास्ते, ब-नज़र बचाव जनम-मरन और दुक्खों के, जो कर्मों के सबब से भोगना पड़ता है, हर एक जीव को लाज़िम और मुनासिब है, कि राधास्वामी दयाल के चरनों में प्रीत और प्रतीत लाकर, अपने जीव के कल्यान के वास्ते, थोड़ा-बहुत अभ्यास, सुरत-शब्द मार्ग का, और ध्यान संत सतगुरु का करें।

९—दुनिया में सब जीव, सुख के कारण और दुख के निवारण के वास्ते, हर एक तरह का जतन और मेहनत कर रहे हैं, और यह सुख तुच्छ और नाशमान है, और चाहे जैसे भोग और पदार्थ हासिल हो जावें, लेकिन वह एक दिन मृत्यु के समय छोड़ने पड़ेंगे, और उनके छोड़ने का भारी दुख सहना पड़ेगा। फिर, किस क़दर जीवों पर फ़र्ज़ और लाज़िम है, कि वास्ते हासिल करने निर्मल और ठहराऊ आनंद, और दूर होने तकलीफ़ और दुक्खों के, थोड़ी मेहनत अभ्यास की, जो कि निहायत सहज है और

जिसमें थोड़ा सा वक़्त ख़र्च करने से भारी फ़ायदा मिल सकता है, गवारा करें ?

१०—कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल की मेहर और दया का, और भी बड़ाई उनकी जुगत यानी सुरत-शब्द मार्ग का वर्णन किस तरह किया जावे, कि ऐसी दया जीवों पर, आज तक किसी ने नहीं की, और न ऐसी सहज जुक्ति कि जो गृहस्थ और विरक्त और औरत और मर्द और जवान और बूढ़ा, आसानी के साथ कमा सके, कभी प्रकट हुई। इस अभ्यास से जीवों का उद्धार सहज में होना मुमकिन है। और पिछले ज़माने में, महा कठिन अभ्यास ऋषीश्वर और मुनीश्वर और जोगी और जोगीश्वरों और औलियाओं ने जारी किये, कि जो विरक्तों से, मुश्किल से बन पड़ते थे। और फिर भी उनमें ख़तरे बहुत थे, और गृहस्थियों से और खास कर औरतों से तो बिल्कुल नहीं बन सकते थे। और इस सबब से ये सब, कोई कमाई, अपने जीव के कल्यान के वास्ते, न कर सके। अलबत्ता शुभ कर्म कोई-कोई जीवों से बन पड़े, और उसका फल उन्होंने कोई दिन के वास्ते दुनिया में, या स्वर्ग लोक में, पाया, यानी कुछ अर्से तक सुख भोगा, और फिर मृत्यु लोक में जनम लिया यानी उनका आवागमन न छूटा।

११—अब जो जुगत यानी अभ्यास कि राधास्वामी दयाल ने जारी फ़रमाया, उसकी ऐसी भारी महिमा है कि

जो वह किसी जीव से मत को समझ कर, शौक़ के साथ, तीन दिन भी बन पड़ा, तो भी उसके उद्धार का सिलसिला जारी हो गया, और चार-पाँच जनम में सतगुरू का संग पाकर, और उस जुगती की कमाई करके, सत्तलोक यानी संत देश में पहुँच कर, अजर-अमर हो गया, और परम आनन्द को प्राप्त हुआ कि जहाँ काल-कलेश और आवागमन का चक्कर नहीं है।

१२—सबूत इस बात का यह है कि जो कोई एक मर्तबा जुल्लाब लेता है, या फ़स्द खुलवाता है, या जोंक लगवाता है, तो उसी मौसम में, वर्ष या छः महीने बाद, मादा और ख़ून की रुजू उसी तरफ़ को, वास्ते निकलने के, होती है। जब कि मादा और ख़ून में, जो कि ब-मुक़ाबले सुरत यानी रूह के निहायत जड़ हैं, ऐसा ख़वास पाया जाता है, कि एक मर्तबा उनकी रुजू एक तरफ़ को हो जावे तो फिर बारम्बार वक़्त मुक़र्ररा पर, उसी तरफ़ को दौड़ते हैं, फिर सुरत-चैतन्य जिसका देश सब से ऊँचा है, जो शौक़ के साथ तीन दिन अपने घर की तरफ़ को रुजू करके चलने लगे, तो वह उसी ख़वास के मुवाफ़िक़, बारम्बार उसी तरफ़ को, वक़्त २ पर, दौड़ेगी और नीचे के देश की तरफ़ जो चौरासी का घर है, कमतर रुजू करेगी। और जब कि कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु, जिनकी सरन में आकर मत को अच्छी तरह समझा, और

उसकी प्रतीत लाकर अभ्यास शुरू किया, उसके सहाई हुए, तब उनकी मेहर और दया से, चौरासी का चक्कर ज़रूर बन्द हो जावेगा, और जब तक कि सत्तलोक में पहुँचना न होगा, तब तक, वे उसको, ऊँचे देश में बासा देते जावेंगे, और उसकी प्रीत और प्रतीत बढ़ा कर, और नर देही में जनम देकर, और हर जनम में आप मिल कर, उससे सतसंग और अभ्यास बराबर कराते जावेंगे, और एक दिन अपने धाम में पहुँचा कर, उसको अमर आनन्द बख़्श देंगे।

१३—सुरत-शब्द मार्ग के अभ्यास की ऐसी महिमा है कि जिस किसी ने इसकी कमाई शुरू कर दी और जिस क़दर कि उससे, एक जनम में बन पड़ी, वह दूसरे जनम में संत सतगुरु का उपदेश लेते ही, और अभ्यास शुरू करते ही, फ़ौरन फुर आवेगी, यानी जिस क़दर रास्ता तै करके, जिस मुक़ाम तक उसकी सुरत पहुँची है, उस मुक़ाम पर, फ़ौरन चढ़ जावेगी, और उसके आगे कमाई यानी चलना और चढ़ना शुरू कर देगी। इसी तरह से हर जनम में कमाई और चढ़ाई बढ़ती जावेगी, जब तक कि संत सतगुरु के देश में पहुँच कर, निःचिंत न होगी। और फिर जनम नहीं होगा और अपने सच्चे मालिक सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल के दर्शनों का आनंद और बिलास पाकर हमेशा को मगन हो जावेगी।

१४–संत सतगुरु दयाल की मेहर और दया की क्या महिमा वर्णन की जावे कि जो जीव सच्ची दीनता और भाव के साथ, एक मर्तबा, उनकी सरन में आया और सतसंग करके, उनके मत और भेद को समझ कर, और उपदेश लेकर, चंद रोज़ भी उनके अभ्यास की कमाई करी, तो मृत्यु के समय (जब कि सुरत का, अंतर में, ऊपर की तरफ़ को खिंचाव, क़ुदरती तौर पर, शुरू होता है) उस वक़्त वे आप मेहर और दया से, उस को, तीसरे तिल के मुक़ाम पर, अपना दर्शन देकर और चरनों में उसकी सुरत को लपेट कर, ऊँचे देश में ले जाते हैं, और उसकी लगन और कमाई के मुवाफ़िक़, जहाँ मुनासिब समझते हैं, उसको बासा देकर और अपने अमृत-रूपी बचन सुनाकर, उसकी प्रीत और प्रतीत को बढ़ाते रहते हैं। और फिर जब संत सतगुरु संसार में आवें और सतसंग खड़ा करें, तब उस सुरत को नर देही में जनम देकर, और अपनी दया से खींच, कर, सतसंग में शामिल करते हैं, और दिन २ उसकी प्रीत और प्रतीत बढ़ा कर और सुरत-शब्द मार्ग का अभ्यास करा कर, उसको चढ़ाते चले जाते हैं। और जो कि मंज़िल दूर-दराज़ है, इसी तरह उसको, जब तक कि उनके धाम में न पहुँचे, जनम देकर, और कमाई करा कर, रास्ता तै कराते जाते हैं, और जब २ ह देछूटे, तब तब, उसको ऊँचे देश में, उसकी कमाई

के मुवाफ़िक़, पहुँचा कर बासा देते हैं, और जिस जनम में निज धाम में पहुँच गया, तब ही काम पूरा हो गया और फिर जनम लेने की ज़रूरत नहीं रही।

१५—ख़ुलासा यह है कि संत सतगुरु ऐसे दयाल हैं कि जब तक उनका जीव, निज धाम में न पहुँचे, तब तक उसको जनम देकर, और हर जनम में कमाई करा कर, मृत्यु के समय, आप उसके अन्तर में प्रकट होकर, उसको अपने संग ऊँचे देश में लेजा कर बासा देते हैं, और वहाँ भी उसकी ख़बरगीरी और सम्हाल करते रहते हैं, यानी बचन सुना कर उसकी प्रीत और प्रतीत को बढ़ाते रहते हैं कि वही ताक़त लेकर जीव दूसरे जनम में ज़्यादा से ज़्यादा कमाई करता चला जाता है, और इस तरह एक दिन निज धाम में पहुँच कर निःचिंत हो जाता है।

१६—संत सतगुरु की दया ज़्यादा से ज़्यादा है। उसकी महिमा कहन-सुनन से ज़्यादा है। ऐसी दया कभी किसी ने नहीं करी और न कोई कर सकता है, यानी जो जीव कि उनकी सरन में आये और तन, मन, धन से उनकी भक्ति करी, तो सिर्फ़ उनका ही उद्धार नहीं, बल्कि उनके कुटुम्बियों तक का उद्धार फ़रमाते हैं, यानी जिस क़दर जिसकी भक्ति है, उसी क़दर उसकी, और उसके कुटुम्ब की रक्षा, और सम्हाल, और उद्धार करते हैं, यानी तीन कुल और सात कुल और जो सबसे बढ़कर भक्ति होवे

तो बे-शुमार जीवों का उद्धार उसके वसीले से हो जाता है।

१७–कुलों की तफ़सील यह है कि तीन कुल में एक अपने माँ-बाप का, एक नन्साल का, और एक ससुराल का, और सात कुल में, तीन पुश्त भक्त की, दो नन्साल और दो ससुराल की, यानी भक्त के (१) माँ-बाप और (२) दाद-दादी और (३) भक्त की औलाद और (४) नाना-नानी और (५) मामा-मामी और (६) सास-सुसर और (७) साला और सलहज का उद्धार होता है।

१८–अब ग़ौर करना चाहिये कि किस क़दर महिमा सुरत-शब्द मार्ग की है कि जिससे बढ़ कर अभ्यास कोई रचना भर में नहीं है, यानी शब्द की धार पर जो कि रूह और जान की धार है, अभ्यासी सवार होकर निज घर को जाता है। प्राण की धार, सुरत की धार से, चैतन्य है, और कुल्ल धारें (जो कि माया के घेर से निकली हैं) सुरत की धार से ताक़त लेती है। फिर सुरत यानी जान की धार से बढ़ कर कोई धार नहीं रची गई। इस वास्ते, सुरत-शब्द मार्ग से बढ़ कर कोई अभ्यास नहीं हो सकता। अब इसके आसान और निर्विघ्न होने की क्या सिफ़त की जावे कि लड़का और जवान और बूढ़ा इस अभ्यास को, बग़ैर किसी क़िस्म के ख़तरे के, अपने गृहस्थी में बैठे हुए और उद्यम करते हुए, थोड़े शौक़ के साथ, संत सतगुरु का बल लेकर कर सकते हैं। ऐसा मार्ग आज तक प्रकट नहीं

हुआ, नहीं तो पिछले वक़्त के लोग क्यों हठ-योग और प्राणायाम वग़ैरा के साधन में पचते और खपते और फिर भी पूरा फल यानी सच्चा उद्धार हासिल नहीं हुआ।

१६—सिवाय इसके, सुरत-शब्द मार्ग की एक और भारी सिफ़त यह है कि जो कोई इसका अभ्यास करता है, वह भारी से भारी कष्ट और क्लेश और ख़ौफ़ और चिंता में, थोड़ी तवज्जह अपने अन्तर में, ऊँचे के देश की तरफ़ करने से, फ़ौरन थोड़ा-बहुत बचाव यानी रफ़ाह हासिल कर सकता है। ऐसे वक़्त में, इस दुनिया में कोई किसी का मददगार नहीं हो सकता, लेकिन शब्द का अभ्यास फ़ौरन थोड़ी-बहुत उसकी कमाई के मुवाफ़िक़ मदद दे सकता है। यह बात इस दुनिया में नापैद है, मगर संत सतगुरु की दया से, अदना से अदना जीव को, जो उनकी सरन में आया, सहज में प्राप्त हो सकती है। यह महिमा इस अभ्यास की सब से भारी है।

२०—इसी तरह, संत सतगुरु की दया और मेहर की बड़ाई का ख़्याल करो कि जो जीव सच्चे मन से सरन में आया, उसका उद्धार और उसके कुटुम्ब का उद्धार, अपनी दया से आप करते हैं, यानी अपनी मेहर का बल देकर, और थोड़ा-बहुत अभ्यास करा कर, उसको ऊँचे देश में आप ले जाते हैं, और फिर तीन-चार जनम देकर और हर जनम में ज़्यादा कमाई करा कर, निज घर में पहुँचा कर, सच्चा और पूरा

उद्धार फ़रमाते हैं। ऐसी दया न कभी हुई और न सिवाय संत सतगुरु के, और कोई कर सकता है। पिछले ज़माने में, हज़ारों और सैकड़ों वर्ष, लोगों ने तप-जप वग़ैरा, बड़ी मेहनत और तकलीफ़ के साथ किये, पर सिवाय शुभ कर्म के, और फल नहीं मिला, और न उनका सच्चा उद्धार हुआ।

२१—अब, सुरत-शब्द मार्ग और संत सतगुरु की दया की ऐसी महिमा सुन कर, जो जीवों को प्रतीत न आवे, और उनके हिरदे में प्रीत और शौक़ न जागे, तो जानना चाहिए कि वे महा अभागी हैं, और काल और माया के साथ उनका संजोग लगा हुआ है कि जिसके सबब से, वे, उन्हीं के घेर और जाल में फँसे रह कर, बारम्बार जनमेंगे और मरेंगे, और ऊँची-नीची जोनों में भरम कर, दुख-सुख सहते रहेंगे, और कोई उनकी सहायता नहीं करेगा।

२२—संत सतगुरु, बचन से, जीवों को समझाते-बुझाते हैं। और जो कोई न माने तो उस पर किसी तरह का ज़ोर और दबाव नहीं डालते, यानी जीवों की आज़ादगी में, जो मौज से हर एक को दी गई है, दख़ल नहीं देते। जो उनके बचन की प्रतीत लाकर, उनकी जुक्ति का अभ्यास करेगा, वह परम पद को पावेगा और जो नहीं मानेगा वह काल-देश में भरमता रहेगा।

बचन ३०

क़ुदरती सबूत इस बात का कि सिर्फ़ राधास्वामी मत में, असल भेद सच्चे मालिक और उसकी क़ुदरत का, और सच्चा और पूरा तरीक़ा जीव यानी सुरत के सच्चे और पूरे उद्धार का, वर्णन किया है, और जिसके समझने और अभ्यास करने के वास्ते कुछ ख़ास ज़रूरत विद्या के पढ़ने की नहीं है, यानी राधास्वामी मत के भेद और जुगत को मर्द और औरत, पढ़े-लिखे और अनपढ़, सब आसानी से समझ सकते हैं, और उसका अभ्यास मेहर और दया से बे-ख़तरे और निर्विघ्न कर सकते हैं।

१—संत सतगुरु राधास्वामी दयाल फ़रमाते हैं कि कुल्ल रचना में तीन दरजे हैं—एक, निर्मल-चैतन्य देश, जहाँ चैतन्य ही चैतन्य है और माया की मिलौनी नहीं है, और यही देश, संत-देश और दयाल-देश कहलाता है, और इसी देश के ऊपर की तरफ़ कुल्ल मालिक का धाम है, और वह अपार और अनन्त है, और यहीं से आदि-

शब्द की धार प्रकट हुई, जिसने किसी क़दर फ़ासले पर ठहर कर अगम लोक और अलख लोक और सत्तलोक की रचना करी।

२–दूसरा दर्जा, ब्रह्मांड कहलाता है। इसमें निर्मल-माया प्रकट हुई और चैतन्य से मिल कर इस देश में रचना हुई, और वह रचना जोत-निरंजन ने (जो कि दो कला सत्तलोक से निकस कर नीचे आई) करी।

३–तीसरा दर्जा, निर्मल-चैतन्य और मलीन-माया देश है, जहाँ देवता और मनुष्य और असुर और बाक़ी चारों खान के जीव, पशु और परिंद और कीड़े-मकोड़े और वनस्पति वग़ैरा पैदा हुए।

४–इसी देश में मनुष्य स्थूल देह में बैठ कर अनेक पदार्थों यानी इन्द्रियों के भोगों में और कुटुम्ब-परिवार के सँग बँध गये हैं। अब जो कोई कि आप छूटा हुआ है, या छूटे हुए का संग करके अपने छूटने का सच्चा होकर जतन कर रहा है, और थोड़े अर्से में जो धुर-मंज़िल पर पहुँचने वाला है, वह बँधे हुए जीवों के बंधन काट कर, निज घर में लेजा सकता है, लेकिन शर्त यह है कि जीव उसके बचन को मानें, यानी उसकी हिदायत के मुवाफ़िक़ अभ्यास करें, और जो हालत कि सच्चे अभ्यासियों पर गुज़रती है, वह जीते-जी देखते जावें, और उस हालत के मुवाफ़िक़ उनकी रहनी दिन २ बदलती जावेगी।

५—संतों ने फ़रमाया है कि कुल्ल रचना धारों की है, और वे धारें सूक्ष्म देश में सूक्ष्म हैं, और स्थूल देश में, स्थूल हो गई हैं। इस वास्ते, जिस धार के साथ, सुरत नीचे उतर कर आई, वह उसी धार को पकड़ के, अपने निज देश को लौट सकती है। यही धार, नूर और जान और शब्द की धार है। सो शब्द की धुन को पकड़ के, स्थान २ पर चढ़ना और चलना चाहिये, क्योंकि शब्द की बराबर कोई सच्चा और पूरा गुरू नहीं है, और शब्द ही अँधेरे में प्रकाश करने वाला और रास्ता दिखा कर धुर-पद में पहुँचाने वाला है।

६—बच्चे की पैदायश और उसके जिस्म के बढ़ाव से, और भी मौत के वक़्त, रूह के खिंचाव की हालत को देख कर, साफ़ ज़ाहिर होता है कि सुरत रूह की धार मस्तक से उतर कर जा-ब-जा पिंड में फैली है, और जाग्रत के समय, निज बैठक उसकी आँख के तिल में है, क्योंकि जहाँ तिल ज़रा भी ऊपर की तरफ़ को खिंचा, फ़ौरन देह और इन्द्रियाँ वग़ैरा बेकार हो जाती हैं। फिर जो हालत कि सुरत के खिंचाव की, अपने भण्डार यानी मस्तक की तरफ, जैसा कि मौत के वक़्त होती है, अपने जीते-जी, यानी इसी ज़िंदगी में अभ्यास की मदद से होती जावे, तो ऐसे अभ्यासी को फ़ौरन सबूत इस बात का मिल जाता है कि रूह के खिंचाव में, आसानी

से बंधन अंतर और बाहर के, ढीले हो जाते हैं, और दुख-सुख संसार की हानि और लोभ का, और देह और कुटुम्ब-परिवार का, बहुत कम व्यापता है, और अन्तर में आनन्द और सरूर थोड़ा-बहुत मिलता जाता है।

७-संत कहते हैं कि यह दुनिया नाशमान है और कोई चीज़ यहाँ थिर नहीं है, और भोग और विलास भी यहाँ के तुच्छ हैं, यानी पूरी शान्ति उनसे हासिल नहीं हो सकती। इस वास्ते इस संसार में बर्ताव ज़रूरत के मुवाफ़िक़ और मुनासिब तौर पर चाहिये कि जिसमें गहरा बंधन और गिरफ़्तारी न हो जावे, नहीं तो थोड़े से सुख के साथ दुख और तकलीफ़ भी सहनी पड़ेगी।

८-और हर एक आदमी को, चाहे मर्द होवे या औरत, लाज़िम है कि गहरे और ठहराऊ सुख की प्राप्ति के लिये, थोड़ा-बहुत जतन ज़रूर करें, और वह सुख, सिर्फ़ निर्मल चैतन्य देश में, जहाँ काल और माया नहीं हैं, प्राप्त हो सकता है। इस वास्ते, उस देश में पहुँचने की जुगत, संत सतगुरु से दरियाफ़्त करके, अपने घट में उसका अभ्यास करना चाहिये, तो थोड़ा-बहुत आनन्द अंतर में मिलना शुरू हो जावेगा और वही आनंद रफ़्ता-रफ़्ता अभ्यासी की प्रीत और प्रतीत को जगा कर बढ़ता जावेगा, और एक दिन निज घर में पहुँचा देगा।

९-अब हर एक आदमी को, चाहे औरत होवे या

मर्द, इन बातों पर, जो नीचे लिखी जाती हैं, और जो रोज़मर्रा उनकी नज़र से गुज़रती हैं, या जिन का बर्ताव रोज़मर्रा उनकी देह यानी उनके आपे में जारी है, ग़ौर करके, अपने जीव के कल्यान के वास्ते, और भी वास्ते फ़ायदे और आराम के, इस दुनिया में, ज़रूर कार्रवाई मुनासिब, मुवाफ़िक़ हिदायत संतों के, करना चाहिए, नहीं तो यहाँ भी और आइन्दा भी बहुत कष्ट और कलेश सहना पड़ेगा, और फिर उसके दूर करने का जतन बहुत मुश्किल हो जावेगा और फिर पछताने और अफ़सोस करने से कुछ हासिल नहीं होगा। और वे बातें ये हैं :—

(१) सुरत-रूह कुल मालिक राधास्वामी दयाल की अंस है, जैसे सूरज और सूरज की किरन, क्योंकि कुल्ल कार्रवाई रचना की सुरतों के द्वारे हो रही है और सम्हाल उसकी, कुल्ल मालिक, जो सब सुरतों का भंडार है, कर रहा है। यानी एक-एक सुरत एक-एक पिंड में बैठ कर, चाहे वह पिंड ज़मीन पर है या आसमान में, उसकी कार्रवाई कर रही है। और यह बात जिस वक़्त से कि पिंड का ज़हूर और बनाव शुरू होता है, और जब तक कि वह पिंड क़ायम रहता है, यानी जब तक कि सुरत उसमें ठहरती है, इस दुनिया में इन आँखों से दिखलाई देती है। देखो किसी दरख़्त के बीज को, जिस वक़्त कि उसमें से कुला

फूटता है यानी सुरत की धार अपना ज़हूर करती है, उसी वक़्त से तमाम शक्तियाँ क़ुदरत की (खैंच-शक्ति, हटाव-शक्ति, बनाव-शक्ति, संहार-शक्ति, चुम्बक-शक्ति, बिजली की शक्ति और रोशनी की शक्ति वग़ैरा) और पाँच तत्त्व (आकाश, हवा, अग्नि, पानी और पृथ्वी) और तीन गुण (सतोगुण, रजोगुण और तमोगुण) जिनका नमूना यहाँ पर आक्सीजन, हाईड्रोजन और नाइट्रोजन गैस हैं, हाज़िर होकर, सुरत-रूह की ताबेदारी में, आपस में रल-मिल कर, पिंड के बनाव और बढ़ाव और सम्हाल में मदद देते हैं। और जब तक रूह उस पिंड में ठहरी रहे, तब तक बराबर इसी तरह ख़िदमत और सेवा करते हैं। और जिस वक़्त कि रूह पिंड को छोड़ती है, उसी वक़्त आपस में लड़-भिड़ कर उसका रूप और रंग बिगाड़ कर सब हट जाते हैं। सिर्फ़ पृथ्वी तत्व का कारज यानी ख़ाक पड़ी रह जाती है। यही हाल कुल्ल जानदारों का, वक़्त पैदाइश से और अख़ीर दम तक, इन आँखों से, जिस क़दर कि मुमकिन है, नज़राई देता है। और यही सबूत इस बात का है कि यह सुरत उस कुल्ल मालिक की अंस है। क्योंकि जब इसकी ताक़त ऐसी बड़ी है कि जहाँ यह अपना ज़हूर करे यानी इसकी प्रथम धार प्रकट होवे, उसी जगह और उसी वक़्त से तमाम क़ुदरत की शक्तियाँ और मसाला इसकी ताबेदारी में हाज़िर होकर कार्रवाई करते हैं, फिर वह

मंडार, कि जिसकी यह सुरत एक ज़र्रा है, कुल्ल का कर्त्ता और कार-फ़रमा यानी सर्व-समर्थ हुआ, और उसी का नाम सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल है और यह सुरत उसकी अंस साबित हुई।

(२) माया एक पदार्थ ग़ुबार-रूप और जड़ है। सुरत-चैतन्य की धार के मिलने से, इसमें से पाँच तत्व और तीन गुन और अनेक शक्तियाँ, जो कि रचना का मसाला और कारकुन हैं, पैदा हुईं। यह माया, वक़्त उतार सुरत के, अपने घेर में, उसका ग़िलाफ़ होती चली आई, यानी तह पर तह उस पर चढ़ते गये। यहाँ तक कि इस लोक में सुरत निहायत स्थूल ग़िलाफ़ यानी पिंड में बैठ कर, उसके औज़ार यानी इन्द्रियों के द्वारे कार्रवाई करती है, और इसी तरह सूक्ष्म देह से सूक्ष्म रचना में, जिसको स्वप्न देश और आलम-ए-मलकूत कहते हैं, कार्रवाई करती है। अब, जब तक कि सुरत माया के घेर के, यानी रचना के तीसरे और दूसरे दरजे के पार न जावे, तब तक अपने निज देश में पहुँच कर परम सुख को प्राप्त नहीं होगी।

(३) माया के ग़िलाफ़ को देही कहते हैं। और इस का जड़ होना इस तरह पर साबित है कि जब आदमी सों जाता है, उस वक़्त, उसको अपनी देह और दुनिया की कुछ ख़बर नहीं रहती, या जब डाक्टर लोग क्लोरोफ़ार्म सुँघा देते हैं और उसके सूँघने से रूह की धार आँख के

मुक़ाम से (जहाँ कि उसकी जाग्रत अवस्था में बैठक है) हट जाती है, तब बदन काट डालते हैं, और उसका कुछ दर्द और दुख नहीं होता, या यह जाग्रत में कोई दुख या दर्द या तकलीफ़ हो रही है और जब नींद आ गई, फिर वह दुख नहीं व्यापता, बल्कि स्वप्न-अवस्था में सूक्ष्म शरीर से भोग-विलास और ऐश और आराम करता है, और स्थूल देह के रोग-सोग और चिन्ता का वहाँ ख़्याल भी नहीं रहता। इसी तरह जब गहरी नींद में सो जाता है, तब सूक्ष्म शरीर और उसकी कार्रवाई भी मौक़ूफ़ हो जाती है। इस बयान से इन दोनों शरीर का यानी, स्थूल और सूक्ष्म का, ख़िलाफ़ होना साबित हो गया, और यह कि सुरत-रूह का स्वरूप उनसे बिलकुल जुदा है और उसी की धार से ये चैतन्य हैं, और धार के खिंच जाने पर बेकार हो जाते हैं।

(४) जितने भोग बिलास हैं, उनका सुख और रस और स्वाद, सुरत की धार के वसीले से मालूम होता है। जो वह धार शामिल न होवे तो कोई स्वाद और रस नहीं आवें। और स्वप्न-अवस्था की कार्रवाई का विचार करने से साबित होगा कि सर्व सुख, रस और स्वाद सुरत चैतन्य की धार में हैं, क्योंकि स्वप्न अवस्था में कुल्ल इन्द्रियों के भोग करता है और उस वक़्त वहाँ कोई पदार्थ बाहर मौजूद नहीं होता, और न स्थूल इन्द्रियाँ कुछ काम

करती हैं। फिर सर्व रस और स्वाद और उनके भोगने की शक्ति का, अंतर में, सुरत की धार में मौजूद होना साबित हो गया।

(५) अब ग़ौर करो कि जब सुरत की धार में सर्व-रस और सुख मौजूद हैं और यह सुरत एक ज़र्रा है उस कुल्ल मालिक का, जिसका रचना के पहिले दरजे में अथाह सिंध रूप करके बासा है, और जहाँ माया की मिलौनी का गद्लापन नहीं है, फिर वहाँ के सुख और रस और आनन्द का कौन और कैसे अन्दाज़ा कर सकता है? वह आनन्द बेअंत और अपार है।

(६) यह संसार माया का देश है और सुरत का निज घर, पहिले दरजे, यानी राधास्वामी धाम में है। यहाँ शुरू में जोत-निरंजन यानी माया-ब्रह्म, सुरत को, सत्तपुरुष से माँग कर, नीचे लाये और फिर इस को तन-मन में घेर कर, कर्म जाल में फँसाया, और तरह २ की आसा इस संसार की बँधवाई, जिसका नतीजा यह हुआ कि सुरत, कर्म और बासना के सबब से, देह में बारम्बार आती है, और उसके संग, यहाँ जड़ पदार्थों और दूसरे जीवों के संग बँध कर, दुख-सुख भोगती है, और जब देह को छोड़ जाती है और जो इसकी चाह भोगों में रही, और देही को अपना रूप और इस संसार को अपना देश जाना, तो बारम्बार उस ज़बर चाह और स्वभाव के मुवाफ़िक़, देह धारन करेगी

और फिर छोड़ेगी, यानी जनम-मरन का चक्कर नहीं हटेगा और जो दुख-सुख कि देह के साथ लाज़िमी हैं, ज़रूर भोगने पड़ेंगे। और उन सख्त दुक्खों में कोई इसका सच्चा और पूरा सहाई और मददगार नहीं हो सकता।

(७)—जब तक कि सुरतें इस देश में, देहियों के साथ बँध कर, सुख भोगती रहीं तब तक सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल ने ख़ास तवज्जह उनकी तरफ़ नहीं की। लेकिन जब से कि सुरतों को, इस संसार में दुख विशेष होने लगा, तब दया करके, राधास्वामी दयाल, संत सतगुरु रूप धारन करके, आप इस संसार में प्रकट हुए और अपने बचन से सुरतों को समझाया कि यह देश काल का है। रास्ते का भेद और जुगत चलने की, सुरत-शब्द मारग से बतला कर अपनी दया के बल से, उनको अन्तर में चढ़ाना और आहिस्ता २ पिंड से न्यारे करना शुरू किया, और ऐसी मौज, मेहर और दया से, फ़रमाई कि जो कोई उनके चरन की सरन लेकर, उस जुगत की कमाई सच्चे मन से प्रेम-अंग लेकर शुरू करे, उसको वे आप दया से मदद देते हुए, काल और कर्म और माया के विघ्नों से बचा कर, घट में एक मुक़ाम से दूसरे और दूसरे से तीसरे और इसी तरह धुर धाम में पहुँचा कर, चरनों में बासा देंगे, कि जहाँ हमेशा के वास्ते, परम-आनन्द को प्राप्त हो कर, दर्शन के बिलास का सुख और आनन्द लेता रहे। सुरत-शब्द

मार्ग से मतलब यह है कि जस धार पर सुरत उतर कर आई, उसी धार को पकड़ कर लौट जावे, और वही धार रूह और जान और अमृत और नूर और शब्द की धार है, यानी आवाज़ आसमानी को सुनते हुए, जहाँ से कि वह आवाज़ आती है, उस मुक़ाम पर पहुँचना।

(८) जो जीव कि इस बचन को सुन कर और ऊपर की लिखी हुई बातों का अपने मन में ग़ौर और विचार करके समझेंगे कि जो कि इस देह और देश को छोड़ना ज़रूर पड़ेगा, और जो बासना देह और भोगों की रही तो फिर जन्म लेना भी ज़रूर होगा, इस वास्ते, जनम-मरन और देह के दुख-सुखों से बचने की नज़र से, और वास्ते हासिल करने परम आनंद के, सुरत के निज देश में, मुनासिब और ज़रूर है कि आँख के स्थान से, सुरत को, अन्तर में ऊँचे की तरफ़ (जहाँ कि सुरत का निज देश है) उल्टाने का जतन, जैसा कि राधास्वामी दयाल ने बताया है, किया जावे, तो उनको वक़्त तलाश, मौज से ज़रूर पता राधास्वामी दयाल के सतसंग का मिल जावेगा, और वहाँ से जुगत अभ्यास की भी मालूम हो जावेगी। और जब वे सच्चे मन से प्रेम के साथ अभ्यास शुरू करेंगे, तब उनको राधास्वामी दयाल अपनी मेहर और दया से, अंतर और बाहर, मदद करते जावेंगे कि

जिसमें उनका रास्ता आहिस्ता २ तै होता जावे और एक दिन धुर धाम में पहुँचा देंगे।

(९) और जो जीव कि इस बचन की प्रतीत न करके संसार और उसके भोग-बिलास में फँसे रहेंगे, वे ब-दस्तूर जनम-मरन और देहियों के साथ जो दुख-सुख लाज़िमी हैं भोगते रहेंगे, और काल के जाल से छुटकारा उनका नहीं होगा, क्योंकि सिवाय संत सतगुरु के और किसी की ताक़त नहीं है कि जीवों को, काल के जाल से निकाल कर निज घर में पहुँचावे। रास्ते के, यानी तीसरे और दूसरे दरजे के मुकामों में जोगी और जोगीश्वर और दूसरे महात्माओं की मदद से चाहे कोई पहुँच जावे, पर कुछ अर्से तक सुख भोग कर फिर नीचे उतारा जावेगा, यानी जनम-मरन की फाँसी चाहे जल्द होवे या देर करके, काटी नहीं जावेगी, और निज घर में, जो कि माया के घेर के पार है, बासा नहीं पावेगा।

(१०) तीर्थ, व्रत और मूर्ति-पूजा, और जप, तप आदिक साधन करने वाले, और विद्या के पढ़ने वाले लोगों को, इन कामों को करने से सच्ची मुक्ति का फल नहीं मिल सकता, क्योंकि इन कामों का कुछ भी ताल्लुक सुरत-रूह का धार से, जो मस्तक से उतर कर आँखों के मुक़ाम में ठहरी है, नहीं है, और न इनका असर कुछ उस पर पहुँचता है। फिर ये काम मुक्ति के साधन कैसे हो सकते हैं ? मुक्ति या

उद्धार, बंधनों से छूटने, और निज घर में (जहाँ माया नहीं है) पहुँचने का नाम है। और जब कि सुरत ब-दस्तूर आँखों के मुकाम पर तन, मन और इन्द्रिय और जगत में बँधी रही, और कुछ भी उसकी, इस स्थान से, तरफ़ अपने निज घर के, हरकत नहीं हुई, तो बन्धन कैसे छूट सकते हैं ? और सुरत और मन ऊपर की तरफ़ को कैसे चढ़ सकते हैं ? इस वास्ते, जिस क़दर बाहरमुख कार्रवाई कि कुल्ल मतों में, जो आज-कल जारी हैं, हो रही है, वह सब शुभ कर्म का फल, यानी थोड़े अर्से के वास्ते सुख दे सकती है, पर सच्चे उद्धार की प्राप्ति के लिए यह कार्रवाई कुछ काम नहीं दे सकती।

(११) इसी तरह जो लोग किसी मत में अन्तरमुख कार्रवाई करते हैं, यानी मुक़ाम नाफ़ या हिरदे या किसी और चक्र में (जो छः चक्र में शामिल है) अभ्यास नाम का, या ध्यान वग़ैरा, या पवन का रोकना, या ठहराने का जतन कर रहे हैं, और उस कार्रवाई का सिलसिला सुरत की धार से नहीं लगा हुआ है, तो वे भी संत मत के मुवाफ़िक बाहरमुखी हैं। क्योंकि घट दो हैं—एक, स्थूल ताल्लुक पिंड के, उस में छः चक्र हैं, और दूसरा, सूक्ष्म यानी निज घट, जो मस्तक में है। यह दोनों आपस में मुँह मिला कर गर्दन के मुक़ाम पर जमे हुए हैं। नीचे का घट सीधा और ऊपर का घट उल्टा रक्खा हुआ है।

कुल्ल शक्तियाँ और कुव्वतें, ऊँचे दरजे की, निज घट में हैं और कुल्ल मालिक और भी सुरत का बासा निज घट में है। फिर जो अभ्यास कि निज घट तक उसका सिलसिला या असर नहीं पहुँचता है, वह बाहरमुखी और ख़ारिज है। उससे रूह-सुरत पर कोई असर नहीं पहुँचता, और इस वास्ते वह सच्ची मुक्ति का साधन नहीं हो सकता।

(१२) जान की धार से बढ़कर रचना भर में कोई दूसरी धार नहीं है। कुल्ल धारें, सुरत यानी जान की धार के आधीन हैं यानी इसी धार से चैतन्य हैं। फिर सुरत-शब्द मार्ग से (जिसमें सुरत-रूह को, उसकी धार से जो ऊपर से आ रही है, मिला कर, ऊपर की तरफ़ चढ़ाया जाता है) बढ़कर कोई दूसरा रास्ता या जतन असल में पैदा नहीं हुआ और न हो सकता है। इस वास्ते, कुल्ल जीवों को चाहिए कि अपने जीव के कल्यान के वास्ते सिर्फ़ इसी रास्ते पर चलें, यानी सुरत-शब्द जोग की जुगती कमावें, और दूसरे झगड़ों और बखेड़ों में न पड़ें, नहीं तो मुफ़्त तन, मन, धन बरबाद करेंगे। और हासिल उसका, सिवाय थोड़े अर्से के सूख के, और कुछ नहीं होगा। और जब वह पुण्य कर्म, जिन से सुख हासिल हुआ, ख़तम हो जावेगा। फिर जनम-मरन के चक्कर में गिरफ़्तार होकर, नीची-ऊँची जोनों में चक्कर खावेगा, और अपने कर्म और वासना के मुवाफ़िक़ दुख-सूख भोग करेगा।

बचन ३१

वर्णन इस बात का कि संत-मत के मुवाफ़िक राधास्वामी पद कुल्ल का अख़ीर और सिदान्त है, और यही अपार और अनंत है। इसके परे और कोई पद नहीं है और न हो सकता है।

१—सब सतसंगियों को इस बात का पूरा निश्चय होना चाहिये कि राधास्वामी धाम कुल्ल आदि और का अंत पद है, और उसके परे कोई और पद नहीं है और न हो सकता है।

२—कुल्ल रचना में तीन दरजे हैं—एक, निर्मल चैतन्य देश, जहाँ सिवाय चैतन्य के दूसरा नहीं है। दूसरा, ब्रह्म और शुद्ध-माया देश, जिसको ब्रह्माण्ड कहते हैं, और जहाँ ब्रह्म (यानी ब्रह्माण्डी मन) प्रधान है। तीसरा, पिंड यानी जीव और मलीन-माया देश, जहाँ माया प्रधान है।

३—इन्हीं तीन देश और उन तीनों देश के प्रधानों के मुवाफ़िक कुल्ल रचना में तीन दरजे हो गये। कुल्ल जिस्मों में, चाहे वह ज़र्रे के मुवाफ़िक़ होवें या सूरज के, हर एक में, वे तीन दरजे मौजूद हैं। इन दरजों को मस्तक, काया और चरन कहते हैं। और उसी मुवाफ़िक़

ये तीन दरजे यानी उत्तम, मध्यम और निकृष्ट यानी आला, औसत और अदना मुक़र्रर हुए।

४—रचना में मस्तक, यानी आला और ऊँचा दरजा, निर्मल और महा विशेष चैतन्य का भण्डार है, और मध्यम दरजा, यानी काया, विशेष चैतन्य यानी ब्रह्माण्डी मन का (जिसको ब्रह्म कहते हैं) देश है। इसी के यह फुरना हुई कि मैं सत्तलोक यानी ऊंचे दरजे के मुवाफ़िक रचना करूँ, और एक से अनेक हो जाऊँ। और पिंडी मन इसी की अंश यानी कारज है। और तीसरा दरजा, जिसको चरन और निकृष्ट करके कहा है, माया का देश है। यहाँ जड़ता यानी तमोगुन विशेष है और देह और उसके औज़ार इन्द्रियाँ वग़ैरा उसका कारज हैं।

५—अब समझना चाहिये कि कुल्ल रचना में तीन प्रधान हैं, और हर एक का ख़ास या निज देश जुदा-जुदा है। यानी उस ख़ास देश में उसी की प्रधानता यानी विशेषता है। और वे तीनों प्रधान ये हैं—पहले, सुरत-चैतन्य जिसका निज देश पहिला दरजा है और वही सब से ऊँचा और उत्तम है। दूसरा, मन, जिसका निज देश दूसरा दरजा यानी ब्रह्मण्ड है। तीसरी, माया, जिसका निज देश तीसरा दरजा यानी पिंड (जो कि निकृष्ट है) समझना चाहिये। इन्हीं तीन से कुल्ल रचना, दूसरे और तीसरे दरजे में प्रकट हुई, और ठहरी हुई है। लेकिन पहिले दरजे, यानी

दयाल देश में निर्मल रूहानी रचना है और वहाँ मन और माया बिलकुल नहीं हैं। वहाँ की रचना का ग़िलाफ़ हुबाबी, निहायत लतीफ़ और रूहानी है। माया की मिलौनी वहाँ नहीं है। इसी सबब से वह देश महा उत्तम और महा आनंद का भंडार है।

६—अब मालूम होवे कि हर एक दरजे में दो-दो भाग हैं। एक ऊपर का, और एक नीचे का। और हर एक भाग में तीन २ दरजे हैं, यानी हर एक बड़े दरजे में छः छोटे दरजे हुए। चुनांचे पिण्ड में छः दरजे, यानी चक्र, हैं। इसी तरह ब्रह्माण्ड में भी तीन दरजे ऊँचे के भाग में, और तीन दरजे नीचे के भाग में (जहाँ कि तीनों गुण, ब्रह्म, विष्णु, महादेव का निज रूप है) हैं, और ऐसे ही अव्वल दरजे में भी छः स्थान का भेद किया है। सबमें ऊँचा दरजा, अपार और अनन्त और अथाह और अगाध है, और वही कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल का निज धाम है।

७—अब ग़ौर करके समझना चाहिये कि जब कि इस रचना में तीन प्रधान का मौजूद होना साफ़ ज़ाहिर है, यानी हर एक जानदार में (१) सुरत रूह और (२) मन और (३) देह और इन्द्रिय वग़ैरा मौजूद मालूम होते हैं, और इन्हीं तीन के वसीले से कुल्ल कार्रवाई हो रही है, यानी सुरत-चैतन्य कुल्ल की कर्त्ता और प्रेरक है, और मन

उससे ताक़त लेकर अपनी कार्रवाई करता है यानी संकल्प-विकल्प उठाता है, या आँकि पहले उसमें गुप्त फुरना या हिलोर होती है (यानी तरंग उठती है) और फिर उसी मुवाफ़िक़, देह और उसके औज़ार इंद्रियाँ प्रकट कार्रवाई करती हैं, और सिवाय इन तीनों के और कोई कारज-कर्त्ता या कारज देने वाला नहीं है।

८—और जब कि इन तीनों यानी (१) सुरत, कारज-करता और (२) मन और (३) देह इन्द्रियाँ वग़ैरा के सिवाय और कोई नहीं है और इन तीनों का देश जुदा २ मुक़र्रर हो गया, तो इन तीन देशों के परे और कोई देश या दरजा नहीं हो सकता। इस वास्ते जो कोई ऐसा कहे कि राधास्वामी धाम के परे और भी मुक़ाम मुमकिन है, यह कहना उसका महज़ ग़लत और ना-दुरुस्त है, और इस वास्ते, राधास्वामी धाम ही, कुल्ल का अख़ीर और सिद्धान्त पद है, और इसके परे दूसरा पद हरगिज़ नहीं हो सकता। वही पद, अपार और अनंत और अथाह है। उसमें कोई दरजा या भाग का होना मुमकिन नहीं है।

९—इस वास्ते, कुल्ल जीवों को, जो राधास्वामी मत में शामिल होवें, इस बचन को अच्छी तरह समझ कर, पूरा निश्चय कुल्ल मालिक राधास्वामी का, हिरदे में धारन करके, उन्हीं के चरनों में पहुँचने की आसा दृढ़ करके, जतन में लगना चाहिये। और किसी तरह का भरम और

सन्देह अपने चित्त में इस क़िस्म का न लाना चाहिये कि जब वेद-मत के सिद्धान्त के परे संत-मत का सिद्धान्त उससे ऊँचे देश में समझा गया, तो शायद आइन्दा इसके भी परे कोई दूसरा मत अपना सिद्धान्त पद ज़ाहिर करे, क्योंकि ऊपर के लिखे हुए बचन से साफ़ ज़ाहिर और साबित होता है कि राधास्वामी पद के परे और कोई देश का होना ना-मुमकिन है और जो कोई अपने मत की बड़ाई दिखाने को, कोई पद अपनी तरफ़ से नया नाम रख कर बयान करे, तो उसका कहना बिलकुल झूठ और ना-मुमकिन समझना चाहिये। और पहिले तो वह पिण्ड और ब्रह्माण्ड और उसके परे संत अथवा दयाल देश का भेद तफ़सील के साथ नहीं बयान कर सकेगा, क्योंकि किसी मत में यह भेद खोल कर, जैसा कि संतों ने दया करके फ़रमाया है, किसी दरजे तक का भी नहीं लिखा है। फिर जो कोई कि झूठा दावा करे और थोड़ा-बहुत भेद रास्ते का बयान भी करे, तो जानना चाहिये कि वह राधास्वामी मत की किताबों से चोरी करके कहता है। और जो उसकी कहन की, ब-ग़ौर जाँच की जावेगी, तो ज़रूर उसकी चोरी और नादानी, भेद के उल्टे-पल्टे या नीचे-ऊपर के बयान में निकल आवेगी।

१० इस वक़्त में, जो रास्ते का भेद इस क़दर खोल करके कहा गया है, यह कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल

ने, आप संत रूप धर कर, प्रकट किया है। किसी पिछले संत ने भी इस तरह, सफ़ाई और आसानी के साथ नहीं खोला। फिर किसी जीव की क्या ताक़त कि जो इस क़िस्म का भेद कह सके, सिवाय उस हालत के कि उसने ख़ुद संत सतगुरु से सीखा और समझा होवे? अब संशय और भरम छोड़ कर, पूरा और पक्का निश्चय राधास्वामी के बचन का मन में धारन करके, सच्ची और पक्की आसा उनके चरनों में पहुँचने की, बाँध कर, सुरत-शब्द मार्ग का अभ्यास शुरू करना चाहिये, और उनकी दया का बल लेकर आहिस्ता २ रास्ता तै करना चाहिये। संत सतगुरु राधास्वामी दयाल की मेहर से, एक दिन, धुर पद में पहुँच कर परम आनंद को प्राप्त होगा, और वहीं विश्राम पावेगा और मालूम होवे कि राधास्वामी मत के अभ्यासी को कुल्ल मतों का सिद्धान्त और फिर वेद मत का सिद्धान्त पद रास्ते में मिलेगा। और वहाँ की सैर करके अभ्यासी की सुरत, ऊपर चढ़ कर, राधास्वामी के निज धाम में पहुँच कर, परम-आनंद को प्राप्त होवेगी।

बचन ३२

शब्द द्वारे सुरत अपने निज घर में (जो कि राधास्वामी धाम है) पहुँच सक्ती है। और

द्वारों से धुर मंज़िल तक नहीं पहुँचेगी। कहीं न कहीं रास्ते में अटक रहेगी और कारज पूरा नहीं बनेगा।

१—जितने द्वारे पिंड में हैं, उन सब पर रूह की धार उतर कर, भोग-बिलास और संसार का कारज करती है। सो इन सब द्वारों से, सुरत के सिमटाव का जतन मुमकिन है, यानी चाहे जिस द्वारे से कोई सुरत को उलटाना चाहे तो वह उलट सकती है।

२—कुल्ल द्वारे पिंड में नौ हैं—यानी दो द्वारे आँखों के, दो कानों के, दो नासिका के, एक मुख, एक लिंग यानी पेशाब की इन्द्रिय, और एक गुदा यानी पाखाने की इन्द्रिय।

३—जाग्रत अवस्था में, अगर्चे सुरत की धार सब इंद्रियों के द्वारे पर मौजूद हो कर कार्रवाई करती है, पर आँख के मुक़ाम पर, उसकी ख़ास बैठक समझी जाती है, क्योंकि पुतली के ज़रा से खिंचाव और चढ़ाव में फ़ौरन देह और कुल्ल इन्द्रियाँ बेकार हो जाती हैं।

४—सुरत के चढ़ाने के वास्ते, चाहे जिस द्वारे से शुरू किया जावे, कोई आसरा यानी सवारी ज़रूर दरकार है। बग़ैर इसके, तनाव और खिंचाव और चढ़ाव मुमकिन नहीं है।

५–जिस किसी ने गुदा चक्र से खिंचाव और चढ़ाई शुरू की, वे प्राणों के आसरे चले। यह सवारी बहुत कठिन है। और इसके संजम और परहेज़ भी बहुत मुश्किल हैं। गृहस्थी जीवों से इस अभ्यास का बन आना ना-मुमकिन है, और ख़ौफ़नाक है। यानी ज़रा सी बद-परहेजी और बे-तरतीबी से सख़्त बीमारी या जान के जाने का ख़ौफ़ है। और इसी तरह विरक्तों से भी यह अभ्यास दुरुस्ती से पूरा २ नहीं बन सकता। इस द्वारे पर, यानी गुदा चक्र में, गनेश का बासा है। और बहुतेरे, इस देवता के ध्यान और पूजा में अटक कर यहाँ के यहीं रह गये, और जो किसी बिरले विरक्त से, यह अभ्यास प्राणों की चढ़ाई का, थोड़ा-बहुत दुरुस्ती से बन पड़ा, तो नाभी या हिरदे या कंठ चक्र में पहुँच कर थक गये, और वहीं थोड़ी-बहुत सिद्धि और शक्ति हासिल करके रह गये। कोई बिरला अभ्यासी छठे चक्र तक पहुँचा, और भक्त-राज कहलाया, कोई २ उसके परे चिदाकाश में समाये और जोगी और ज्ञानी कहलाये।

६–किसी २ ने इन्द्री द्वारे से अभ्यास शुरू किया और काम की धार के आसरे चढ़ने का इरादा किया। और किसी क़दर प्राणों के रोकने का अभ्यास भी उसके संग किया। लेकिन यह आसरा या सवारी ऐसी सख़्त और अजीत है कि कोई चलने वाला इस रास्ते से, सिवाय किसी

बिरले के, छठे चक्र तक या उसके परे नहीं पहुँचा, और इसी द्वारे यानी इंद्री चक्र में थक कर रह गये। इस मुक़ाम के अभ्यासी यानी उपासना वाले, बाम-मार्गी और भैरवी-चक्र वाले कहलाते हैं और आज-कल के वक़्त में, ये लोग निपट बाहरमुखी चाल-ढाल और ना-मुनासिब खान-पान में बर्ताव कर रहे हैं, कि जिससे कोई परमार्थी फ़ायदा हासिल नहीं होता, बल्कि और घाटा होता है।

७—कोई २ मुख के द्वारे, जिभ्या को, और उसके साथ सुरत-चैतन्य की धार को उल्टा कर, और तालु के मुक़ाम पर जमा कर, अमृत-रस, जो ऊँचे से टपकता है, पीकर तृप्त हो गये। और इतने ही को मुक्ति का साधन समझ कर आगे न चले और इसी आनंद को आत्मानंद समझा।

८—कोई २ नासिका के द्वारे, पवन खींच कर, और भृकुटी तक लेजा कर, और वहाँ चंद मिनट ठहरा कर, फिर दूसरे द्वारे से, नासिका की पवन को निकालने का अभ्यास करने लगे, और इतने ही ठहराव को कुम्भक समझ कर, और कुछ रोशनी जो नज़र आई, उसको आत्मा का प्रकाश मान कर, इतने ही आनंद में तृप्त हो गये। इस अभ्यास को पूरक, रेचक, और कुम्भक कहते हैं। इनकी भी रसोई इससे ज़्यादा नहीं हुई।

९—कोई-कोई कानों को बंद करके, और उन द्वारों से चैतन्य-धार को समेट कर, मजमुआ का शब्द यानी अन-

हद घोर (जो मुताबिक़ पातंजलि शास्त्र के दस प्रकार की आवाज़ है) सुन कर मगन हो गये। और जब मन और इन्द्रियाँ उनकी, आवाज़ का रस पाकर, निश्चल हो गईं, तब चित्त के एकाग्र होने से उनको विशेष रस प्राप्त हुआ, और समाधि की सी हालत हो गई। वे, इसी आनंद को आत्मानंद और समाधि की हालत को अपना सिद्धान्त समझ कर, इतनी ही कार्रवाई करके तृप्त हो गये। और शब्द का खोज़, कि कौन धुन कहाँ से आती है, न किया। और इसी सबब से पिंड के परे, उनके मन और सुरत नहीं गये, यानी अंतरगत छः चक्र के रहे।

१०—किसी २ ने दृष्टि की साधना इस तौर पर करी कि अपनी नज़र को, दोनों आँखें खुली रख कर, नाक की नोक पर जमाया, या श्याम बिन्दी सफ़ेद दीवार पर लगा कर, या चिराग़ की लौ पर ठहराया, और तरह २ की रोशनी देख कर, और कुछ थोड़ी सी शक्ति दूर-नज़री की हासिल करके तृप्त हो गये, या किसी ने आँखें बन्द करके अपनी नज़र को दोनों भवों के मध्य में, या उससे ऊपर की तरफ़ जमाया, और पाँच रंग की रोशनी को (जो तत्वों का सूक्ष्म और नूरानी स्वरूप है) या सफ़ेद रोशनी ज़्यादा से ज़्यादा चमक के साथ चारों तरफ़ मिस्ल चाँदनी के छाई हुई देख कर, और उसी को आत्मानन्द और आतम दर्शन समझ कर मगन और तृप्त हो गये, और इससे आगे न बढ़े।

११—ये सब अभ्यास वाले सत्त पद से बे-ख़बर थे, क्योंकि इनको सतगुरु, धुर पद के भेदी और पहुँचे हुए, नहीं मिले, और इसी सबब से यह थोड़ी दूर चल कर रास्ते में रह गये। हरचंद कि यह सब जुक्तियाँ ओछी हैं, यानी माया के मंडल में ख़तम हो जाती हैं, पर यह अभ्यासी लोग इन जुक्तियों की भी पहुँच यानी रसाई के मुक़ाम तक नहीं पहुँचे, और उनका आनन्द भी कच्चा और और ओछा रहा, यानी जब माया का भारी चक्कर आया, उस वक़्त उसी की तरफ़ झोका खा गये। सिवाय इसके, इनके अभ्यास में बड़ी भारी कसर भक्ति की रही, यानी इन्होंने किसी को अपना भगवंत क़रार न दिया, और न उसके नाम और धाम का भेद पाया। सिर्फ़ आत्मा को सर्व-व्यापक मान कर, और उसको रोशनी रूप समझ कर, उसी में लै होने का इरादा करके, अभ्यास करते रहे, और हाल यह है कि जो रोशनी उनको नज़र आई, वह या तो तत्वों की थी या आत्मा का भास नीचे के दरजे में था। सिर्फ़ जोगी-ज्ञानी, आत्मा के मुक़ाम तक पहुँच कर चिदाकाश में, जो कि छः चक्र के परे है, लै हुए, और जोगेश्वर ज्ञानी, त्रिकुटी में पहुँच कर, उसके परे महा आकाश में लै हुए, लेकिन ये दोनों प्राणों के चढ़ाने का अभ्यास करके अपने २ सिद्धान्त पद में पहुँचे।

१२—लेकिन जो कि प्राणों की चढ़ाई का अभ्यास

महा कठिन और ख़तरनाक था, इस सबब से कोई बिरले अभ्यासियों को जोगी और जोगेश्वर पदवी हासिल हुई। और बाक़ी अभ्यासी छः चक्र के अंतरगत किसी न किसी स्थान पर रह गये। ऐसी हालत अभ्यासियों की, और बाक़ी लोगों का झुकाव बाहरमुखी कार्रवाई में मिसल तीर्थ, व्रत और मूर्ति-पूजा वग़ैरा के, और वाचक ज्ञानी और वेदान्तियों का फँसाव विद्या और ग्रन्थों के पढ़ने और पढ़ाने में मुलाहिज़ा करके, कुल्ल-मालिक, सत्त पुरुष राधास्वामी दयाल आप, संत सतगुरु रूप धर कर, प्रकट हुए, और अति दया करके सीधा और सहज और धुर पद में पहुँचाने वाला मार्ग सुरत-शब्द और ध्यान का, प्रकट फ़रमाया, कि जिसका अभ्यास हर कोई औरत और मर्द, लड़का, जवान और बूढ़ा और पढ़ा-लिखा और अनपढ़, चाहे गृहस्थ होवे या विरक्त, आसानी से, बग़ैर किसी ख़तरे और विघ्न के, कर सकता है।

१३—शरह उस अभ्यास की, जो कि कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल ने दया करके प्रकट किया, यह है कि पहिले तो भेद धुर धाम का मय मंज़िलों यानी स्थानों के, जो कि रास्ते में जीव यानी सुरत की पिंड में बैठक के मुक़ाम से धुर पद तक वाक़ै हैं, बतलाया। और फिर हर एक स्थान का रूप और वहाँ के शब्द का भेद, जो कि जुदा २ है, समझाया, और हुक्म दिया कि मन और सुरत

और दृष्टि को आहिस्ता २ उल्टा कर, धुन और रूप के संग, घट में ऊपर की तरफ़ चढ़ाना शुरू करो। जिस क़दर मन और सुरत सिमट कर, ऊपर की तरफ़ सरकते जावेंगे, उसी क़दर, रस और आनन्द मिलता और बढ़ता जावेगा और सतगुरु की दया और राधास्वामी दयाल की मेहर से आहिस्ता २ और सहज २ सुरत और मन, पिंड से न्यारे होकर, ब्रह्माण्ड में चढ़ते जावेंगे और फिर मन का संग छोड़ कर, सुरत, उसके परे, सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल के देश में चढ़ कर पहुँचेगी और वही इसका निज घर है। जहाँ से आदि में उतरी थी, सो वहीं पहुँच कर, महा आनन्द को प्राप्त होगी। वहाँ किसी तरह का कष्ट और कलेश और जनम-मरन और काल और करम का चक्कर नहीं है।

१४—सुरत-शब्द मार्ग के अभ्यासी को, दिन २ अपने बंधन, जो कि पिंड और कुटुम्ब-परिवार और भोगों और संसारी पदार्थों के साथ लगे हुए हैं, ढीले होते और छूटते हुए मालूम होंगे, और उसी क़दर दिन २ कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के चरनों में प्रेम और विश्वास, और भी सतगुरु के चरनों में प्रीत और प्रतीत बढ़ती जावेगी, यानी अपनी इसी ज़िन्दगी में अपना उद्धार होता हुआ दिखलाई देता जावेगा।

१५—बड़ी महिमा इस अभ्यास की यह है कि इसके कराने वाले, और हर दम रक्षक, आप राधास्वामी दयाल

हैं। सच्चे अभ्यासी को, इस करनी के करने में किसी क़िस्म की तकलीफ़ या कलेश अंतर में नहीं होता, बल्कि दिन २ उमंग और शौक़ इस अभ्यास के करने और मालिक राधास्वामी दयाल की मेहर और दया और हर तरह की रक्षा, अन्तर और बाहर, प्रत्यक्ष मालूम होकर प्रेम और निश्चय को बढ़ाती और पकाती जाती है कि जिससे दिन २ आनन्द बढ़ता जाता है और अपने सच्चे और पूरे उद्धार के होने में किसी तरह का शक़ और शुभा बाक़ी नहीं रहता।

१६—राधास्वामी मत के अभ्यासी की सुरत, अपनी यानी जान की धार पर सवार होकर, निज घर की तरफ उलट कर चढ़ती है। और बाक़ी जितने अभ्यास कि और मतों में जारी हैं, उन में चढ़ाई किसी न किसी मायक धार पर सवार होकर की जाती है। और इस सबब से वे माया के घेर में (कि जहाँ जनम-मरन का चक्कर देर-सवेर जारी है) ख़तम हो जाते हैं, यानी ऐसे अभ्यासियों का, चाहे वे अपने मत के सिद्धान्त पद तक भी पहुँच जावें, सच्चा और पूरा उद्धार नहीं होता।

१७—और मालूम होवे कि किसी मत का कोई अभ्यास, चढ़ाई का, इस वक़्त में बग़ैरा कमाई संतों की जुगत यानी सुरत-शब्द मार्ग के, कतई नहीं बन सकता

और इस मार्ग का भेद सिर्फ़ संत सतगुरु या साधगुरु या उनके सच्चे और प्रेमी अभ्यासी सतसंगी से मिल सकता है। और किसी तरह, कोई, वह भेद और जुगत अभ्यास की, मालूम नहीं कर सकता और जो कोई किताबों को देख कर या थोड़ा-बहुत हाल ज़बानी लोगों से सुन कर, अपनी तजवीज़ पर अभ्यास शुरू करेगा, उसका रास्ता हरगिज़ नहीं चलेगा, बल्कि धोखा और झटका और ख़ौफ़ खाकर, उस अभ्यास को थोड़े अर्से में छोड़ देगा।

१८—इस वास्ते, अब आम तौर पर पुकार के कहा जाता है कि जो कोई अपना सच्चा और पूरा उद्धार सहज और सुखाला चाहता है, और दुनिया और उसके कारोबार को देख कर, जिसका दिल इस तरफ़ से उदास हुआ है, उसको, बल्कि कुल्ल जीवों को, मुनासिब और लाज़िम है कि अपने जीव के कल्यान के निमित्त, कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल की सरन में आवें, यानी दीन-अधीन होकर, उनकी मेहर और दया के आसरे और भरोसे पर, उनकी सहज जुगत की कमाई, थोड़ी-बहुत (जिस क़दर बन सके) शुरू कर दें, तो उनकी मेहर और दया से थोड़ा-बहुत रस मिलता जावेगा, और अभ्यास दिन २ आहिस्ता-आहिस्ता बढ़ता जावेगा, और इसी तरह एक दिन धुर पद में पहुँच कर निर्भय और निःचिंत हो जावेंगे।

१६—सुरत-शब्द मार्ग की ऐसी महिमा है कि जिसने

प्यार और शौक़ के साथ थोड़े दिन भी इस अभ्यास को किया, और जो उसका चोला छूट गया, तो वह किसी नीचे की जोन में नहीं जावेगा और फिर नर देही, पिछले जनम से उत्तम और विशेष सुखदाई, धारन करके, सतगुरु के सतसंग में शामिल होवेगा, और जहाँ से कि अभ्यास छोड़ा है, वहाँ से शुरू करके ऊपर की तरफ़ चढ़ाई की तरक़्क़ी करेगा, और जब तक कि धुर पद यानी राधास्वामी धाम में नहीं पहुँचेगा, तब तक बराबर मनुष्य स्वरूप धारन करके, तीन, चार या पाँच जन्म में, संत सतगुरु राधास्वामी दयाल की दया से, अपना अभ्यास पूरन करेगा।

२०—एक और सिफ़त राधास्वामी मत के अभ्यास की यह है कि जो कोई सच्चा होकर, शौक़ के साथ, इस काम में लगेगा, वह नित्त जितना अभ्यास दुरुस्ती से करेगा, उसी क़दर उसको रस और आनंद मिलता जावेगा, यानी अपनी कमाई का, जिस क़दर बन सके, रोज़मर्रा फल लेता जावेगा। और दिन २ वह रस और आनन्द बढ़ता जावेगा कि जिससे अभ्यासी के शौक़ और प्रीत-प्रतीत की तरक़्क़ी होती जावेगी, और नई २ उमंग, प्रेम और भक्ति की, सतगुरु और कुल्ल मालिक दयाल के चरनों में, जागती जावेगी, और उसी क़दर संसार और उसके भोगों और पदार्थों से, चित्त में, उदासीनता पैदा होती और बढ़ती जावेगी। इस तरह, राधास्वामी मत के अभ्यासी को पूरा और सच्चा

सहज-बैराग और सहज-अनुराग हासिल होकर, उसका काम पूरा हो जावेगा और संत सतगुरु राधास्वामी दयाल की मेहर और दया से कोई विघ्न, काल और माया का, उसके काम में हर्ज नहीं डाल सकेगा।

२१—एक और भारी सिफ़त राधास्वामी मत के अभ्यास की यह है कि इसमें रोज़गार और गृहस्थ-आश्रम के छोड़ने की ज़रूरत नहीं। सुरत-शब्द अभ्यासी का चित्त सहज-स्वभाव, जैसा कि उसका अभ्यास बढ़ता जावेगा, दुनिया और उसके भागों और बंधनों से उपराम होता जावेगा यानी मन से पदार्थों का भाव और चाव जाता रहेगा। फिर चाहे वह गृहस्थ में रहे और चाहे विरक्त में, कोई भोग और संसारी चाह उसको बाँध नहीं सकेगी, यानी इनमें उसकी आसक्ति न होवेगी। बर-ख़िलाफ़ इसके, और मतों में जो अभ्यास जारी हैं, उनके संजम ऐसे कठिन हैं कि शुरू करते ही अभ्यासी को गृहस्थ और उद्यम का छोड़ना लाज़िम और जरूर होता है। इसी सबब से गृहस्थियों में किसी क़िस्म के अभ्यास का करना या उसका खोज और दरयाफ़्त करना मौक़ूफ़ हो गया, यानी उनके उद्धार का रास्ता ही बिल्कुल बन्द हो गया। और वे संजम ऐसे कठिन हैं कि विरक्तों से भी दुरुस्ती से नहीं बन पड़ते। इस वास्ते उनमें से कोई बिरला उस रास्ते पर, कुछ दूर तक, चला और फिर मन और माया के चक्कर

में आकर वहीं थक गया या उल्टा गिरा और किसी का काम दुरुस्त नहीं बना। यानी ब-सबब न मिलने संत सतगुरु और उनकी जुगती के, ये सब ख़ाली रह गये और सच्चा और पूरा उद्धार किसी का नहीं हुआ।

२२–राधास्वामी मत के अभ्यासी को सिर्फ़ इस क़दर संजम दरकार हैं:–(१) सच्चा शौक़ राधास्वामी दयाल के दर्शनों का, और उनके धाम में पहुँच कर परम आनंद और बिलास का, प्राप्त होना, और (२) दुनिया के सामान की चाह, औसत दरजे के गुज़ारे के लायक़, उठाना और फ़िज़ूल और ना-मुनासिब या ग़ैर-वाजिब चाहों को घटाना और दूर करना, और (३) नशे की चीज़ों और मांस अहार से परहेज़ करना, और (४) अपने मन रंजन के लिये किसी को बे-सबब और बे-फ़ायदा और ना-मुनासिब तौर पर अंतर या बाहर दुख या तकलीफ़ न देना। जो शौक़ थोड़ा सा है, तो वह सतसंग या अभ्यास करके, दिन २ बढ़ता जायगा, और ये संजम भी सहज बनते जावेंगे, और रफ़्ता २ पुष्ट हो जावेंगे। और इस तरह राधास्वामी दयाल की मेहर और दया से एक दिन पूरा शौक़ और पूरा प्रेम हासिल हो कर, धुर घर में पहुँचा देगा।

२३–राधास्वामी मत के अभ्यासी को सब मतों के सिद्धान्त-पद रास्ते में पड़ेंगे, यानी वह कुल्ल मुक़ाम की सैर करता हुआ, एक दिन कुल्ल मालिक के चरनों में

पहुँच कर परम आनंद को प्राप्त होगा, और वे रास्ते के मुक़ाम ये हैं :-शिवलोक, ब्रह्मलोक, विष्णुलोक, राम लोक, कृष्णलोक, शक्ति का लोक, और आत्मा और परमात्मा, और ईश्वर और परमेश्वर, और ब्रह्म और पारब्रह्म पद, और जैनियां और सरावगियों का निर्वाण पद और शुद्ध सिला, और बौद्ध मत वालों का सिद्धान्त पद और मुसलमानों के मुक़ामात-मलूकत, जबरूत और लाहूत और अर्श और कुरसी वग़ैरा, और ईसाइयों का मुक़ाम हज़रत ईसा और ख़ुदा, और पिछले संतों का सत्तलोक और सत्तनाम और अनामी वग़ैरा।

२४-इस क़दर बड़ा दरजा जैसा कि ऊपर ज़िक्र हुआ, सुरत चलने वाली, यानी अभ्यासी, को, संत सतगुरु और कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल की मेहर और दया से हासिल होना मुमकिन है।

२५-अब मालूम होवे कि जितने अभ्यासों का ज़िक्र ऊपर हुआ है, और वे नौ द्वारों के मुक़ाम से शुरू किये जाते हैं, उनमें सुरत की एक-एक धार का सिमटाव और फिर खिंचाव होता है, और जो जुगत कि कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल ने जारी फ़रमाई, उसमें संतों के प्रथम स्थान सहसदल-कँवल के (जो कि कुल्ल मतों का सिद्धान्त और आख़िरी मुक़ाम है) रूप और शब्द के आसरे से, सुरत की पूरी धार के सिमटाव और खिंचाव और चढ़ाई

का अभ्यास किया जाता है, यानी सुरत की असली बैठक का मुक़ाम, जो तीसरा तिल है, वहाँ से उसकी चढ़ाई शुरू की जाती है। और इस अभ्यास के करते ही अंग २ से, और भी नौ द्वारों से, सिमटाव और खिंचाव सुरत का, शुरू हो जाता है, और वह तीसरे तिल में भरती जाती है, और वहाँ ऊँचे की तरफ़, सहस दल कंवल और त्रिकुटी वग़ैरा पर चढ़ती जाती है, और यही अभ्यास करने से रफ़्ता २ एक दिन धुर मुक़ाम में पहुँच कर पूरा काम बन जाता है।

२६—यह तीसरा तिल, जोगियों का दसवाँ द्वार है, और संतों के बचन के मुवाफ़िक़ यह पिंड का नाका है, यानी इसके नीचे, पिंड, और ऊपर की तरफ़, ब्रह्माण्ड की हद्द है। राधास्वामी मत का अभ्यास इसी मुक़ाम और द्वारे से शुरू होता है।

२७—जिसका शौक़ सच्चा है, और जो विरह और प्रेम अंग लेकर अभ्यास शुरू करता है, उस पर यह हालत, सुरत के सिमटाव और खिंचाव और चढ़ाई की, गुज़रती है, और वही अभ्यासी निज कर देखता है और जाँच करता है कि इस जुगत की कमाई से (जो दुरुस्ती से बन आवे) बहुत जल्द मन और सुरत का खिंचाव और सिमटाव होता है, और उस वक़्त तमाम बदन सुन्न होता जाता है।

२८—अब बुज़ुर्गी और बड़ाई राधास्वामी मत की जुगत की, कुल्ल अभ्यासों पर, ऊपर के लिखे हुए हाल

से, साफ़ ज़ाहिर है, और उसका असर भी मन और इन्द्रिय और देह पर, बहुत जल्द और पूरा २ होता है। और ब-सबब लेने सरन और ओट संत सतगुरु और कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के, इस मत के अभ्यासी को, कोई विघ्न काल और माया का नहीं सताता है। यह बड़ाई और आसानी और रक्षा और किसी अभ्यास में नहीं पाई जाती है। हरचंद कि मन और इंद्रियाँ, और पाँचों दूत (काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार) थोड़ा-बहुत अपनी पुरानी आदत और चाल के मुवाफ़िक़, किसी क़दर, अपना ज़ोर दिखाते हैं, पर संत सतगुरु के सतसंग की मदद और राधास्वामी दयाल की दया से, वे दिन २ ढीले और कमज़ोर होते जाते हैं, यानी अभ्यासी के चित्त में, दिन २ संसार और उसके पदार्थों की तरफ़ से उदासीनता बढ़ती जाती है, और उसके साथ ही चरनों में प्रेम और दीनता बढ़ती जाती है, और रास्ता आहिस्ता २ तै होता जाता है, कि जिसके सबब से दिन २ सुरत का, माया के मंडल से, उबार यानी निकास होता जाता है, और उसी क़दर संसार के बंधन ढीले और हलके होते जाते हैं। और जिस क़दर इस तरह चढ़ाई होती जाती है, उसी क़दर निर्मल रस और आनन्द मिलता और बढ़ता जाता है।

२६—जैसी भारी दया कि कुल्ल मालिक राधास्वामी

दयाल ने, इस वक़्त के जीवों को दुखी और बलहीन देख कर, इस आसान और पूरी जुक्ति के प्रकट करने में फ़रमाई है, ऐसी किसी वक़्त में जीवों पर नहीं हुई। इसका पूरा २ शुकर, किसी की ताक़त नहीं कि अदा कर सके। जिस-किसी की समझ में यह बात अच्छी तरह से आ गई, उसके मुवाफ़िक़ दुरुस्ती से अमल-दरामद यानी कार्रवाई शुरू करना, यही राधास्वामी दयाल की उस गहरी और पूरी दया की क़दरदानी यानी महिमा जाननी है। फिर वही जीव दया-पात्र और बड़-भागी समझना चाहिये, क्योंकि वह राधास्वामी दयाल की चरन-सरन दृढ़ करके, और नित्त अभ्यास करके, दिन २ विशेष दया हासिल करता हुआ, एक दिन धुर पद में पहुँच कर, अपना काम पूरा बनवा लेगा, और परम आनन्द को प्राप्त होकर, काल के कष्ट और कलेश और जनम-मरन के दुक्खों से हमेशा को बच जावेगा।

३०—ऐसी बड़ी महिमा राधास्वामी मत और उसके अभ्यास और जुक्ति की है कि जिसकी बराबरी कोई अभ्यास किसी क़िस्म का, जो दुनिया भर में जारी हैं, नहीं कर सकता। सबब यह है कि राधास्वामी मत के अभ्यास का रक्षक कुल्ल मालिक आप है, और संत सतगुरु जो उस मालिक के निज-अंस यानी निज-पुत्र या उसका निज-रूप हैं, इस संसार में प्रकट होकर उस अभ्यास को जारी फ़रमाते

हैं और अपने सरन आए हुए जीवों यानी अभ्यासियों की आप रक्षा और ख़बरगीरी करते हैं, और दिन-दिन उनके मन और सुरत को निर्मल करके, आप अपनी दया से उबारते और चढ़ाते जाते हैं। और जब २ उनके इस क़िस्म के जीव, संसार में, वास्ते पूरे करने अपने अभ्यास के, भेजे जाते हैं, तब आप भी अति दया करके, वास्ते उनकी सम्हाल और तरक़्क़ी के, प्रकट होकर, सतसंग खड़ा करते हैं।

३१—और मतों के अभ्यास में न तो ऐसी सहज जुगत चलने की है, और न पूरा भेद धुर घर और उसके रास्ते का है, और न किसी बड़े का, अंतर और बाहर, सहारा और आसरा लेकर चाल चलती है, बल्कि ये सब जीव अपने बल और पुरुषार्थ का अहंकार लेकर कार्रवाई करते हैं। इस सबब से, रास्ते में धोखा और ठोकरें खाते हैं, और कहीं न कहीं थक कर, या ख़ौफ़ खाकर, या थोड़ी-बहुत सिद्धि और शक्ति में आसक्त होकर ठहर जाते हैं, और आगे चलने का रास्ता उनका बन्द हो जाता है, यानी माया के घेर के पार कोई नहीं गया और न जा सकता है।

३२—कुल्ल रचना प्रेम की धार से प्रकट हुई, और प्रेम ही के आसरे ठहरी हुई है, और कुल्ल कार्रवाई रचना और जीवों की, प्रेम के वसीले से हो रही है, यानी जहाँ

जिसका शौक़ है, वहीं वह तन, मन, धन और इन्द्रियों को लगाता है यानी काम में लाता है। फिर राधास्वामी मत में सिर्फ़ प्रेम की महिमा है यानी कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु के चरनों में पहिले प्रीत और प्रतीत करना ज़रूर है, और फिर सतसंग और अभ्यास करके, वही प्रीत और प्रतीत दिन २ बढ़ाई जाती है यानी दर्शनों का शौक़ और प्रेम रोज़-ब-रोज़ तेज़ होता जाता है, जिस क़दर कि अभ्यास में चरनों का रस और आनन्द मिलता जाता है।

३३–जिस मत में कि प्रेम नहीं है, वह मत और उसका अभ्यास ख़ाली और थोथा है। इसी सबब से और मतों के अभ्यासी, जो कि अपने बल से चले, या अपने को ब्रह्म मान कर ख़ुश हो गये, रास्ते में थक कर रह गये, बल्कि उनको सीधा और सच्चा रास्ता भी मालूम न हुआ और माया और काल के जाल में फँस रहे, और उन्हीं के मार्ग होकर के चले कि जिससे उस जाल से बाहर न निकले।

३४–यह बड़ी भारी कसर कुल्ल मतों में है कि पहले तो प्रेम का कुछ ज़िक्र ही नहीं, और जो कहीं है, तो वह मूर्तों और ग्रन्थों और और नक़लों में लगाया, या व्यापक चैतन्य में ख़र्च किया कि जहाँ से उलट

कर कोई फ़ायदा या मदद नहीं मिली और न आइंदा को तरक़्क़ी हुई, और फल उसका यह हुआ कि यह प्रेम रास्ते के तै करने के वास्ते कुछ मदद न दे सका, क्योंकि सच्चे कुल्ल मालिक का भेद न पाया, और न उसका रास्ता जाना, और जिनको मालिक क़रार दिया, उनका कोई ठिकाना, सिवाय मंदिर और मूर्ति या तीर्थ या ग्रन्थ या और किसी नक़ल के, मुक़र्रर न किया, और व्यापक चैतन्य को हर जगह मौजूद समझ कर चलना और चढ़ना सुरत का फ़िज़ूल समझा। इस सबब से, सब के सब पिंड ही में रहे, और उसकी हद्द के बाहर नहीं गये, और इस वास्ते मन के आकाश में समाये, और अपने कर्म और बासना के अनुसार बारम्बार देह धर कर जगत में भरमे। यह हालत उनकी, सिर्फ़ न जानने भेद कुल्ल मालिक और न करने प्रेम उसके चरनों में, और न मिलने पूरे सतगुरु से हुई। बर-ख़िलाफ़ इसके राधास्वामी मत में अव्वल खोज सतगुरु का और प्रीत उनके चरनों में करना पड़ता है, और फिर प्रेम और दीनता कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के चरन कँवल में, जिनका भेद संत सतगुरु समझा कर मिलने का जतन बतलाते हैं, किया जाता है, और नित्त सतसंग और अभ्यास करके यही प्रेम बढ़ाया जाता है कि जिसकी मदद से रास्ता आसानी से तै होता है। और राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु की दया से सब विघ्न

हटा कर अभ्यासी एक दिन निज चरनों में पहुँच कर परम आनंद को प्राप्त होता है।

३५—हरचंद कि सब मतों में थोड़ी-बहुत महिमा और ज़रूरत गुरु की वर्णन की है, पर गुरु भक्ति का बर्तावा, प्रेम के साथ, सच्चे तौर पर, इस ज़माने में कहीं जारी नहीं है। बल्कि इस वक़्त में जो विद्या और बुद्धिवानों ने समाज खड़े किये है, उन में तो कुछ गुरू की ज़रूरत और क़दर बिल्कुल नहीं रक्खी है, क्योंकि इन समाजों में, सिर्फ़ किताबों का पढ़ना और पढ़ाना और भजन वग़ैरा का गाना-बजाना, जिनमें अंतरी अभ्यास का, सिवाय ध्यान (बे-ठिकाने) व्यापक चैतन्य के, कुछ ज़िकर नहीं है, जारी है, और यह कार्रवाई सब आदमी, जिन्होंने थोड़ी-बहुत विद्या, क़ाबिल पढ़ने उन किताबों के, हासिल की है, बग़ैर मदद अभ्यासी गुरू के कर सकते हैं, और ऐसी आसानी और आज़ादी देख कर, नये, विद्या पढ़े हुए लोग, कसरत से शामिल हो गये हैं। यह लोग सच्चे मालिक के भेद और निशान से बे-ख़बर हैं और न उनको उसकी खोज और तलाश है और इस वास्ते वे सच्चे और पूरे गुरू की, (जिन से यह भेद पूरा २ मिल सकता है और भी हाल रास्ते का और जुगत चलने की मालूम हो सकती है) क़दर नहीं जान सकते और न उनकी पहिचान कर सकते हैं।

३६–राधास्वामी अथवा संत-मत में सच्चे और पूरे गुरू की तलाश, और वक़्त प्राप्ति के उनके चरनों में सच्ची भक्ति और प्रेम करने के वास्ते निहायत ताकीद है, क्योंकि इस मत में सच्चे मालिक से मिलने और उसके धाम में चलकर और चढ़ कर पहुँचने की कार्रवाई की जाती है, और इसी के दुरुस्ती से बन आने के लिए भेदी और पहुँचा हुआ या चलता हुआ और पहुँचनहार गुरू दरकार है। बग़ैर उसकी मदद के, इस मत और उसके अभ्यास की कार्रवाई क़तई नहीं बन सकती है, और कुल्ल मालिक और भी ब्रह्म यानी त्रिलोकी नाथ का हुक्म है कि मेरे धाम में कोई बग़ैर वसीले पूरे गुरू के, नहीं दख़ल पा सकता है, और न वहाँ ठहर सकता है, यानी जब तक कि पूरे गुरू से मिल कर, योग-अभ्यास (यानी मिलने का जतन) न करेगा, और जो लक्षण और सफ़ाई या जिस क़िस्म की रहनी दरकार है, वह पूरे गुरू की दया, और जो अभ्यास वह बतावें, उसकी मदद से हासिल न होंगे, तब तक कोई जीव मालिक के धाम में यानी ब्रह्म-पद और धुर-पद में नहीं पहुँच सकता है और न वहाँ ठहर सकता है।

३७–जब हक़ीक़त-ए-हाल यह है, जैसा कि ऊपर लिखा गया, तब समझवार और निर्पक्ष सच्चा दर्दी परमार्थी ज़रा ग़ौर करके आप समझ सकता है कि जिन मतों में अंतरी भेद और अभ्यास, चढ़ाने मन और सुरत

का, जारी नहीं है और न उसके भेदी और सिखाने वाले गुरू की ज़रूरत या तलाश है तो वह मत और जो कुछ कि कार्रवाई उन में जारी है, सब ज़ाहिरी और ऊपरी, मिस्ल छिलके के है और मग़ज़ यानी तत्व-वस्तु की समझ और पहिचान और प्राप्ति उसमें बिल्कुल नहीं है। फिर जीव का उद्धार और माया के मंडल से उबार वहाँ कैसे हो सकता है? शुभ-कर्म का फल ऐसी कार्रवाई से अलबत्ता हासिल हो सकता है, पर सच्चे और कुल मालिक का दीदार या उसके धाम में रसाई या चढ़ाई की कार्रवाई शुरू करने के वक़्त से थोड़ा-बहुत चरनों का रस और आनन्द का मिलना और बढ़ना हरगिज़ मुमकिन नहीं है।

बचन ३३

मन और सुरत नौ द्वारों से झाँक कर इस लोक के भोगों में फँस गये हैं, सो दसवें द्वार की तरफ़ झाँकने और चलने से उन बंधनों से छुटकारा होगा और संत सतगुरु की दया से एक दिन निज घर में पहुँच कर परम आनन्द को प्राप्त होंगे।

१—मालूम होवे कि सुरत की धार, अव्वल, मन के स्थान पर, और फिर वहाँ से (अनेक धारों में तक़सीम हो कर) इंद्रिय घाट पर बैठी, और इन्द्रियों के मुक़ाम से धारें जारी होकर, उनका मेल इस संसार की रचना और भोगों और पदार्थों के साथ हुआ, और हर एक इन्द्रिय द्वार पर जुदा २ रस और स्वाद भोगों का लेकर मन मगन होने लगा।

२—हर एक इन्द्रिय का रस भारी है और मन सर्व-अंग करके इन रसों का आशिक़ और आधीन हो गया है और तवज्जह उसकी, इन द्वारों के वसीले से, बाहर पदार्थों में, और अनेक चीज़ों में निहायत मज़बूती के साथ जम गई है, यहाँ तक कि उन पदार्थों और चीज़ों की हालत बदलने में मन की भी हालत बदल जाती है और उस तवज्जह को जो कोई हटाया चाहे तो नहीं हटती है, और ज़ोर और दबाव डालने में निहायत दुख मन को होता है।

३—यह धारें जो इन्द्रिय द्वारों से निकस कर अनेक जीवों और चीज़ों में बँध गई हैं, इस मन के बाँधने के वास्ते गोया ज़ंजीरें हो गई हैं, और आदत करके ऐसी कड़ी और मज़बूत हो गई हैं कि उनके हटाने या तोड़ने में मन को भारी तकलीफ़ होती है, और जो क़ुदरती तौर पर एकाएक कोई बंधन ढीला होता है या टूट जाता है, तो मन निहायत ग़मगीन और उदास होता है और

वावैला करता है यानी चिल्लाता-बिल्लाता है और रोता और झींकता है।

४–दुनियादारों की समझ ऐसी ओछी है कि जिस किसी के ऐसे बंधन भारी और कसरत से हैं, उसी को वे दुनिया में भागवान और सुखी समझते हैं, और वह शख़्स आप भी अपनी गिरिफ़्तारी को बड़भागता समझ कर, बहुत खुशी के साथ झेलता है, और दिल और जान से उसको क़बूल करके, दिन २ उसकी ज़्यादती चाहता है, और बा-वजूदे कि हर रोज़ झटके और धक्के खाता है, फिर भी ऐसा उस नशे में मस्त और दीवाना हो रहा है कि ज़रा ख़ौफ़ और होश नहीं लाता, और ज़रा भी सोच और विचार नहीं करता कि मैं किस आफ़त में फँस गया हूँ, और आइंदा क्या हालत होगी और कैसी सख़्ती और तकलीफ़ उठानी पड़ेगी।

५–जब कभी ऐसे जीवों को कोई परमार्थ का बचन सुनावे, और उनके हाल की ख़राब हालत से उनको ख़बर देवे, और जो कुछ कि इस तरह की रहनी का आइन्दा नतीजा यानी फल होवेगा, उसको जतावे, तो ये जीव अचरज करके, उसके बचन को तवज्जह के साथ नहीं सुनते। बल्कि वह बचन इनको बहुत बुरे और सख़्त मालूम होते हैं, क्योंकि उनमें इनके भोगों और प्यारे रिश्तेदारों और पदार्थों की नाशमानता और बे-वफ़ाई का ज़िक्र है और

जो २ हर्ज, इन में प्रीत और बंधन जारी रखने से, आइंदा पैदा होंगे, उनका बयान है।

६—ये लोग बा-वजूदे कि रोग-सोग और मरी और मौत वग़ैरा की कार्रवाई हर रोज़ अपनी आँख से इस दुनिया में देखते हैं और जीवों को अनेक तरह की तक-लीफ़ों और बीमारियों और मुसीबतों में मुबतिला और निहायत दुखी मुलाहिज़ा करते हैं, पर उनके दिल पर बहुत कम असर इन बातों का होता है और कभी सोच और विचार इस बात का नहीं करते कि एक दिन दुनिया और देह और घर और कुटुम्ब-परिवार और माल और असबाब को ज़रूर छोड़ना पड़ेगा, और उस वक़्त कैसी सख़्त चोट मन पर पड़ेगी? और आइन्दा कहाँ जाना होगा? और वहाँ क्या हाल होवेगा? यानी सुख मिलेगा या दुख? और इस ज़िन्दगी में उसका कुछ बन्दोबस्त करना चाहिये या नहीं?

७—जो जीव कि संसार में पैदा होते हैं, शुरू में सब भोले और अनजान होते हैं, पर संग करके उनकी हालत और चाह बदलती जाती है यानी जैसा संग मिला और जैसी हालत की महिमा सुनी और जिन चीज़ों का लोगों की तबीयत में भाव और बड़ाई देखी, उसी मुवाफ़िक़ चाहें भी उठती हैं, और वैसी ही हालत पसंद आती है और उसके हासिल करने को जतन किया जाता है। जतन सिद्ध होने

पर मन ख़ुश होता है और सिद्ध न होने में दुखी होता है।

८—और परमार्थ का यह हाल है कि अनेक मत, मन और बुद्धि के रचे हुए या ईश्वर और देवताओं और महात्माओं के (जो ब्रह्माण्डी मन की अंस और कला हैं) जारी किये हुये, इस दुनिया में फैल रहे हैं, और हर एक अपनी २ समझ और तजरुबा और चाह और पहुँच के मुवाफ़िक़, अनेक रीत से, बयान करता है कि फ़लाँ २ काम करने से आइन्दा सुख मिलेगा, या ईश्वर या किसी देवता या महात्मा की भक्ति और सेवा करने से यह २ फ़ायदा होगा। फिर बिचारे जीव हैरान हैं कि किसका कहना मानें और किस का न मानें। इस वास्ते सब के सब, अपने २ क़ौम और बुज़ुर्गों की चाल-ढाल और कार्र-वाई के मुवाफ़िक़, थोड़ा-बहुत अमल दरामद करने लगे, और खोज और तलाश, पूरी और सच्ची समझ देने वाले की, किसी के दिल में पैदा नहीं हुई। और जो किसी ने अपनी बुद्धि और विद्या के ब-मूजिब तलाश भी करी तो विद्यावानों के ग्रन्थ और किताबें पढ़ कर और ओछी या उलटी समझ धारन करके और भारी ग़ल्ती में पड़ गये, कि वहाँ से उनका निकलना ज़्यादा मुश्किल हो गया।

९—ख़ुलासा यह कि सच्चे और कुल्ल मालिक का पता और भेद किसी को नहीं मिला और न सच्चा और सीधा रास्ता अपने निज घर में जाने का, कि जिससे

आवागवन और देह धर कर दुख-सुख भोगना दूर हो जावे, मालूम हुआ। फिर सब जीव, मन और बुद्धि की निकाली हुई चालों में, कि जिन से भूल और भरम नहीं मिट सकता और न दुख-सुख के जाल से छुटकारा मुमकिन है, अटक गये।

१०—असल हाल यह है कि ईश्वर या ब्रह्म या महात्मा या देवता मिस्ल ब्रह्मा, विष्णु और महादेव वग़ैरा, आप ही सच्चे और कुल्ल मालिक सत्त पुरुष राधास्वामी दयाल के भेद से बे-ख़बर थे। इस सबब से जो बानी और बचन और किताबें मज़हबी उन्होंने बनाई, उनमें वह भेद कुल्ल मालिक का, और जुगत पहुँचने की, उसके धाम में, बयान नहीं की। और जो ब्रह्म पद तक का भेद और जैसी जुगत उसकी प्राप्ति की, प्राणायाम और और साधनों के वसीले से वर्णन करी, वह ऐसी कठिन और ख़तरनाक, और संजम उसके, ऐसे सख़्त कहे कि उसकी कार्रवाई गृहस्थ और विरक्त दोनों से न हो सकी, और इस तरह सब के सब ख़ाली रह गये यानी सच्ची मुक्ति के रास्ते पर कोई न चल सका। सिर्फ़ थोड़ा-बहुत अभ्यास शुरू करके, और कुछ लज़्ज़त और सरूर या सिद्धि-शक्ति के हासिल होने पर, रास्ते में तृप्त हो गये और आगे न बढ़े।

११—और जो कि ख़ुद-मतलबी यानी स्वार्थी लोग जीवों को उपदेश देने के वास्ते जा-ब-जा बहुत से प्रकट

हो गये, और उनका संग करके और बचन मान कर जीवों को तकलीफ़ पहुँची, और सरीह यानी प्रत्यक्ष धोखा मालूम पड़ा, इस सबब से, अब जो कोई सच्चा रास्ता और भेद बताने वाला मिलता है, तो उसके बचन की ज्यों की त्यों प्रतीत नहीं करते, और अनेक तरह के भरम और ख़ौफ़ उठा कर बचन नहीं मानते, और पुरानी नाक़िस चालों में, बारम्बार फँसे और अटके रहना मंज़ूर करते हैं, और अपने नफ़े और नुक़सान का बहुत कम ख़्याल करके, सच्चे गुरू की तलाश में भी ढीले रहते हैं।

१२—जो जीव कि मूर्ख और निपट दुनियादार और मन—सैलानी हैं, वह तीर्थ, ब्रत, और मूर्ति पूजा में अटक रहे और जिन्होंने कि थोड़ी-बहुत विद्या पढ़ कर अपनी बुद्धि किसी क़दर जगाई, वे ज्ञान के ग्रन्थ पढ़ने-पढ़ाने में बाचक रह गये, यानी समझ-बूझ परमार्थ की, किसी क़दर हासिल की, पर उसके मुवाफ़िक़ अभ्यास नहीं किया, इस सबब से उनकी सुरत-रूह का घाट यानी स्थान नहीं बदला और निरे बातूनी रह गये।

१२—इन में से बाज़ों ने अपने तईं ब्रह्म मान कर बिल्कुल निचिन्ताई और बेख़ौफ़ी इख़्तियार करी, और अपने मन और इन्द्रियों की चाल और चाह को, उनका स्वभाव समझ कर, बे-धड़क सैर और तमाशा और भोगों में (जब वे भाग से मिल गये) बर्तने लगे, और गृहस्थियों को इस क़िस्म

का ज्ञान सिखा कर उनको भक्ति-मार्ग से हटा कर बे-धर्म कर दिया।

१४—कोई २ जीव तप, जप, और अनेक क्रियाओं के साधन में लग गये, जैसे नेती, धोती, बस्ती क्रिया करना, और खड़े रहना, या मौन साधना, या जल सैन करना, या पंच अग्नि तपना, या हमेशा तीर्थों में भरमते रहना, या मेले तमाशों में उल्टे लटकना, या कीलों पर बैठना, या नंगे रहना, और अनेक तरह के स्वाँग बना कर जगत को रिझाना, वग़ैरा। इन कामों में किसी तरह का परमार्थी फ़ायदा नहीं है। अलबत्ता थोड़ी सफ़ाई जिसमानी हासिल हो सकती है, या यह कि लोगों को खुश करके धन कमाना और अपनी मान-बड़ाई करानी।

१५—बहुत से जीव, ख़ास कर वे जिन्होंने नई विद्या पढ़ी, अनेक तरह के शक और शुभे निस्बत कुल्ल मालिक और सुरत-रूह के, अपने मन में पैदा करके, परमार्थ से बिल्कुल बे-मुख हो गये, और खान-पान और सैर और तमाशे और कुटुम्ब-परिवार और धन-सम्पत्ति के मोह में फँस कर, और उसी को माहसल अपनी ज़िंदगी का, यानी इस नर देही का फल और लाभ समझ कर, मगन हो गये, और परमार्थ का खोज फ़िज़ूल समझ कर उस तरफ़ की कार्रवाई बिल्कुल बन्द कर दी, और आज़ादी को पसंद करके बे-धड़क और बे-कैद जैसी रहनी

कि उनको पसंद आई, उसी मुवाफ़िक़ रहने लगे और अपने मन की चाह के मुवाफ़िक़ खान-पान और लिबास वग़ैरा में बर्तने लगे।

१६—ऐसी हालत जगत की देख कर, यानी जीवों का परमार्थी उद्धार क़तई बन्द मुलाहिज़ा करके, कुल्ल मालिक सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल संत सतगुरु रूप धारने करके प्रकट हुए, और अति दया करके भेद अपने धाम का, और हाल रास्ते और मंज़िलों का, और जुगत सुरत के वहाँ चढ़ कर पहुँचने की, आसान और निर्विघ्न तरीक़े से वर्णन करी, और जीवों को निहायत मेहरबानी से समझाया कि नौ द्वारों में सुरत की धार का बर्ताव रोज़मर्रा इस लोक में हो रहा है, और हर एक द्वारे पर थोड़ा-बहुत रस या स्वाद या खुशी मन को, उन इन्द्रियों के विषय यानी भोगों के वसीले से हासिल होती है, और इसी क़दर रस और स्वाद और खुशी को प्राप्त होकर, कुल्ल जीव बहुत शौक़ के साथ भोगों में लिपट गये, और असली आनन्द जो मन और सुरत को अंतर में दसवें द्वार की तरफ़ तवज्जह करने से मिल सकता है, और जो आनन्द कि निर्मल और ठहराऊ और स्वतंत्र (यानी जीव के इख़्तियार में) है, उसको भूल कर और किसी से उसका भेद और पता न पाकर, बिलकुल बे-ख़बर रह गये, और इस तरह अपने जीव का भारी अकाज किया।

१७–दसवें द्वार से मुराद उस द्वारे से है कि जिस में होकर रूह की धार, ऊँचे मुक़ाम से उतर कर, पिंड को तरोताज़ा करती है, और ताक़त बख़शती है और वही धार नौ धारों में तक़सीम होकर, हर एक इन्द्रिय के द्वार पर बैठ कर, दुनिया के भोगों का रस देती है। तो जब कि उसके एक २ हिस्से में इस क़दर स्वाद है कि जीव उसी में लिपट कर मस्त और बेहोश हो गये, तो उस एक धार में (जिसकी वह नौ धारें एक एक हिस्से में हैं) किस क़दर रस और आनंद, बग़ैर वसीले भोगों के, हासिल होना मुमकिन है? इस वास्ते कुल्ल जीवों को लाज़िम और मुनासिब मालूम होता है कि उस धार का पता और भेद लेकर, उससे, मन और सुरत और इन्द्रियों को, थोड़ा-बहुत समेट कर, मेल करें, तब उसकी बुज़ुर्गी और महिमा की थोड़ी-बहुत ख़बर होवे कि अपने घट में ही महा आनन्द हर वक़्त तैयार और मौजूद है, और कोई दिन अभ्यास करके मन और सुरत के लगाने से मिल सकता है।

१८–और राधास्वामी दयाल ने फ़रमाया है कि जिस धार पर सुरत उतरी है (और वही धार जान और नूर और अमृत और शब्द की धार है) उसी धार को पकड़ के, यानी शब्द की धुन को सुनते हुए सुरत को चढ़ाना चाहिये, यानी पिंड देश से जो दुख-सुख और मलीनता का भंडार है, सुरत को निकाल कर पहिले ब्रह्माण्ड में

और उसके परे सत्त पुरुष राधास्वामी धाम में, जहाँ से कि आदि में सुरत उतरी थी, पहुँचाना चाहिये। जब तक यह कार्रवाई न की जावेगी, तब तक सच्चा और पूरा उद्धार नहीं होवेगा यानी देहियों के साथ दुख-सुख के भोग और जनम-मरन के चक्कर से छुटकारा और बचाव नहीं होगा।

१६–नौ द्वारों के वार, यानी इस लोक की रचना में, सुरत और मन की धार, इंद्रियों के वसीले से, बराबर जारी है और हर एक द्वारे पर थोड़ा-बहुत रस लेती है। फिर दसवें द्वार की तरफ़ भी, जो कि निज घट (यानी मस्तक में) है, सुरत की धार को संत सतगुरु से, भेद रास्ते का, और जुगत चलने की लेकर ज़रूर चलाना चाहिये, तब उस गहरे आनंद और रस की, जिसके सामने सर्व रस यहाँ के भोगों के, आहिस्ता २ फीके पड़ते जावेंगे, और जो घट में स्वतन्त्र, बग़ैर मेहनत और ख़र्च करने धन के, जब चाहो जब, छिन भर में हासिल हो सकता है, ख़बर पड़े, और तब मन और सुरत उमंग कर, उस आनन्द और रस के दिन २ ज़्यादा लेने के वास्ते, ऊँचे देश की तरफ़ दौड़ने लगेंगे।

२०–यह काम, बग़ैर दया और मदद संत सतगुरु के, दुरुस्ती से, नहीं बन सकता है। इस वास्ते राधास्वामी दयाल ने ताकीद के साथ फ़रमाया कि पहले सतगुरु का खोज करके, उनके चरनों में प्रतीत सहित प्रीत करो, और उनका सतसंग और सेवा और आरती करके, उनको, अपने

ऊपर मुतवज्जह और मेहरबान करलो, तब वे प्रसन्न होकर जो उपदेश सुरत-शब्द के अभ्यास का करें, उसकी कमाई आहिस्ता २ बन पड़ेगी, यानी मन और सुरत, शब्द की धुन को पकड़ के, घट में आँखों के मुक़ाम से चलना और चढ़ना शुरू करेंगे, और जिस क़दर दसवें द्वार की तरफ़ इनकी धारा जारी होवेगी, यानी मन और सुरत की चाल चलेगी, उसी क़दर रस और आनन्द आवेगा, और दिन २ बढ़ता जावेगा, और संत सतगुरु की दया से माया और काल के विघ्न रास्ते में हलके और दूर होते जावेंगे, और रास्ता आसानी से तै होता जावेगा। इस तरह एक दिन सुरत, पिंड और ब्रह्माण्ड और मन और माया के घेर से न्यारी होकर, अपने निज देश में पहुँच कर परम और अमर आनन्द को प्राप्त होगी।

२१—और राधास्वामी दयाल ने फ़रमाया कि माया और काल ने अनेक तरह के भोग और बिलास इस लोक में, वास्ते लुभाने और फँसाने सुरत के, रचे हैं और सुरत यहाँ इस कदर मन और इन्द्रियों के बस में पड़ गई है कि अपने बल से भोगों को छोड़ नहीं सकती, और चाहे जिस क़दर समझौती इसको दी जावे, लेकिन भोगों के सन्मुख होते ही, मन उनकी तरफ़ झुक जाता है, और उनमें लिपट जाता है, और सुरत की धार भी लाचारी से उसके साथ भोगों की तरफ़ रवाँ हो जाती है। इस वास्ते, जब तक कि

संत सतगुरु का संग न होगा और वे अपनी मेहर और दया से इसको सहारा नहीं देंगे, और वक़्त २ पर इसकी सम्हाल नहीं करेंगे, तब तक इसका बचाव और छुटकारा मन और इन्द्रियों के भोगों से कठिन बल्कि ना-मुमकिन है।

२२—कुल्ल जीवों को (जो अपना बचाव और छुटकारा चाहते हैं) चाहिये कि संत सतगुरु और राधास्वामी दयाल की, सच्चे दिल से, भरन दृढ़ करके, उनके चरनों में प्रीत और प्रतीत बढ़ाते रहें और उनके उपदेश के मुवाफ़िक़ अंतरमुख अभ्यास सुरत-शब्द मार्ग का करके अपना जनम सुफल करें।

२३—नर देही का फल और लाभ यही है कि अपने कुल्ल मालिक और निज धाम का पता और भेद दरियाफ़्त करके, वहाँ पहुँचने का जतन, उमंग और प्रेम के साथ, शुरू करें, नहीं तो मनुष्य और पशुओं में कुछ भेद नहीं है, यानी जो जीव कि भोगों की प्राप्ति के लिये उमर भर जतन करते रहे और उन्हीं की आसा मन में धरी रही, तो उनकी कार्रवाई पशुओं की कार्रवाई के साथ बराबर हुई और नर देही जिसमें निज घर की तरफ़ चलने की ताक़त मिली थी, मुफ़्त बरबाद हुई। इस बात की समझ लेकर जो जीव अपने निज फ़ायदे के वास्ते, राधास्वामी दयाल के उपदेश को मानेंगे, और उसके मुवाफ़िक़ कार्रवाई करेंगे,

वे एक दिन परम आनंद को प्राप्त होंगे, नहीं तो ऊँचे-नीचे देशों और जोनों में हमेशा भटकते रहेंगे और दुख-सुख भोगते रहेंगे।

अर्थ शब्द नम्बर १६, बचन नम्बर ३५, पोथी सारबचन राधास्वामी छंद बंद (दूसरा भाग)

आरत गाऊँ स्वामी सुरत चढ़ाऊँ। गगन मंडल में धूम मचाऊँ ॥१॥

अर्थ

आरती राधास्वामी दयाल की गाऊँ और सुरत को गगन मंडल में चढ़ा कर धूम मचाऊँ यानी बिलास करूँ।

श्याम सुँदर पद निरख निहारूँ। सेत पदम पर तन मत वारूँ ॥२॥

अर्थ

और चढ़ाई के वक़्त श्याम सुन्दर पद यानी श्याम पद जो अति सुन्दर है, और वहीं सुन्न यानी चैतन्य मंडल का द्वारा है, देखती चलूँ, और सेत पदम यानी सत्तलोक में पहुँच कर सत्तपुरुष पर तन-मन वारूँ यानी इन दोनों से न्यारी होकर पहुँचूँ।

वृन्दावन मथरा पद लीना। गोकुल जीत कालिन्द्री छीना ॥३॥

अर्थ

बृन्दाबन यानी देह को जो बिन्द से बनी है, मथ कर, रकार पद यानी सुन्न में पहुँची और गोकुल यानी इन्द्रियों के देश से न्यारी हुई, और काल की शक्ति छीन हुई, यानी जाती रही।

सुन्न महावन गिरवर चीन्हा। महासुन्न जा अमृत पीना ॥४॥

अर्थ

सुन्न मंडल की, जो कि महावन है और वही ऊँचा देश यानी पहाड़ है, पहिचान करी और वहाँ से आगे महासुन्न पहुँच कर अमृत पान किया।

धीरज थाल प्रेम की जोती। धुन विवेक घट मोती पोती ॥५॥

अर्थ

धीरज का थाल लेकर, यानी चित्त में धीरज धर कर और प्रेम की जोति जगा कर, यानी प्रेम तेज़ कर के, मोती रूप धुनों को घट में छाँट कर पोती हुई यानी सुनती हुई चली।

विरह राग तज रंग लगाऊँ। सुरत निरत ले शब्द समाऊँ ॥६॥

अर्थ

संसारी भोगों को विरह छोड़ कर प्रेम बढ़ाऊँ, और सुरत और निरत को जगा कर और संग लेकर शब्द में लगूँ।

रास मँडल घट लीला ठानी । काली नाथ निरख नभ जानी ॥७॥

अर्थ

यानी घट में रास मंडल की लीला करके और काल अंग को नीचे डाल कर सुरत रास्ते की सैर करती हुई आकाश में पहुँची ।

घोर उठा अब गगन कुंज में । मगन हुई लख तेज पुंज में ॥८॥

अर्थ

आकाश में चढ़ कर आवाज़ गगन मंडल की, सुनाई दी, और वहाँ पहुँच कर त्रिकुटी में जो स्वरूप है, उसका दर्शन करके खुश हुई ।

मद और मोह हने और सूदे । मोहन मुरली बजी मन बोधे ॥९॥

अर्थ

और मद और मोह दूर हुए और निहायत रसीली बाँसुरी की आवाज़ सुन कर मन को नया बोध हुआ ।

गोपी धुन और शब्द ग्वाल मिल । सुरत गूजरी आई चल चल ॥१०॥

अर्थ

शब्द की धुनें और शब्द सुनती हुई जो कि गोपी और ग्वाल हैं, सुरत गूजरी, यानी इन्द्रियों को जलाने वाली, ऊपर को चढ़ती चली जाती है ।

खेलत कूदत शोर मचावत । दधि अकाश सब मथ मथ लावत ॥११॥

अर्थ

गोपी और ग्वाल यानी मन-इन्द्रिय वग़ैरा बिलास और शोर करते हुए और आकाश में से दधि यानी चैतन्य को समेटते और छाँटते हुए मगन हो रहे हैं ।

पी पी चहुँ दिश होत पुकारा । सुन २ राधा मगन बिहारा ॥१२॥

अर्थ

और सब चारों तरफ़ से अपने प्रीतम शब्द गुरू को पुकारते हैं और राधा यानी सुरत चलने वाली इस बिलास को देख कर मगन होती है ।

स्वामी २ धुन अब जागी । उमंग हिये में छिन २ लागी ॥१३॥

अर्थ

फिर स्वामी नाम की धुन सुनती हुई नवीन उमंग हिरदे में बढ़ती जाती है ।

जगत बासना सब हम त्यागी । मन हुआ मेरा सहज बैरागी ॥१४॥

अर्थ

यह कैफ़ियत देख कर जगत की चाह और बासना बिलकुल छोड़ दी और मन सहज में बैरागी यानी उदासीन हो गया ।

कृपा करो अब राधास्वामी । करत रहूँ तुम चरन नमामी ॥१५॥

अर्थ

हे राधास्वामी दयाल ऐसी ही कृपा मेरे ऊपर जारी रक्खो, और मैं तुम्हारी बंदना करती रहूँ ।

मन को फेरो दीन दयाला । छिन २ निरखूं दर्श विशाला ॥१६॥

अर्थ

और मेरे मन को इस तौर से फेर दीजिये कि छिन २ आपका दर्शन करती रहूँ ।

अब तो लिये जात मोहिं खींचे । मानत नाहिं डार मोहिं भींचे.॥१७॥

अर्थ

इस वक़्त तो मुझको अपनी तरफ़ खींचे लिये जाता है, और कहना नहीं मानता और मुझको तंग कर रहा है ।

भक्ति पौद जो तुमहिं लगाई । मेहर दया से सींचो आई ॥१८॥

अर्थ

भक्ति की पौद जो आपने लगाई है, उसको आप ही अपनी मेहर और दया से सींचो, यानी बढ़ाओ और तरक़्क़ी दो ।

मेरा बस मन से नहिं चाले । बहुत लगाये इन जंजाले ॥१९॥

अर्थ

क्योंकि मेरा मन मेरे क़ाबू में नहीं है, और बहुत संसारी जाल इसने फैला रक्खा है।

पर तुम समरथ पुरुष अपारा। काटोगे हम निश्चय धारा ॥२०॥

अर्थ

लेकिन आप सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल समर्थ हो, और मुझ को यक़ीन है कि आप दया करके इस जंजाल को काटोगे।

अब आरत सब विधि हुई पूरी। राधास्वामी रहूँ हुज़ूरी ॥२१॥

अर्थ

अब यह आरती सम्पूर्ण हुई और मेरी अर्ज़ और माँग यही है कि राधास्वामी दयाल के सदा सन्मुख रहूँ।

अर्थ शब्द नम्बर १६, बचन ४१, पोथी सारबचन राधास्वामी छंद बंद (दूसरा भाग)

सुर्त बन्नी गुरु पाया बन्ना। देख दरश छिन २ मन भिन्ना ॥१॥

अर्थ

प्रेमी सुरत को जब सतगुरु प्रीतम मिले, तब उनका दर्शन करके मन छिन छिन मगन हुआ।

तुरिया घोड़ी सहज सिंगारी । धीरज पाखर ता पर डारी ॥२॥

अर्थ

तुरिया यानी चैतन्य आत्मा की धार को घोड़ी बना कर, उस पर धीरज की पाखर डारी, यानी धीरज के साथ उस पर सतगुरु सवार हुए ।

चाँद सूरज दोउ करी रकाबें । गगन ज़ीन ता पीठ धरावें ॥३॥

अर्थ

चाँद सूरज यानी इड़ा और पिंगला की रकाबें बनाईं और गगन यानी चैतन्य आकाश रूपी ज़ीन उस पर धरी ।

बिजली पवन चाल चली घोड़ी । फेर लगाम एड़ दे मोड़ी ॥४॥

अर्थ

इस तरह सतगुरु उस तुरिया की घोड़ी यानी चैतन्य धार पर सवार होकर, बिजली और पवन की चाल के मुवाफ़िक़ चले, और लगाम यानी मुख उस धार का, घर की तरफ़ मोड़ कर, ऊपर चढ़ने के वास्ते ज़ोर दिया, यानी एड़ लगाई ।

हीरे लाल झालरें मोती । माणिक पन्ना वारूँ जोती ॥५॥

अर्थ

ऐसे सतगुरु के ऊपर हीरे, लाल आर मोती का

झालरें और माणिक, पन्ना और जोत स्वरूप को (जो कि मुराद शब्दों की धुन और स्थानों के स्वरूप से है) वार दूँ। असल में जैसे कि सुरत चढ़ती जाती है, सब रास्ते के स्थान और वहाँ की रचना सब सतगुरु पर अपने आपे को वारते हैं, यानी नीचे पड़ते चले जाते हैं।

ता पर बन्ना करी असवारी। बिजली चाल पवन धधकारी ॥६॥

अर्थ

ऐसी चैतन्य धार की घोड़ी पर सतगुरु बन्ने सवार हुए, और वह धार बिजली और पवन की चाल और ज़ोर-शोर के साथ चली और चढ़ी।

चल बरात पहुँची गगना पुर। बन्नी बन्ना मिले शिष्य गुरु ॥७॥

अर्थ

चलते २ सतगुरु और प्रेमी सुरत और बरात, यानी और सतसंगी और सतसंगियों की सुरतें, त्रिकुटी में पहुँचीं और वहाँ सतगुरु और सेवक का मेल हुआ।

ब्याह हुआ और फेरे डाले। बन्नी ले बन्ना घर चाले ॥८॥

अर्थ

और प्रेमी सुरत सतगुरु की परिक्रमा करके, उनके साथ घर को चली।

घर में धसे मात पितु हरषे । प्रेम मगन मानो बादल बरसे ॥९॥

अर्थ

जब सत्तलोक में पहुँचे तब सत्तपुरुष (जो कि कुल्ल रचना के माता-पिता हैं) देख कर मगन हुए। जैसे कि बादल की वर्षा होती है, इसी तरह प्रेम और आनंद की वर्षा होने लगी।

मोती हीरे लाल जवाहर । बुआ बहन मिल किये निछावर ॥१०॥

अर्थ

मोती, हीरे, लाल और जवाहर, बुआ और बहन यानी हंस और हंसनियों ने न्यौछावर किये, यानी सत्त शब्द की धुनों की, जो कि हर एक हीरा, मोती और लाल रूप है, सतगुरु और प्रेमी सुरत पर वर्षा होने लगी।

करें आरत हँस बन्ना बन्नी । हंस पुकारें धन्ना धन्नी ॥११॥

अर्थ

फिर सतगुरु और प्रेमी सुरत ने, मगन हो कर, उमंग सहित, सत्त पुरुष राधास्वामी दयाल की आरत उतारी, और चारों तरफ़ से हंस धन्य २ पुकारने लगे।

राधास्वामी रलियाँ मन्नी । मगन हुए भइया और बहनी ॥१२॥

अर्थ

यह कैफ़ियत देख कर राधास्वामी दयाल मगन और प्रसन्न हुए और हंस हंसनी भी उस बिलास में शामिल होकर आनंद को प्राप्त हुए।

—

बचन ३४

कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल की महिमा और भेद सुन कर (हर एक जीव को जो उनके बाल-बच्चे हैं) शौक़ मिलने का, बिछुड़े हुए बालक के मुवाफ़िक़ पैदा करके, और सतगुरु से चलने की जुगत दरियाफ़्त करके, दिन २ विरह और प्रेम अंग के साथ रास्ता तै करना चाहिए।

१—जब कि सतसंग में निर्णय सुन कर जीव को अच्छी तरह इस बात की समझ और प्रतीत आ गई कि राधास्वामी दयाल कुल्ल मालिक और सर्व समर्थ हैं, तब उसके हिरदे में प्रीत उनके चरनों की, और अभिलाषा उनके दर्शनों की, ज़रूर जागनी चाहिए और यही प्रीत

सतगुरु से उपदेश हासिल करके थोड़ी-बहुत करनी यानी अभ्यास ज़रूर करावेगी।

२—वह निर्णय कि जिससे राधास्वामी दयाल के कुल्ल मालिक और सर्व-समर्थ होने का निश्चय दिल में पैदा होवे, खुलासा तौर पर यह है कि कुल्ल रचना जो नज़र आती है, उसको ग़ौर के साथ मुलाहिज़ा करने से, कुल्ल कर्त्ता का इरादा और मतलब और कारीगरी और क़ायदे के साथ बन्दोबस्त जारी रहने कार्रवाई कुल्ल रचना का, साफ़ २ पाया जाता है और यह बातें वास्ते सबूत मौजूद और हस्ती ऐसे मालिक और कर्त्ता की, जो कि सर्व-समर्थ और आगे-पीछे के हाल का जानने वाला है, काफ़ी है।

३—सिवाय इसके, रचना के हाल और कैफ़ियत को देख कर यह भी बात पाई जाती है कि चैतन्य में ब-सबब मिलौनी और हायल होने पर्दे माया के, कितने ही दरजे हो गये, यानी जहाँ माया मलीन और कसीफ़ है, वहाँ का चैतन्य ज़्यादातर पर्दा यानी आवरण से ढका हुआ और इस वास्ते उसकी ताक़त का ज़हूर कम है, और जिस क़दर कि ऊँचे देश में माया सूक्ष्म और लतीफ़ होती गई है, उसी क़दर वहाँ के चैतन्य पर पर्दा ख़फ़ीफ़, और इस वास्ते उसकी ताक़त का ज़हूर ज़्यादा है, यानी नीचे दरजे के चैतन्य की कार्रवाई (रचना करने और उसके सम्हाल की)

ऊँचे देश के चैतन्य के आसरे है। यानी जब तक कि किरनियाँ या धारा ऊँचे देश के चैतन्य से आकर मदद न करें, तब तक नीचे के देश का चैतन्य कुछ कार्रवाई नहीं कर सकता। इस वास्ते विशेष से विशेष चैतन्य के दरजे तै करके, जो अख़ीर में महा विशेष चैतन्य है, उसी के आसरे कुल्ल रचना प्रकट हुई, और वहीं से कुल्ल की सम्हाल हो रही है, और वह पद आप निराधार है यानी किसी दूसरे के आसरे नहीं है, और अनन्त है और अपार है। उसी का नाम कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल है।

४—जब ऊपर की समझौती से चित्त में निश्चय हो गया कि कुल्ल मालिक, राधास्वामी दयाल हैं, और उन्हीं के देश में परम आनन्द और अमर सुख प्राप्त हो सकता है, क्योंकि वहाँ माया नहीं है और इसी सबब से आवरण यानी देही और उसका जनम-मरन यानी प्रकट और गुप्त होना भी नहीं है, और न किसी क़िस्म का कष्ट और कलेश और माया देश का सा दुख-सुख है, तब इस बात की चाह और अभिलाषा मन में उठनी चाहिए कि जैसे बने तैसे राधास्वामी धाम में पहुँच कर, पूर्ण आनन्द को प्राप्त होवें। और यह बात बग़ैर सतगुरु की मदद और दया के हासिल नहीं हो सकती। इस वास्ते लाज़िम आया कि पहले सतगुरु का खोज किया जावे, और जब वे मिल जावें तो उनके चरनों में प्रेम-प्रीत करे और उनका सतसंग

होशियारी के साथ करके, अपने भरम और संदेह दूर करावे, और फिर रास्ते का भेद और सुरत-शब्द मार्ग का उपदेश लेकर, राधास्वामी दयाल की दया के आसरे अभ्यास शुरू करे, तो जिस क़दर अभ्यास दुरुस्ती से बनेगा और बढ़ता जावेगा, उसी क़दर रस और आनन्द अंतर में मिलता जावेगा, और संसार और उसके पदार्थों की तरफ़ से दिन २ चित्त हटता जावेगा। और जिस क़दर सतगुरु राधास्वामी दयाल की दया और रक्षा के परचे, अंतर और बाहर मिलते जावेंगे, उसी क़दर प्रतीत मज़बूत होती जावेगी और प्रीत बढ़ती जावेगी।

५—ऐसी प्रतीत और प्रीत के पैदा होने में मन और इच्छा, संसार के भोग और बिलास की तरंगें उठा कर, जीव के मन में परमार्थी समझ और दर्शन की चाह को ठहरने और बढ़ने नहीं देते। इस सबब से, अभ्यास में भी अकसर गुनावन पैदा करके, स्वरूप और शब्द का रस जैसा चाहिये, नहीं लेने देते हैं, और प्रतीत और प्रीत को अनेक तरह के भरम उठा कर पकने नहीं देते। इस सबब से जीव अकसर दुखी रहता है।

६—जो कि राधास्वामी दयाल, कुल्ल मालिक और सर्व समर्थ हैं, और वेही कुल्ल जीवों के सच्चे माता और पिता हैं, और जब कि अभ्यासी जीव को उनकी मेहर और

दया और रक्षा के परचे अंतर और बाहर मिलने लगे, तो सच्चे प्रेमी के मन में ऐसा शौक़ उनके मिलने का पैदा होना चाहिये, जैसे कि बिछुड़े हुए बालक को अपने माँ-बाप से मिलने का, और स्त्री को अपने बिछुड़े हुए पुरुष से मिलने का। यह दोनों, यानी बालक और स्त्री, अपने २ प्रीतम से बिछुड़ी हुई हालत में निहायत दुखी रहते हैं, यानी उनके मन को सच्चा चैन और पूरा आराम नहीं मिलता। ऐसे ही, सच्चा प्रेमी इस संसार को विदेश समझ कर, अपने निज देश यानी सच्चे माता-पिता कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के धाम में पहुँचने की अभिलाषा रखता है, और इस लोक में चाहे जैसे भोग और माया के पदार्थ उसको प्राप्त हो जावें, पर पूरी शान्ति नहीं आती, और मन में बेकली और घबराइट अपने प्यारे पिता राधास्वामी दयाल से मिलने की, बनी रहती है। ऐसे प्रेमी के अभ्यास में मन और इच्छा बहुत कम विघ्न डालते हैं।

७–सच तो यह है कि हर एक परमार्थी के मन में जो राधास्वामी दयाल की सरन में आया, थोड़ी-बहुत बेकली और घबराहट अपने निज घर में जाने के वास्ते ज़रूर रहना चाहिये, क्योंकि बग़ैर ऐसी विरह के, रास्ते का तै होना, और मन और माया के विघ्नों को राधास्वामी दयाल की मेहर के बल से जीतना, और दूर करना दुरुस्ती से, मुमकिन नहीं है।

शब्द भेद ले सुरत लगाऊँ ॥
सुन सुन धुन अब अधर चढ़ी ॥ ५ ॥

दरस दिखाय किया गुरु प्यारा ॥
तन मन तज हुई आज छड़ी ॥ ६ ॥

राधास्वामी सतगुरु दीन दयाला ॥
अब मोपै पूरन दया करी ॥ ७ ॥

———

शब्द

गुरु प्यारे नजर करो मेहर भरी ॥टेक॥

मैं हुई दासी तुम्हरे चरन की ॥
सब तज तुम्हरे द्वारे पड़ी ॥ १ ॥

तुम्हरे चरन की ओट गही अब ॥
काल कर्म से नाहिं डरी ॥ २ ॥

जबसे तुम्हरी सरना लीनी ॥
माया ममता सकल जरी ॥ ३ ॥

प्रीत प्रतीत बढ़त गुरु चरनन ॥
[illegible] से छिन छिन [illegible]

बचन मुतफ़र्रिक पिछले महात्माओं के

(१)

बड़ी भारी अभागता क्या है ? मन का मुर्दा होना। और मन का मुर्दा होना क्या है ? मालिक को भूलना और दुनिया को चाहना।

(२)

लोग कहते हैं कि हम मालिक को पूजते हैं, और हक़ीक़त में वे अपने मन के पुजारी हैं, और कहते हैं कि मालिक हमारा सहाई है, और इससे और उससे मदद चाहते हैं और किसी का शुकर और किसी की शिकायत करते हैं।

(३)

दुनिया से होशियार और बचते रहो कि इसने विद्यावान और बुद्धिवान और धनवानों को अपना गुलाम बना रक्खा है।

(४)

तीन मर्द भक्त, एक औरत भक्त के पास गये और सच्ची भक्ति का ज़िक्र करने लगे। एक भक्त ने कहा कि उसकी भक्ति पूरी और सच्ची है, जो उस तकलीफ़ में कि

उसका मालिक भेजे, सबर करे। स्त्री ने कहा कि इस बचन से अहंकार की बू आती है। दूसरे भक्त ने कहा कि जो तकलीफ़ में मालिक का शुकर करे, उसकी भक्ति पूरी और सच्ची है। स्त्री ने कहा कि कुछ इससे बढ़कर कहो। तीसरा भक्त बोला कि जो अपने प्यारे की भेजी हुई तकलीफ़ में रस पावे, उसकी पूरी और सच्ची भक्ति है। तब फिर स्त्री भक्त ने कहा कि इससे भी बढ़कर कहो। तब तीनों भक्त बोले कि अब आप ही कहो। तब वह बोली कि मैं उसकी भक्ति पूरी और सच्ची जानती हूँ जो कि तक़लीफ को, अपने प्यारे के ध्यान और दर्शन में, इस क़दर भूल जावे कि उसको उस तकलीफ़ की ख़बर भी न होवे।

(५)

जिस पर मालिक मेहरबान होता है तो उसका दिल अकसर ग़मगीन और उदास रखता है, और जिस पर उसकी नज़र मेहर की नहीं है, उसको दुनिया का सामान और ऐश और आराम ज़्यादा देता है।

(६)

दुनिया से प्रीत लगानी तो आसान है, पर उससे अलेहदा होना और छूटना निहायत मुश्किल है। जिस किसी को, जिस क़दर दुनिया के ऐश और आराम का सामान दिया गया है, उसके एवज़ में उससे सौ गुना परमार्थ घटा दिया गया है। अगर दुनिया सोने की होती

और परमार्थ मिट्टी का, तो भी चाहिये था कि लोग परमार्थ ही को क़बूल करते, मगर अफ़सोस है कि परमार्थ सोना और हीरा है, और दुनिया ख़ाक है, और फिर लोग ख़ाक को ही चाहते हैं।

(७)

जिसका मन इन तीनों कामों से बिल्कुल संग न देवे, तो जानना चाहिये कि अभी उस पर मालिक की दया नहीं आई—एक, मालिक के बचनों के पाठ और सतसंग के वक़्त, दूसरे, मालिक के नाम के सुमिरन और भजन के वक़्त, और तीसरे, मालिक के स्वरूप के ध्यान के वक़्त।

(८)

भक्ति में तीन परदे हैं। इन तीनों को मन से हटाना चाहिये, तब परमार्थ और भजन का पूरा रस आवेगा और मालिक का दर्शन पावेगा। पहिला, यह कि इस लोक और परलोक का राज और भोग उसको दिये जावें और वह उसको पाकर मगन न होवे, क्योंकि जो मगन हो गया तो लालची है, और लोभी को दर्शन नहीं मिलेगा। दूसरा परदा यह है, कि जो इस लोक और परलोक का राज और भोग उसको हासिल है और वह उससे छीन लिया जावे, तो दुखी न होवे और अफ़सोस न करे, क्योंकि जो अफ़सोस किया तो झूठा है और झूठा, परमार्थ के क़ाबिल नहीं है। तीसरा परदा यह है, कि चाहे जिस क़दर कोई स्तुति

और आदर करे, उस पर अपने मन में ख़ुश न होवे और ग़ाफ़िल न हो जावे, क्योंकि जो ऐसा है तो ओछा पात्र है, और अभी ऊँचे देश और गहरे रस के क़ाबिल नहीं है।

(९)

शाह इबराहीम ने (जो बलख़ देश की बादशाही को छोड़ कर फ़क़ीर हुआ) कहा है कि एक वक़्त मैंने एक ग़ुलाम ख़रीद किया, और उससे पूछा कि तेरा नाम क्या है ? उसने जवाब दिया कि जिस नाम से आप पुकारें। फिर मैंने पूछा कि क्या खायगा ? उसने जवाब दिया जो आप खिलावेंगे। फिर मैंने कहा, क्या पहिनेगा ? वह बोला जो आप पहिनावेंगे। फिर मैंने कहा, क्या काम करेगा ? बोला जो आप हुक्म करेंगे। फिर मैंने कहा, क्या चाहता है ? तो ज़वाब दिया कि बंदे को अपनी चाह नहीं उठानी चाहिये, जो मालिक की मरज़ी और चाह है, वही उसकी चाह होनी चाहिये। फिर मैंने अपने दिल में सोचा कि तू भी इसी तरह से मालिक का बंदा है, और इस क़दर उम्र तेरी गुज़र गई, और अब तक चरन-सरन और भक्ति की रीत न जानी। यह ख़्याल करके मैं बहुत रोया।

(१०)

किसी ने शाह इबराहीम से पूछा कि किस तरह गुज़रान करते हो, ? जवाब दिया, मैंने चार दस्तूर मुक़र्रर किये हैं। पहला, जब कोई ख़ास दया होती है तब शुकर करके

चरनों की तरफ़ दौड़ता हूँ। दूसरे, जब कोई क़सूर बन पड़ता है, तब पछताता हूँ और अंतर में प्रार्थना करता हूँ। तीसरे, जब कभी तकलीफ़ आती है, तब सब्र और बर-दाश्त के साथ उसकी अगवानी करता हूँ। चौथे, जब भजन और सेवा दुरुस्त बन आती है, तब प्रेम के साथ क़दम आगे रखता हूँ।

(११)

जो कोई अपने गुरु की आज्ञा में न बरतेगा, वह कभी सेवक नहीं बनेगा, और जो गुरु से डरता है और गुरु ही की तरफ़ दौड़ता है, उसी का एक दिन सच्चा उद्धार होवेगा।

(१२)

मालिक कहता है कि जो तू मुझ से मिलना चाहता है, तो वह चीज़ भेंट लेकर आ जो मेरे पास नहीं है। और वह चीज़ सच्ची दीनता है।

(१३)

दो बातें याद रखनी चाहिये-एक यह कि मालिक तेरा अंतरयामी है, दूसरे यह कि जो कुछ तू करता है, वह उसको देखता है।

(१४)

एक सेवक ने अपने गुरू से पूछा कि सेवा और भजन में बराबर रस क्यों नहीं मिलता है? जवाब दिया

कि जो बराबर रस हर रोज़ मिलता रहेगा तो विरह और तड़प नहीं उठेगी, और इस सबब से तरक़्क़ी बंद होजावेगी।

(१५)

जो मालिक के प्यारे हैं, उनमें तीन सिफ़तें ज़रूर होंगी—उदारता, दया और ख़ातिरदारी सच्चे परमार्थी की।

(१६)

अच्छे लोगों की संगत अच्छे काम करने से बेहतर है, और बुरे लोगों की संगत बुरे काम करने से बदतर है।

(१७)

जो कोई तुझ को कुछ देवे तो पहले मालिक का शुकर कर, और उसके पीछे उस शख़्स का शुकर कर, जिसके दिल को मालिक ने प्रेर कर तुझ पर मेहरबान किया। और जो कोई मुसीबत तुझ पर आवे, तो दीनता के साथ मालिक की प्रार्थना कर, क्योंकि जो तू सब्र और बरदाश्त नहीं कर सकता है, तो मालिक तुझ पर दया करेगा। और प्रार्थना फ़ौरन कर, क्योंकि जो पछता कर प्रार्थना करता है, वह नादान है।

(१८)

असल बंदगी और भजन यह है कि सच्चा ख़ौफ़ और सच्चा भरोसा और विश्वास और सच्ची प्रीत मालिक के चरनों में होवे। निशान ख़ौफ़ का यह है कि पाप-कर्म

छोड़ देवे, और निशानी सच्चे भरोसे और विश्वास की यह है कि हमेशा मालिक का भजन और याद करता रहे, और निशान प्रीत का यह है कि शौक़ दर्शन का दिन २ बढ़ता रहे।

(१९)

जो कोई ख़ूब पेट भर कर खाता है, उसमें यह पाँच इल्लतें पैदा होती हैं—एक, यह कि भजन में उसको रस नहीं मिलता। दूसरे, उसकी तन्दुरुस्ती में फ़र्क़ आता है। तीसरे, दयावंत कम होता है। चौथे, मालिक की सेवा और भजन उसको भारी पड़ता है। पाँचवे, मन उसका ज़बर हो जाता है।

(२०)

तीन वक़्त अपने मन को होशियार रक्खो—एक करतूत के वक़्त याद रक्खो कि मालिक तुझको देखता है। और जब बात करो तो याद रक्खो कि जो कुछ कि तू कह रहा है, मालिक सुनता है। और जब चुप हो तो याद रक्खो कि मालिक जानता है कि तू किस वास्ते चुप हुआ है।

(२१)

जो मन कि विद्या और बुद्धि और चतुराई से भरा हुआ है, वह सब के मनों से ज़्यादा सख़्त हो जाता है और

ऐसे कठोर मन की पहिचान यह है कि हमेशा नाक़िस तदबीरों और बहाने बाज़ियों में बँधा रहता है और अपनी समझ और तदबीर के आगे गुरू या मालिक के हुक्म को क़बूल नहीं करता।

(२२)

परमार्थी को इन तीन बातों का लिहाज़ रखना चाहिये–एक, यह कि जो किसी को फ़ायदा न पहुँचा सके तो नुक़सान भी न पहुँचावे। दूसरे, जो किसी को खुश नहीं कर सके, तो नाखुश और दुखी भी न करे। तीसरे, अगर किसी की तारीफ़ करना नहीं चाहे तो बुराई भी न करे।

(२३)

परमार्थी को इन दस नाक़िस बातों से परहेज़ करना गोया काल के जाल से बचना है–(१) सूमता, (२) अहंकार (३) मान, (४) ईर्षा, (५) छल और कपट, (६) क्रोध, (७) हिर्स और तृष्णा खान-पान में, (८) बे-मौक़े और बे-फ़ायदे बोलना, (९) चाह और प्रीत धन और माल की, (१०) चाह और प्रीत मान-बड़ाई और मर्तबा और हुकूमत की। और इन दस भली बातों को इख़्तियार करना गोया मालिक को प्रसन्न करना है। (१) पछताना और प्रार्थना करना अपने क़सूरों पर, (२) सब्र और धीरज, (३) जैसे बने तैसे मालिक की मौज पर राज़ी होना,

(४) शुकराना मालिक की दात और दया का, (५) ख़ौफ़ मालिक की नाराज़गी का, (६) भरोसा मालिक की दया और बख़्शायश का, (७) बैराग चित्त में रखना, (८) सेवा और भजन मालिक का करना, (९) सब के साथ मित्र-भाव से बरतना, (१०) बढ़ाना प्रेम का सतगुरु और मालिक के चरनों में।

(२४)

इन पाँच बातों को याद रखना ज़रूर चाहिए। एक, किसी की पीठ पीछे बुराई न करना। दूसरे, किसी के भेद या गुप्त बात को प्रकट न करना। तीसरे, झूठ बात न बोलना। चौथे, सतगुरु की आज्ञा में बर्तना। पाँचवें, चोरी न करना अंतर या बाहर।

(२५)

शैतान हज़रत मूसा की ख़िदमत में हाज़िर हुआ और कहने लगा कि मैं आपको तीन बातें सिखाता हूँ ताकि मालिक से आप मेरे हक़ में दुआ-ए-नेक माँगें। उन्होंने पूछा कि वे तीन बातें क्या हैं ? कहा कि क्रोध और तुनक मिज़ाज से परहेज कीजिए क्योंकि जो कोई तेज़-मिज़ाज और हलका होता है, यानी जल्द भड़क उठता है, उससे मैं ऐसे खेलता हूँ जैसे लड़के गेंद से, कि जिधर चाहा गेंद को फेंक दिया। दूसरे, औरतों से बचे रहिए, क्योंकि संसार में मैंने जितने जाल और फंदे बिछाये हैं, उन सब से ज़्यादा मज़बूत और भारी फंदा औरत का है, और

मुझे इस फंदे का पूरा एतबार है। तीसरे, कँजूसी से बचिये क्योंकि जो कंजूस होता है उसका मैं संसार और परमार्थ दोनों मलियामेट कर देता हूँ।

(२६)

जिस में यह तीन बातें यानी संतोष और मालिक का ख़ौफ़ और दर्शन की विरह और बेकली नहीं है, उसका उद्धार मुश्किल है।

(२७)

किसी अभ्यासी से पूछा कि तुम शादी क्यों नहीं करते। कहा कि दो भूतों से लड़ने की मुझमें ताक़त नहीं है। एक तो मेरा मन भूत है, दूसरे, उसका मन होगा। मैं अकेला दो भूतों से किस तरह लड़ सकूँगा।

(२८)

तीन काम न करने चाहिए, चाहे उनमें किसी क़दर लोगों का ज़ाहिरी उपकार भी हो–(१) राजों और अमीरों का संग, (२) किसी स्त्री के साथ अकेले उठना-बैठना, चाहे वह परमार्थी होवे, और तू उसे परमार्थ ही सिखाता होवे, (३) कानों का कच्चा होना कि इसमें बहुत हर्ज और नुक़सान पैदा होते हैं।

(२९)

थोड़ा सा हाल मनमुख और गुरुमुख की चाल का लिखा जाता है, जिससे अपनी हालत की परख होती रहे–

(१) गुरुमुख का मतलब, कुल परमार्थी करतूत से यह रहता है कि मालिक और सतगुरु प्रसन्न होवें। मनमुख, सब कामों में अपने मन और इन्द्रियों का बिलास और प्रसन्नता देखता है।

(२) गुरुमुख, भूख-प्यास को सहता है ताकि उसका भजन बंदगी अच्छी तरह बने। मनमुख, जानवरों की तरह खाने-पीने में मगन होता है, और परमार्थी करतूत में मन नहीं लगाता, और आलस करता है।

(३) गुरुमुख, हमेशा विचार में रहता है और डरता है। मनमुख, तृष्णा और चाह दिन-दिन बढ़ाता है और बे-फ़िक्र और निडर रहता है।

(४) गुरुमुख, सतगुरु के सिवाय सब से बे-ख़ौफ़ रहता है। मनमुख, सतगुरु के सिवाय सबसे डरता है।

(५) गुरुमुख, सतगुरु के सिवाय सबसे निरास रहता है। मनमुख, सतगुरु के सिवाय सबसे आस रखता है।

(६) गुरुमुख, धन को परमार्थ पर नौछावर करता है, मनमुख, परमार्थ को धन पर नौछावर करता है, यानी धन के लिये अपने परमार्थी नुक़सान का ख़्याल नहीं करता है।

(७) गुरुमुख, भजन और बन्दगी करता है और रोता है। मनमुख, गुनाह करता है और हँसता है।

(८) गुरुमुख, तनहाई और एकान्त को पसंद करता है। मनमुख, भीड़-भाड़ और शोर-ओ-गुल से राज़ी होता है

(९) गुरुमुख, जोतता और बोता है, पर डरता है कि शायद खेत न काटने पाऊँ। मनमुख, न जोतता है और न बोता है, पर आस बाँधता है कि काट कर खलियान लगाऊँ।

(१०) गुरुमुख, शरमीला और हयादार होता है। मनमुख, ढीठ, निलज्ज और बेहया होता है।

(११) गुरुमुख, कम-गो,-कम-रंज और सच्चा है। मनमुख, बकवादी, ज़ूद-रंज और झूठा है।

(१२) गुरुमुख, सब काम सलाह और धीरज के साथ करता है मनमुख, सब काम बे सोचे-समझे और घबराहट के साथ पूरा करना चाहता है।

(१३) गुरुमुख, भजन और ध्यान में लौलीन रहता है। मनमुख, ऐंड़ने और सोने में मगन रहता है और बे-फ़ायदे वक़्त खोता है।

(१४) गुरुमुख, सबका हितकारी है। मनमुख, खुद-मतलबी है।

(१५) गुरुमुख की बड़ाई सबके मन में समा जाती है। मनमुख, सब के मनों से गिर जाता है।

(१६) गुरुमुख, जो मालिक ने दिया है, उसमें सब्र करता है और शुकर करता है। मनमुख, बे-सब्र और ना-शुकरा है।

(१७) गुरुमुख का दिल, फूल से ज़्यादा कोमल होता है। मनमुख का दिल, पत्थर से ज़्यादा सख़्त होता है।

(१८) गुरुमुख, किसी बात की तमा नहीं रखता, क्योंकि वह कहता है कि मालिक ने मेरे लायक़ मुझे बहुत दे रक्खा है और उसी में राज़ी रहता है। मनमुख, लालची है। उसकी तृष्णा कभी नहीं बुझती, चाहे जितना उसको मिल जावे। इस सबब से वह हमेशा दुखी और नाराज़ रहता है।

(१९) गुरुमुख, कभी गाली या बुरा लफ़्ज़ मुँह से से नहीं निकालता है। मनमुख, अक्सर गाली के साथ बोलता है, और बुरा लफ़्ज़ निकालते उसे शरम नहीं आती।

(२०) गुरुमुख, सतगुरु की याद और दर्शन में मगन रहता है। मनमुख, दर्शनों में रूखा-सूखा और फीका रहता है।

(२१) गुरुमुख की बोली, मीठी है, क्योंकि वह हमेशा अमृत-रूपी बचन सतगुरु की महिमा और उनके गुणानुवाद में पगी रहती है। मनमुख की बोली, कड़वी है क्योंकि वह हमेशा संसार की बुराई और भलाई में सनी रहती है।

(३)

जीव को अपनी कसरों की चार तरह से ख़बर पड़ सकती है। एक तो, गुरू के सतसंग से कि वे दया करके इसकी कसरों को जतावेंगे। दूसरे, हितकारी सतसंगी के

पास बैठने से कि वह प्रीत की रीत से इसकी कसरों को दिखाता और समझाता रहेगा। तीसरे, निंदक और विरोधी के बचन सुनने से, क्योंकि उसकी नज़र हमेशा ऐबों पर पड़ती है, और वह, बग़ैर किसी लिहाज़ के, उनको प्रकट कर देता है। चौथे, और जीवों के हालात को ग़ौर से देखने और सुनने से, और जो कसरें उनमें दीखें, उनको अपने ऊपर घटा कर, उनसे परहेज़ करना।

(३१)

वह बड़ा मूर्ख है जो अपने को उत्तम जानता है, और वह बड़ा अक़्लमंद है जो अपनी कसरें निहारता रहता है, क्योंकि जो अपने तईं रोगी नहीं जानेगा, वह अपना इलाज न कर सकेगा, और यह जीव मन के रोगों में ग्रसा हुआ है, और इस बीमारी का दूर करना ज़रूर है।

(३२)

जो साधू, राजे लोग और बड़े आदमियों के पास जाता है, वह अपने परमार्थ को गँवाता है, क्योंकि उनके ख़ुश करने के वास्ते वह ऐसी बातें और काम करेगा, जिनके सबब से सच्चे मालिक की अप्रसन्नता होगी।

(३३)

किसी ने एक साधू से कहा कि मैं तुम्हारा सतसंग चाहता हूँ। उसने कहा कि दीनता करनी पड़ेगी। फिर कहा कि मैं मालिक को चाहता हूँ। उसने जवाब दिया

कि जो मुसीबत और तकलीफ़ आन कर पड़े, उसको ख़ुशी से झेलना पड़ेगा।

(३४)

सतगुरु अपने सेवक की वक़्त मुसीबत और तकलीफ़ और नुक़सान वग़ैरा के, इस तरह आज़माइश करते हैं, जैसे सुनार सोने को आग से आज़माता है। कोई सोना ख़ालिस निकलता है, और कोई ख़राब यानी मिलौनी का।

(३५)

एक साधू ने एक शख़्स को बीमार देख कर मालिक के चरनों में प्रार्थना की कि हे मालिक इस पर दया कर। मालिक ने फ़रमाया कि इस पर और क्योंकर दया करूँ, मैं तो इसी बीमारी के सबब से इस पर दया कर रहा हूँ क्योंकि उसके कर्म इसी तरह काटने के लायक हैं और उसकी अंतरी तरक़्क़ी इसी बीमारी के सबब से होगी।

(३६)

जो कोई थोड़ा-बहुत रोगी बना रहता है, उस पर परमेश्वर की दया है, क्योंकि इसके सबब से वह बहुत से गुनाहों से बच जाता है। ईश्वर का वचन है कि जो मेरे भक्त हैं, उनको मैं तीन बातें देता हूँ—निर्धनता, बीमारी और निरादर। इसी जुगत से मैं अपने भक्त की रक्षा करता हूँ।

(३७)

एक ने किसी साधू से पूछा कि साधू किसका नाम

है? उसने जवाब दिया कि जिसकी बातों से भजन की कैफ़ियत और प्रेम की हालत दिल में पैदा होवे, और शौक़ बढ़े, और जिसका चुप रहना बिलकुल ध्यान और विचार की हालत है, और देखना बिलकुल बैराग और इबरत और नसीहत लेना।

(३८)

किसी ने एक साधू से पूछा कि ऐसी बात मुझे बताइये कि जिससे मालिक मुझ को दोस्त रक्खे और प्यार करे। कहा कि संसार और मन के संसारी अंगों को दुश्मन, यानी परमार्थ में विघ्नकारक जान, मालिक तुझको दोस्त रक्खेगा, यानी तुझ पर दया करेगा।

(३९)

जिसने इन छः बातों को इख़्तियार किया, वह सतगुरु का प्यारा हुआ और चौरासी के चक्कर से बच कर निज घर में पहुँचने का अधिकारी हुआ—एक, सतगुरु की, जिस क़दर बन सके, पहिचान करना और उनकी आज्ञा में बर्तना। दूसरी, मन को जानना और उसके कहने में न चलना। तीसरी, सत्य वस्तु को पहचानना और उसको जकड़ कर पकड़ना। चौथी, झूठी और असार वस्तु को जानना और उससे हाथ खींचना। पाँचवी, संसार को जाँचना और उसमें होशियारी से बर्तना यानी फँसना नहीं।

छठी, परमार्थ की क़दर जानना और दृढ़ कर पकड़ना यानी उसके मुवाफ़िक़ अपनी करनी और रहना दुरुस्त करना।

(४०)

इस संसार में जो वस्तु कि मालिक ने तुमको दी है, वह पहिले भी किसी को दे चुका होगा और जब तुम नहीं रहोगे, तब भी किसी को देगा। फिर ऐसी ना-पायदार चीज पर, कि जरूर छोड़नी पड़ेगी, दिल नहीं लगाना चाहिये। सुबह-शाम के खाना खाने और तन ढकने के सिवाय, और कुछ तुम्हारा हिस्सा नहीं है। इतने के वास्ते काहे को अपने तईं इस क़दर खपाते हो? सतगुरु के चरनों में पहुँच कर उस चीज़ की प्राप्ति के वास्ते क्यों नहीं कोशिश और मेहनत करते कि जो हमेशा रहे और तुम भी उसका हमेशा आनंद ले सको?

(४१)

मालिक की एक घड़ी की प्रीत और प्रतीत सहित सेवा, सत्तर वर्ष की बे-प्रीत और बे-प्रतीत की सेवा से बेहतर है।

(४२)

परमार्थ तीन बातों में है—खौफ़, उम्मेद और मुहब्बत। खौफ़ क्या है? जो बातें परमार्थ में मनै हैं, उनसे परहेज करना। उम्मेद क्या है? सेवा और भजन, पित्ता मारके करना, जिससे एक दिन अपने निज मुक़ाम

को पा जायेगा। मुहब्बत क्या है ? मालिक की मौज और हुक्म में राज़ी रहना।

(४३)

सवाल–अभ्यासी सेवक कब सच्चे हिरदे से बिनती और प्रार्थना करता है ? और कब सच्चे मन से अंग २ उसका सेवा और भजन में लगता है ? और कब सच्चा होकर मन के विकारों को छोड़ता है ?

जवाब–जिस वक़्त मन उसका सच्चा डरता है और खौफ़ खाता है, या जब उसके मन में गहरा प्रेम पैदा होता है।

(४४)

मालिक ने अपने तईं जीवों से मसलहत समझ कर गुप्त रक्खा है, और जो संत या फ़क़ीर उसके भेदी हैं, वह भी संसार में इसी तरह गुप्त रहते हैं, और जो मौज होवे तो प्रकट होकर उसका भेद कहते हैं।

(४५)

सवाल–परम पद के उपदेश का सच्चा और पूरा अधिकारी कौन है ?

जवाब–परम पद के उपदेश का सच्चा अधिकारी वह है, जिसमें यह तीन बातें पाई जावें–एक, निरलोभी होना यानी जिसके नज़दीक सोना, चाँदी, और मिट्टी बराबर हों। दूसरी, यह कि संसारियों के बचन की क़दर उसके मन से

बिलकुल जाती रही हो, यानी निंदा और स्तुति दोनों उसके नज़दीक समान हों, न स्तुति में खुशी और न निंदा में दुखी। तीसरी, यह कि मन की तरंगों और बिकारों में न बर्तने में ऐसा खुश होता होवे, जैसा कि संसारी उनके बर्तने में मगन होते हैं। वही परम पद के उपदेश का पूरा अधिकारी है।

(४६)

जो कोई मालिक की याद में ऐसा लगा रहता है कि और कामों की उसको सुध नहीं रहती, तो मालिक उसके ज़रूरी कामों की आप सुध लेता है, और उनको दुरुस्त बना देता है, यानी सब तरह से रक्षा और सम्हाल अपने भक्त की, वह आप करता है।

(४७)

मालिक का जलवा और ज़हूर यानी प्रकाश अंतर में प्रकट है, यानी जो करतूत कि हम करते हैं, उसको वह देखता है। पिता के रूबरू लड़का बद-फ़ेली नहीं करता, इस वास्ते हमको भी चाहिये कि अपने सच्चे पिता यानी मालिक के रूबरू, बुरे काम सोचने और करने से डरें।

(४८)

सच्चे और कपटी भगत की क्या पहिचान है ? सच्चा, अंतर और बाहर एकसाँ बर्तता है। उसके किसी काम में दिखावा और नमूद नहीं होती, और कपटी दिखावे और नमूद के काम ज़्यादा करता है, पर उसके अंतर में मालिक

की प्रीत कम होती है, और धन का प्यार उसके दिल में ज़्यादा रहता है। इसी वजह से उसका मन दो-रुखा है, जैसे कि रुपया, कि जिसकी दोनों तरफ़ें एकसाँ नहीं होतीं

(४९)

ख़ास दया मालिक की उस शख़्स पर जाननी चाहिये जिसको वह अपने चरनों का सच्ची प्रतीत बख़्शे। यह प्रतीत ऐसी रोशनी है जो मालिक और जीव के बीच में जितने परदे हैं, सब को दूर कर देती है।

(५०)

मालिक के सच्चे प्रेम और दर्शन के हासिल करने के वास्ते, चार दरियाओं को पार करना चाहिये, तब उसके चरनों में पहुँचना मुमकिन है—एक, संसार और किश्ती उसकी बैराग है। दूसरा, संसारियों का संग, और किश्ती उसकी सतगुरु का संग और संसारियों से जिस क़दर बने, दूर रहना है। तीसरा, मन, और किश्ती उसकी प्रीत-सहित सुमिरन और ध्यान और शब्द का श्रवन है। चौथा, गुनावन और तरंगें, और किश्ती उसकी मालिक के चरनों का प्रेम और चित्त को एकाग्र करके चरनों में लगाना है।

(५१)

मालिक के प्रेमियों का हिरदा मालिक के भेद और प्रेम का एक संदूक़चा है और वह अपना यह अनमोल जवाहिर ऐसे संदूक़चे में नहीं रखता है, जिसमें संसारी चीज़ें

रक्खी हुई हैं, यानी सच्चे मालिक की प्रीत उसी दिल में पैदा होगी, जो दुनिया की ख्वाहिशों से ख़ाली है और वही उसके भेद को जानेगा।

(५२)

जो आँख कि अपने मालिक के नूर और जमाल के देखने में मशग़ूल न हावे, अंधी बेहतर है। और जो ज़बान कि उसके गुणानुवाद के गाने में मगन न होवे, गूँगी भली है। और जो कान कि सतगुरु का बचन और मालिक का अंतरी शब्द श्रवन करने में न लगा रहता हो, बहरा अच्छा है। और जो तन कि उसकी सेवा में न लगे वह नाकारा है।

(५३)

जो वक़्त कि गुज़र जाता है, वह फिर हाथ नहीं आता है। इस वास्ते वक़्त से ज़्यादा कोई क़ीमती चीज़ नहीं है। इसकी क़दर हमेशा चित्त में रखना चाहिये, और उसको बे-फ़ायदा और बुरे कमों में ख़र्च नहीं करना चाहिये। जहाँ तक बने उसको सतगुरु और मालिक की सेवा और बंदगी और याद में ख़र्च करो, ताकि यहाँ और वहाँ दोनों जगह फ़ायदा और सुख हाहिल हो।

(५४)

जो काम कि मालिक के निमित्त किया जाता है, उसमें बंधन नहीं होता है, पर जो कर्म मालिक के निमित्त न होगा, उसमें मन को बंधन ज़रूर होगा। इस वास्ते, फल की आशा छोड़ कर, सब काम मालिक के चरनों में अर्पन

करके यानी मौज के आसरे करना चाहिये, ताकि मन फँसने न पावे, क्योंकि मन के बंधन से दुख-सुख पैदा होता है।

(५५)

जो लोग कहते हैं कि मालिक है और फिर उसकी बंदगी और उसके चरनों में प्रीत नहीं करते, और बानी पढ़ते हैं और फिर उस पर अमल नहीं करते, और मालिक की दात भोगते हैं और फिर उसका शुक्र नहीं करते, और जानते हैं कि भजन करके महा सुख का स्थान प्राप्त होगा और फिर उसकी चाह नहीं उठाते, और समझते हैं कि बिना भजन, नर्क और चौरासी में जावेंगे और फिर उसका ख़ौफ नहीं करते, और जानते हैं कि काल और मन बैरी हैं और फिर उन्हीं के कहने में चलते हैं, और जानते हैं कि मौत सिर पर खड़ी है और फिर उसका सामान नहीं करते, और बहुतेरों को गाड़ दिया और फूंक दिया पर अपने मरने का ख़ौफ़ नहीं करते, और औरों की कसरें देखते हैं और अपनी कसर दूर नहीं करते—ऐसे शख्सों की दुआ और प्रार्थना मालिक किस तरह क़बूल करे ?

(५६)

जो कोई कि बहुत खाना खाता है, या बहुत कम खाता है और वह जो बहुत कम सोता है, या बहुत सोता है, वह कभी परमार्थ दुरुस्ती से नहीं कमा सकता। मगर जो शख़्स खाना खाने और सोने-जागने में ऐतदाल रक्खेगा, वह परमार्थ की कमाई ब-खूबी कर सकेगा।

———